चिंतन

आतंकवाद के खिलाफ आर-पार की लड़ाई हो

भाकश्मीर में आतंकवाद फिर से फन उठा रहा है। घाटी में लगातार आतंकवादी घटनाएं हो रही हैं। अब जम्मू-कश्मीर के डोडा में आतंकवादियों के साथ मुठभेड़ में कैप्टन समेत सेना के चार जवान शहीद हो गए। अभी आठ जुलाई को ही कठुआ में पांच सैन्यकर्मी शहीद हुए थे और पांच जवान घायल हो गए थे। कश्मीर में आतंकवाद की घटनाएं तब बढ़ रही हैं, जब सुरक्षा बल दहशतगर्दी के खिलाफ ऑपरेशन चला रहे हैं। यह चिंता की बात है। हमारे जवान आतंकियों के निशाना बन रहे हैं, स्थिति उलट होनी चाहिए थी। कश्मीर में आतंकवाद के खिलाफ भारत नब्बे के दशक से लड़ रहा है, इसलिए करीब चार दशक में भारतीय सुरक्षा बलों के पास इस क्षेत्र के भूगोल की चप्पे-चप्पे की जानकारी है, इसके बाद भी अगर हमारे सैनिक आतंकियों से मुठभेड़ में शहीद हो रहे हैं, तो ऑपरेशन के स्वरूप की समीक्षा होनी चाहिए और उसमें जरूरत के हिसाब से बदलाव होना चाहिए। मुठभेड़ अंजाम देने से पहले, रेकी की जानी चाहिए, भूगोल की जानकारी जुटानी चाहिए, ड्रोन व लेजर बम जैसी तकनीक का इस्तेमाल होना चाहिए। ऐसा नहीं है कि हमारे सुरक्षा बल इन सभी पहलुओं पर गौर नहीं करते होंगे, बल्कि वे धरातल पर हैं तो अच्छे से चीजों को देखते होंगे, इसके बाद भी जवानों के शहीद हो जाने पर दुख होता है, और लगता है कि ऑपरेशन के अमल में कहीं न कहीं खामी रह गई होगी। इस साल जनवरी से अब तक कई आतंकी घटनाएं जम्मू-कश्मीर में हुई हैं। 15 और 8 जुलाई के अलावा 7 जुलाई को राजौरी जिले में एक सुरक्षा चौकी पर आतंकवादी हमले में एक सैन्यकर्मी घायल हो गया। जून में 26 जून को डोडा जिले में गोलीबारी में तीन विदेशी आतंकवादी मारे गए, 12 जून को डोडा जिले में ही आतंकवादी हमले में एक पुलिसकर्मी घायल हुआ, 11/12 जून को कठुआ जिले में मुठभेड़ में दो विदेशी आतंकवादी मारे गए और केन्द्रीय रिज़र्व पुलिस बल के एक जवान की मौत हो गई। डोडा जिले में आतंकवादी हमले में राष्ट्रीय राइफल्स के पांच जवान और एक विशेष पुलिस अधिकारी घायल हो गए। 9 जून को रियासी जिले में एक बस पर आतंकवादी हमले में नौ तीर्थयात्री मारे गए व 42 घायल हो गए। मई में 4 मई को पुंछ जिले में आतंकवादी हमले में एक वायुसेना कर्मी की मौत हो गई और पांच घायल हो गए। अप्रैल में 28 अप्रैलको उधमपुर जिले में आतंकियों के साथ मुठभेड़ में एक ग्राम रक्षा प्रहरी की मौत हो गई, 22 अप्रैल को राजौरी जिले में आतंकवादियों ने एक सरकारी कर्मचारी की गोली मारकर हत्या कर दी। वर्ष 2023 में भी चार बड़े आतंकी हमले हुए थे। वर्ष 2023 में 43 आतंकी घटनाएं कश्मीर से अलग जम्मू में हुईं। जम्मू क्षेत्र में आतंकी घटनाओं में पिछले 32 महीनों में 48 जवान शहीद हो चुके हैं और 23 आम नागरिक भी आतंकियों की गोली का निशाना बने हैं। सरकार व सुरक्षा बलों को पता है कि कश्मीर में आतंकवाद के पीछे किसका हाथ है। खुद आतंकी घटनाएं झेलने के बावजूद पाकिस्तान कश्मीर में आतंकवाद को शह देने से बाज नहीं आ रहा। सरकार ने सुरक्षा बलों को आतंकवाद से निपटने के लिए खुली छूट जरूर दी है, लेकिन घटनाएं थम नहीं रही हैं, ऐसे में सरकार को आतंकवाद के खिलाफ बड़ा ऑपरेशन करना चाहिए, जिसमें पीओके के आतंकी ठिकाने भी निशाने पर हों। कश्मीर को आतंकवाद मुक्त करना जरूरी है, इसके लिए आर-पार की लड़ाई चाहिए। केवल सरकार के बयानों से बात नहीं बनेगी।

राजनीति में प्रतिस्पर्धी मानें, दुश्मन नहीं

दरकार
अवधेश कुमार

> डोनाल्ड ट्रंप की हत्या की कोशिश हम सबके लिए सबक होना चाहिए। राजनीति और सार्वजनिक जीवन में असहमति और मतभेद होना स्वाभाविक है, किंतु राजनीति और सार्वजनिक जीवन में घृणा और दुश्मनी का कोई स्थान नहीं। हम एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी होंगे, राजनीतिक और वैचारिक विरोधी होंगे, किंतु दुश्मन नहीं जिसके विरुद्ध इतनी घृणा पैदा की जाए कि लोग हिंसा की सीमा तक पहुंच जाए। यह सभी पक्षों पर लागू होता है। हालांकि जैसा वातावरण भारत, अमेरिका सहित कई देशों में बन चुका है उसमें कोई तत्काल इससे सबक लेगा संभावना कम है, क्योंकि वातावरण विषाक्त बन चुका है। यही प्रश्न है कि स्थिति को हम कैसे संभालें।

तेरह जुलाई का दिन अमेरिका ही नहीं विश्व इतिहास के लिए भयावह और सबक लेने वाले दिन के रूप में दर्ज हो गया है। अमेरिका जैसे पुराने लोकतांत्रिक देश में रिपब्लिकन राष्ट्रपति उम्मीदवार डोनाल्ड ट्रंप पर सार्वजनिक सभा में गोली चलाकर हत्या का प्रयास अचंभित करने वाली घटना है। पेनसिल्वेनिया के बटलर में ट्रंप चुनावी रैली कर रहे थे। अचानक गोली आई और ट्रंप के कान को छूते हुए निकल गई। वीडियो में साफ दिख रहा है कि ट्रंप रैली के दौरान भाषण दे रहे थे। उसी बीच गोलियां चलने लगती हैं। ट्रंप कहते हैं- ओह और अपना कान छूते हैं और उनका हाथ लहूलुहान दिखता है। वह तुंरत नीचे झुक जाते हैं, लेकिन गोलियां चलती रहती है। वे कुछ ही क्षण में फिर खड़े होते हैं, दोनों हाथों की मुट्ठियां भींचकर ऊपर उठाते हैं और लोग उनके पक्ष में नारे लगाते हैं । हमले के बाद ट्रंप ने कहा कि 'उन्हें ऐसा लगा कि गोली उनके कान के आर-पार हो गई है।'

हालांकि अमेरिकी इतिहास में इसके पूर्व दो बार राष्ट्रपति उम्मीदवारों पर हमले के रिकॉर्ड हैं। 1912 में राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट दोबारा राष्ट्रपति बनने के लिए चुनावी अभियान में लगे थे तब मिल्वौकी में एक भाषण के लिए जाते समय एक सैलून संचालक ने उन्हें गोली मार दी थी। वे बच गए थे। गोलीबारी के बावजूद उन्होंने भाषण दिया। 1972 में अलबामा के गवर्नर जॉर्ज वालेस को तीसरी बार राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव प्रचार के दौरान वाशिंगटन डीसी के बाहर गोली मार दी गई थी। हमले के कारण उनकी कमर से नीचे का हिस्सा लकवाग्रस्त हो गया था, लेकिन वर्तमान हमले के कारण परिस्थितियों और इसके पीछे की विचारधारा अलग है। जांचकर्ताओं का कहना है कि ट्रंप की हत्या की कोशिश की गई थी। साफ है कि ट्रंप बाल-बाल बचे हैं। इसे संयोग ही कहिए अन्यथा गोली अगर कान को छूकर निकलने की बजाय अंदर चली गई होती तो आज ट्रंप की जीवनलीला समाप्त हो चुकी होती। बताया गया है कि दोनों हमलावर सुरक्षाकर्मियों के गोली का शिकार हो चुके हैं। अमेरिका की संघीय जांच ब्यूरो और अन्य एजेंसियां मिलकर जांच कर रही हैं और हत्या के प्रयास के कारणों का पता आने वाले समय में चलेगा। जांच रिपोर्ट जो भी कहे आम अमेरिकी और इस समय अमेरिका सहित विश्वभर में राजनीति, एक्टिविज्म और नैरेटिव की प्रवृत्तियों पर दृष्टि रखने वाले समझ सकते हैं कि इसके कारण क्या होंगे। ट्रंप पर हमले की सूचना आते ही पूर्व राष्ट्रपति बराक ओबामा ने इसकी निंदा करते हुए अमेरिकी समाज में हिंसा के लिए कोई स्थान न होने का बयान दिया तथा अपील की कि हमें सभ्य तरीके से व्यवहार करना चाहिए। राष्ट्रपति जो बाइडेन ने भी टेलीविजन प्रसारण में इसकी निंदा करते हुए यही कहा। समाचार के अनुसार बाइडेन ने ट्रंप से फोन पर बातचीत भी की, किंतु सच यह भी है कि डेमोक्रेटिक सहित अमेरिका के बुद्धिजीवियों, मीडिया, एक्टिविस्ट, यहां तक कि प्रशासन के एक बहुत बड़े वर्ग ने ट्रंप और उनकी विचारधारा के सामान्य विरोध की जगह उसके प्रति जिस ढंग से घृणा पैदा की है उसका असर अमेरिकी समाज पर है। ट्रंप को डेमोनाइज करते हुए उन्हें हिटलर से लेकर न

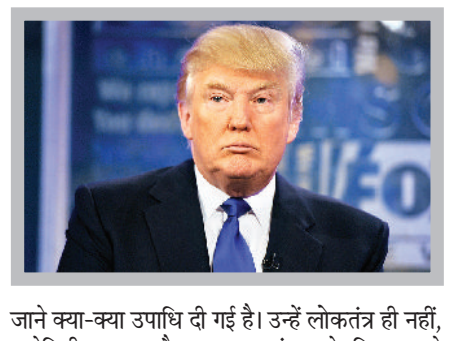

जाने क्या-क्या उपाधि दी गई है। उन्हें लोकतंत्र ही नहीं, अमेरिकी समाज और एकता अखंडता के लिए सबसे बड़ा खतरा बता दिया गया है। अमेरिका में ऐसे निहित स्वार्थी समुदाय हैं जिनके अंदर यह भाव गहरा हुआ है कि अगर ट्रंप दोबारा राष्ट्रपति बने तो उनके लिए समस्याएं पैदा होंगी। बड़ी संख्या में गैर अमीर क्यों और अवैध और अप्रवासियों को लगता है कि उन्हें देश से जाना पड़ सकता है। संयोग देखिए की ट्रंप पर गोली उस समय चली जब वह एक चार्ट पढ़ते हुए बता रहे थे कि अमेरिकी सीमा पार करने वाले अवैध प्रवासियों की संख्या कितनी है। ट्रंप एवं उनके समर्थकों ने अमेरिका में अवैध रूप से आने और रहने को एक बड़ा मुद्दा बनाया है। यह अनायास नहीं है कि ट्रंप को किसी तरह राष्ट्रपति की दौर से बाहर करने के हर प्रयास अमेरिका में हो रहे हैं। चूंकि अभी तक इसमें सफलता नहीं मिली है इसलिए संभव है कुछ व्यक्तियों या समूहों ने उन्हें रास्ते से ही हटा देने का निर्णय किया हो, इसलिए यह हमला अंतिम नहीं हो सकता। अगर भारत की ओर लौटें तो प्रधानमंत्री मोदी, भाजपा तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे हिंदुत्व विचारधारा को मानने वाले संगठनों को लेकर ऐसे ही वातावरण बनाने की कोशिश हुई है। ज्यादातर गैर भाजपायी राजनीतिक दलों के नेताओं, मीडिया के एक वर्ग, बुद्धिजीवी, एक्टिविस्ट, थिंक टैंक आदि भारत में भी उनके प्रति ऐसी ही घृणा और विरोध पैदा कर रहे हैं। इन संगठनों को फासिस्ट, अल्पसंख्यक विरोधी, हिंसक, भारतीय समाज की एकता का दुश्मन और न जाने क्या-क्या कहा गया है। एक बड़े वर्ग के अंदर यह भावना पैदा कर दी गई है कि अगर आपको स्वयं, देश को बचाना है तो इन सबको हर स्तर पर पराजित करना होगा। हम सोशल मीडिया से लेकर टीवी डिबेटों पर उनके विरोधियों की भाषा देख सकते हैं। पूरे देश के एक बड़े वर्ग के अंदर घृणा का भाव पैदा हुआ है। इस समय विश्वभर में इस तरह की प्रवृत्ति उभरी है। पूर्व में क्रांति कर सत्ता बदलने के विचार-व्यवहार वाले कम्युनिस्टों की जगह एक ऐसे नव वाममार्गी विचारधारा पूरी दुनिया में दिख रही है जो राष्ट्रवाद पर गर्व करने वाले संगठनों को लेकर घृणा-विरोध नैरेटिव और अन्य संसाधनों से पैदा कर रहा है। भारत और अमेरिका दो देश इस समय इन मामलों में सबसे आगे हैं। इन दोनों देशों के अंदर समाज में तनाव और गुस्सा धीरे-धीरे बढ़ाया गया है। यह अजीब किस्म का नया वामवाद या कम्युनिज्म है जिसकी अपनी विचारधारा स्पष्ट नहीं लेकिन ये उसी तरह की रेडिकल बातें करते हैं। हैरत की बात यह है कि इनमें विश्व के बड़े पूंजीपति, एनजीओ और संस्थान शामिल हैं। अमेरिका में इनकी संख्या ज्यादा है इसलिए इसका प्रभाव वहां सर्वाधिक दिखा है। भारत में संघ, भाजपा या ऐसे कुछ संगठनों का जमीन तक विचारधारा के आधार पर संगठन है इस कारण यहां ऐसा प्रभाव नहीं दिखता है। कई बार एक ही परिवार या रिश्तों के बीच दोनों विचारधाराओं के लोग हैं। ऐसी सामाजिक संरचना दूसरे देश में नहीं है। सच कह तो इस कारण हम बचे हुए हैं।

डोनाल्ड ट्रंप की हत्या की कोशिश हम सबके लिए सबक होना चाहिए। राजनीति और सार्वजनिक जीवन में असहमति और मतभेद होना स्वाभाविक है, किंतु राजनीति और सार्वजनिक जीवन में घृणा और दुश्मनी का कोई स्थान नहीं। हम एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी होंगे, राजनीतिक और वैचारिक विरोधी होंगे, किंतु दुश्मन नहीं जिसके विरुद्ध इतनी घृणा पैदा की जाए कि लोग हिंसा की सीमा तक पहुंच जाए। यह सभी पक्षों पर लागू होता है। हालांकि जैसा वातावरण भारत, अमेरिका सहित कई देशों में बन चुका है उसमें कोई तत्काल इससे सबक लेगा इसकी संभावना कम है। अगर सबक लेकर हम संभलने या संभालने की कोशिश करें तो उसमें भी सफलता की संभावना कमजोर हो गई है, क्योंकि वातावरण काफी विषाक्त बन चुका है। इसलिए सबके सामने यही प्रश्न है कि स्थिति को हम कैसे संभालें।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया **edit@haribhoomi.com** पर दे सकते हैं।

सारा संसार

एडम चोटी या एडम पीक श्रीलंका के आकर्षण में एक नायाब हीरा हैं जोकि श्रीलंका दर्शन के महत्व को और अधिक बढ़ा देता हैं। एडम पीसक के शिखर पर एक पत्थर में एक पदचिह्न है। जोकि अलग-अलग धर्म के लोगो के लिए अध्यात्मिक महत्व रखता हैं और वर्तमान समय में शिखर पर एक बौद्ध मठ बना हुआ है।

विश्व न्याय दिवस
अखिलेश आर्येन्दु

सब को समान न्याय एक चुनौती

दुनिया में मानवता के खिलाफ अपराध को रोकना मानवतावादियों के लिए चुनौती रही है। आज भी दुनिया में कहीं न कहीं नरसंहार, युद्ध अपराध और मानवता के खिलाफ संहार चलते रहते हैं। इन्हें रोकने की तमाम कवायदें चलती रहने के बावजूद इन्हें रोकना संभव नहीं हो पाया है। इन्हें रोकने के लिए अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय की स्थापना हुई। 17 जुलाई 1998 को 120 देश अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय के रोम संविधि नामक संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए एक साथ आए। तब से इसे अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय के रूप में जाने जाना लगा। रोम संविधि का जश्न मनाने के लिए, विश्व अंतरराष्ट्रीय न्याय दिवस तब से मनाया जाने लगा। पिछले 22 वर्षों में दुनिया में न्याय के क्षेत्र में तमाम बदलाव आए हैं। मानवता के खिलाफ दुनिया में चलाए जा रहे तमाम षड्यंत्रों को विफल करने में इस संस्था की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। इसकी स्थापना के पीछे नरसंहार, युद्ध अपराध और मानवता के खिलाफ अपराधों की जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय के निर्णयों का समर्थन करना भी है। 2010 में राज्य दलों की सभा ने संविधि की समीक्षा सम्मेलन में इसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मनाने का निश्चय किया। दुनिया के तमाम देश इसे मनाते हैं। पीड़ितों के अधिकारों को बढ़ावा देना इस दिवस के मनाने की खास वजह रही है। अंतरराष्ट्रीय आपराधिक कानून, न्यायपूर्ण और निष्पक्ष समाज की जरूरत आज विश्व समाज की सबसे बड़ी जरूरत है। एक सर्व सहमति से समझ बनाने की जरूरत है जो आतंक, नरसंहार और गैर इंसानी गतिविधियों के शिकार हो हलाकानी झेलने के लिए अभिशप्त हैं। विश्व समाज आज डर के माहौल में जीने के लिए मजबूर है। ऐसे में अंतरराष्ट्रीय स्तर की कोशिशों की भूमिका खास मायने रखती है। विश्व सामाजिक न्याय दिवस हमें हर साल अधिक न्यायपूर्ण, अधिक समतापूर्ण समाज बनाने की जरूरत को याद दिलाता है। समाज को समर्थ बनाने की दिशा में इस दिवस की महत्ता खास है, साथ ही समाज से असमानता, भेदभाव और अन्याय के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार होना भी है। आज जरूरी है कि विश्व समाज में सामाजिक न्याय, आर्थिक न्याय, राजनीतिक न्याय और कानूनी न्याय बगैर भेदभाव सभी को न्याय मिले। यह आज की सबसे बड़ी चुनौती है। विधि क्षेत्र में न्याय के जिन चार प्रकारों की बात की जाती है उनमें वितरणात्मक (यह निर्धारित करना कि किसे न्याय मिलता है) प्रक्रियात्मक न्याय (यह निर्धारिक तरना कि लोगं के साथ कितना निष्पक्ष व्यवहार किया जाता है) प्रतिशोधात्मक न्याय (गलत काम करने पर दंड के आधार पर) और पुनर्स्थापनात्मक (जो रिश्तों को सही बनाने की कोशिश करता है) इन चार तरह के न्यायों को समझना और दूसरों को इनके प्रति जागरूक करना भी इस दिवस का एक हिस्सा है। विकासशील देशों में ही अन्याय के मामले ज्यादा नहीं हैं, बल्कि विकसित देशों में अन्याय से पीड़ित लाखों की तादाद में लोग हैं। भारत में करोड़ों की तादाद में न्यायालयों में मुकदमे लम्बित हैं। करोड़ों मुकदमों का फैसला तब आता है जब वादी या प्रतिवादी इस दुनिया से रुख्सत हो चुके होते हैं। बगैर भेदभाव के न्याय दिलवाने और समय से दिलवाने के लिए विश्व स्तर पर सामूहिक प्रयास तो होने ही चाहिए। संविधि में शामिल सभी देशों को एक मत से इस पर गौर करना चाहिए की सभी को बगैर समय पर न्याय मिले। इससे इस दिवस का महत्व और बढ़ भी जाएगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

मोह-माया से दूर रहकर ही मुक्ति संभव

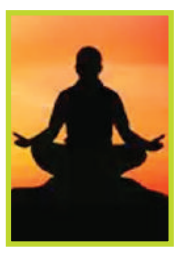

संकलित
दर्शन

हम एक-दूसरे की ओर ध्यान से देखते हैं, तो पाते हैं कि हम में से हरेक के गुण अलग हैं। तौर-तरीके अलग हैं। विचार अलग हैं। बात करने का तरीका, कार्य करने का तरीका भी अलग है। अगर हम अपने आपको श्रेणिबद्ध करने की कोशिश करें, तो चार किस्म की श्रेणियां हैं, जिसमें कि इनसान अपने आपको पाता है। एक महापुरुष की जिंदगी का एक किस्सा है। एक बार वे अपने शिष्यों के साथ समुद्र के किनारे टहल रहे थे। वहां उन्होंने देखा कि एक मछुआरा अपना जाल डालकर पानी में बैठा हुआ है। जैसे ही वे उस मछुआरे के पास से गुजरे, तो रुक गए। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि जाकर देखो, उस मछुआरे के जाल में किस किस्म की मछलियां फंसी हुई हैं? शिष्यों ने आकर संत से कहा कि उन्होंने वहां तीन किस्म की मछलियां देखी हैं। कई मछलियां ऐसी थीं, जो कि जाल में एकदम निढाल होकर पड़ी हुई थीं, वे ऐसे लेटी हुई थीं, जैसे कि उन्हें कुछ नहीं करना। दूसरी किस्म की मछलियां ऐसी थीं, जो जाल में से निकलने के लिए कुछ हाथ-पैर मार रही थीं, लेकिन वे जाल में फंसी रहीं। तीसरी किस्म की मछलियां वे थीं, जिन्होंने बहुत हाथ-पैर मारे और मारते-मारते कुछ जाल में से बाहर निकल गईं। संत ने अपने शिष्यों को समझाते हुए कहा कि हम इनसान भी कुछ ऐसे ही जीते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं, जो माया के जाल में ऐसे फंसे हुए हैं कि वे सोचते ही नहीं कि वे जाल में फंसे हुए हैं, वे वैसे ही उस जाल में टिके रहते हैं। उसी में मस्त रहते हैं। दुनिया के कार्यों में लगे रहते हैं।

सब दिशाओं में फैलती है सतकर्मों की सुगंध

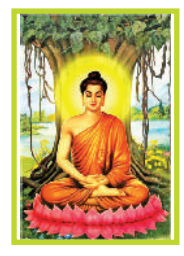

संकलित
प्रेरणा

महात्मा बुद्ध धर्म-प्रचार के लिए स्थान-स्थान पर जाते थे। उनके वचनों से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में लोग उनके शिष्य बन जाते थे। जो लोग उनके शिष्य नहीं बन सके, वे उनके अनुयायी बन गए। बुद्ध अपने सभी शिष्यों को समान मानते थे। इनमें आनंद नाम का एक शिष्य था, जो उनके सबसे प्रिय शिष्यों में से एक था। एक बार आनंद श्रावस्ती में संध्या के समय विपश्यना कर रहे थे। उनके साथ अनेक शिष्य और आम जन भी थे। विपश्यना करते हुए अचानक उनका ध्यान पास ही खिले हुए फूलों की ओर गया। उन खिले हुए फूलों की सुंदरता को देखकर वह चिंतन करने लगे कि ये फूल देखने में जितने सुंदर हैं, उतनी ही अच्छी इनकी सुगंध भी है। लेकिन यह क्या? यह सारी सुगंध तो उस ही दिशा में बह रही है, जिस ओर हवा बह रही है। जबकि इन फूलों की सुगंध को तो चारों ओर फैलना चाहिए। आखिर इसका कारण क्या है? फूलों की सुगंध हवा का अनुसरण क्यों कर रही है। ऐसा लगता है मानो हवा फूलों की इस सुगंध को अपनी ओर खींच रही हो। यह चिंतन करते-करते आनंद को ध्यान आया कि बुद्ध ने तीन प्रकार की उत्तम गंध की चर्चा की है। ये हैं- 'मूलगंध', 'सारगंध' और 'पुष्पगंध।' क्या इसके अलावा कोई और भी गंध है, जो हवा के विपरीत या सब तरफ फैले। आनंद के मन में विचार आया कि क्यों न बुद्ध के पास जाकर इस शंका का समाधान पाया जाए। ऐसा सोचकर वह बुद्ध के पास गए और बोले, 'भंते! क्या इस जगत में ऐसी भी कोई सुगंध है, जो हर दिशा में अपनी सुगंध बिखेरती हो।

अंतर्मन

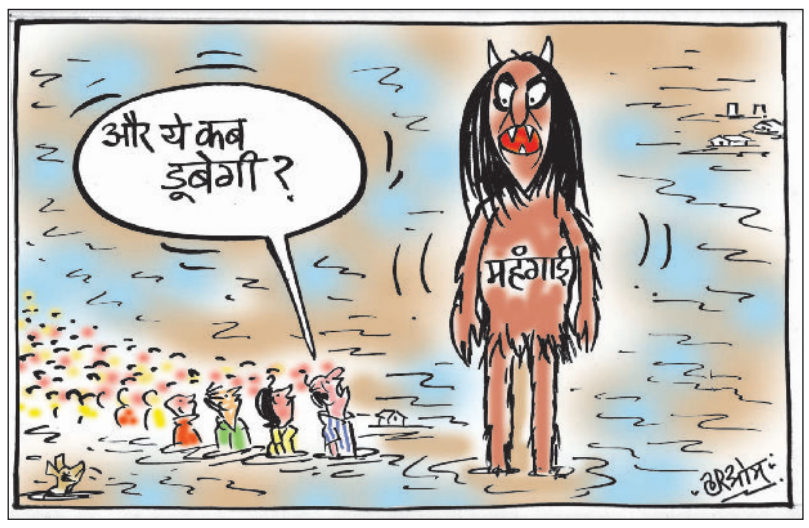

आज की पाती

अनियंत्रित यातायात

राजधानी के संतोषीनगर चौक पर हर दिन यातायात अनियंत्रित हो जाता है। ओवरब्रिज के पास हमेशा जाम की स्थिति रहती है। ऐसे में लोगों को रास्ता पार करना मुश्किल हो जाता है। संतोषीनगर बाजार से ओवरब्रिज के बीच ट्रकें रास्ते को रोकती है। ऐसे में वाहनों की लंबी कतारें लगी रहती हैं। बारिश के दिनों में जगह-जगह गड्ढे हो गए हैं। ऐसे में यह रास्ता काफी मुश्किलभरा है।

- राजेंद्र कुमार

ट्रेंड

भारतीय भाषा को बढ़ावा देना

प्रत्येक भारतीय भाषा को बढ़ावा देना, संरक्षित करना, लोकप्रिय बनाना और समृद्ध करना नई शिक्षा नीति की प्राथमिकता है। भारतीय भाषाओं में लेखन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से इस कार्यशाला का इंतजार करें।

-धर्मेन्द्र प्रधान, केंद्रीय मंत्री

बाइडेन सही कह रहे

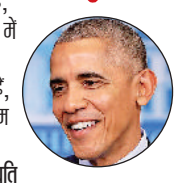

राष्ट्रपति बाइडेन बिल्कुल सही कह रहे हैं, कि इस तरह की हिंसा के लिए अमेरिका में कोई जगह नहीं है। एक देश के रूप में हम हर बात पर सहमत नहीं हो सकते हैं, लेकिन हमें उस पर सहमत होने में सक्षम होना चाहिए।

-बराक ओबामा, पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति

जम्मू कश्मीर की स्थिति

जम्मू कश्मीर में फिर से आतंकी मुठभेड़ में हमारे जवान शहीद हो गए। शहीदों को विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोक संतप्त परिजनों को गहरी संवेदनाएं व्यक्त करता हूं। एक के बाद एक ऐसी भयानक घटनाएं चिंताजनक है। ये आतंकी हमले जम्मू कश्मीर की स्थिति बयान कर रहे हैं।

-राहुल गांधी, नेता प्रतिपक्ष

दयालु नेताओं की जरूरत

क्या करुणा, सहानुभूति, दयालुता या परोपकार के समान है? ये शब्द अक्सर एक दूसरे के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं, लेकिन क्या ये वास्तव में पर्यायवाची हैं? मेरा दृष्टिकोण है कि करुणा का क्या अर्थ है और क्यों पहले से अधिक दयालु नेताओं की आवश्यकता है

-कैलाश सत्यार्थी, नोबेल विजेता

करंट अफेयर

16 लाख बच्चों ने 2023 में नहीं ली टीके की एक भी खुराक

भारत में 2023 में करीब 16 लाख बच्चों को टीके की एक भी खुराक नहीं मिली। इस क्रम में भारत का स्थान दूसरा है जबकि पहले स्थान पर नाइजीरिया है जहां 21 लाख बच्चों को इसी अवधि के दौरान टीके की एक भी खुराक नहीं मिली। भारत की रैंकिंग में हालांकि 2021 की तुलना में सुधार हुआ है, जब देश में वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक 27 .3 लाख बच्चों को टीके की एक भी खुराक नहीं मिली थी। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) और यूनिसेफ द्वारा सोमवार को संयुक्त रूप से प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार, 2023 में नाइजीरिया में शून्य खुराक वाले बच्चों की संख्या सबसे अधिक 21 लाख थी। भारत के बाद अन्य देश इथियोपिया, कांगो, सूडान और इंडोनेशिया हैं। इस श्रेणी में शीर्ष 20 देशों में चीन 18वें स्थान पर है, जबकि पाकिस्तान 10वें स्थान पर है। टीकाकरण एजेंडा 2030 (आईए2030) के संदर्भ में, 2021 में शून्य खुराक वाले बच्चों की संख्या के आधार पर, बीस देशों को प्राथमिकता दी गई। दक्षिण एशिया क्षेत्र (रोसा) के लिए संयुक्त राष्ट्र की एजेंसियों की रिपोर्ट के अनुसार, शून्य खुराक वाले बच्चों की संख्या के आधार पर रैंक किए गए देशों में, 2021-2023 में भारत 1,592,000 शून्य खुराक वाले बच्चों के साथ आठ देशों में से पहले स्थान पर है।

ऑफ बीट

रक्षा विनिर्माण को बढ़ावा देने सकारात्मक स्वदेशीकरण सूची

भारत ने 346 सैन्य हार्डवेयर की एक नयी सूची की घोषणा की जिसमें रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण प्रणालियां और हथियार शामिल हैं। इन्हें एक निश्चित समय-सीमा के भीतर उनके आयात पर प्रतिबंध लागू होने के बाद केवल सरकार द्वारा संचालित घरेलू निर्माण इकाइयों से ही खरीदा जाएगा। रक्षा मंत्रालय ने कहा कि घरेलू रक्षा उद्योगों को बढ़ावा देने के प्रयासों के तहत पिछले तीन वर्ष में 12,300 से अधिक वस्तुओं का स्वदेशीकरण किया जा चुका है। मंत्रालय ने कहा कि 346 वस्तुओं वाली पांचवीं सकारात्मक स्वदेशीकरण सूची को अधिसूचित किया गया है और इन वस्तुओं का उत्पादन रक्षा क्षेत्र के सार्वजनिक उपक्रमों (डीपीएसयू) द्वारा किया जाएगा। बयान में कहा गया है, रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने और डीपीएसयू द्वारा आयात को न्यूनतम करने के लिए रक्षा उत्पादन विभाग ने 346 वस्तुओं वाली पांचवीं सकारात्मक स्वदेशीकरण सूची (पीआईएल) को अधिसूचित किया है। मंत्रालय ने एक बयान में कहा, इससे अर्थव्यवस्था में वृद्धि को गति मिलेगी, रक्षा में निवेश बढ़ेगा और आयात पर निर्भरता कम होगी। पिछले कुछ वर्षों में सरकार ने घरेलू रक्षा उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कई कदम उठाए हैं।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से **hbcgpati@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

कल्पमेधा

लोकतंत्र स्वयं को अनुशासन में रखने की कला है, जिससे दूसरों को उसे अनुशासन में न रखना पड़े।

– जार्ज क्ले मेनशेन

आतंक के पांव

आतंकवादी अब कश्मीर के साथ-साथ फिर से जम्मू क्षेत्र को अपना ठिकाना बनाने लगे हैं। पिछले करीब डेढ़ दशक के दौरान सुरक्षा बलों के आतंकवाद के खिलाफ विशेष अभियान के बाद जम्मू क्षेत्र अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण रहा। आतंकी खतरे के लिहाज से जम्मू को काफी हद तक सुरक्षित माना जाने लगा था। मगर पिछले दो-तीन माह से इस क्षेत्र में आतंकवादी हमले बढ़ने लगे हैं। डोडा जिले में आतंकियों के साथ मुठभेड़ में सेना के एक कैप्टन सहित चार जवानों की शहादत इसी का उदाहरण है। इस इलाके में पिछले तीन सप्ताह के भीतर सुरक्षा बलों और आतंकियों के बीच मुठभेड़ की यह तीसरी बड़ी घटना है। आतंकी अब जम्मू में लक्षित हमलों को भी अंजाम दे रहे हैं। पिछले माह रियासी जिले में एक बस पर आतंकी हमले में नौ तीर्थयात्रियों के मारे जाने की घटना इनमें से एक है।

जम्मू क्षेत्र में बढ़ती आतंकी घटनाएं सुरक्षा बलों और शासन-प्रशासन के लिए गंभीर चिंता का विषय है। इस आतंकी सक्रियता के पीछे सीमा पार बैठे आतंकी सरगनाओं की सोची-समझी चाल है। वे किसी भी सूरत में जम्मू-कश्मीर में स्थायी तौर पर अमन-चैन बहाल नहीं होने देना चाहते। डोडा जिले में मुठभेड़ की यह ताजा घटना कठुआ जिले के दूरस्थ माचेड़ी वन क्षेत्र में सेना के गश्ती दल पर आतंकी हमले के कुछ ही दिन बाद हुई है, जिसमें पांच सैनिक शहीद हो गए थे। गौरतलब है कि हाल में ज्यादातर मुठभेड़ की घटनाएं सुरक्षा बलों के तलाशी अभियान के दौरान हुई हैं। यानी सुरक्षा बलों को क्षेत्र में आतंकियों के छिपे होने की सूचना तो मिल जाती है, लेकिन वे किस तरह के हथियारों से लैस हैं और उनकी रणनीति क्या है, इसकी स्टीक जानकारी नहीं मिल पाती है।

खुफिया जानकारियों में यह बात सामने आई है कि जम्मू-कश्मीर में आतंकवादी खुद को सुरक्षा एजंसियों की नजर से बचाने के लिए अब 'संरक्षण और समेकन' की रणनीति अपना रहे हैं। यानी आतंकवादी सीमा पार से घुसपैठ करने के बाद शुरुआत में चुप रहते हैं और स्थानीय आबादी के साथ घुलमिल जाते हैं। जैसे ही उन्हें सीमा पार से निर्देश मिलता है, वे हमले को अंजाम देने में जुट जाते हैं। उत्तरी कश्मीर और जम्मू क्षेत्र में हाल में आतंकियों द्वारा घात लगाकर किए गए हमले इसका ताजा उदाहरण हैं। आम लोगों के बीच छिपे हुए आतंकवाद के इस खतरे से निपटने के लिए सुरक्षा बलों को जल्द ठोस और कारगर रणनीति बनानी होगी। तकनीकी खुफिया जानकारी के साथ-साथ जमीनी स्तर पर 'मानव खुफिया' नेटवर्क भी मजबूत करने की जरूरत है। खुफिया जानकारियों में यह बात भी सामने आई है कि आतंकवादी सीमा पार से संपर्क के लिए 'अल्ट्रा सेट' फोन जैसे एन्क्रिप्टेड संचार उपकरणों का उपयोग करने लगे हैं, जिससे उनके ठिकाने और रणनीति की सटीक जानकारी हासिल कर पाना मुश्किल हो जाता है। इस तरह की तकनीकी चुनौती से पार पाने के लिए भी सुरक्षा एजंसियों को गंभीरता से विचार करना होगा। वहीं, जम्मू-कश्मीर के पुलिस महानिदेशक का कहना है कि आतंकवादी पंजाब से लगती पाकिस्तान की सीमा से भी घुसपैठ कर जम्मू पहुंच रहे हैं। इसलिए इस इलाके में फिर से आतंकी वारदात बढ़ने लगी हैं। अगर ऐसा है तो सुरक्षा बलों के साथ-साथ पंजाब और जम्मू-कश्मीर प्रशासन को सीमा पर घुसपैठ रोकने के लिए साझा रणनीति बनाने की जरूरत है, ताकि आतंकियों के तंत्र को नेस्तनाबूद किया जा सके।

निरंकुश महंगाई

खुदरा महंगाई दर के बाद अब थोक महंगाई के आंकड़े भी आ गए हैं। हालांकि पिछले चार महीनों से थोक महंगाई में लगातार वृद्धि का रुख बना हुआ है, मगर जून महीने में यह सोलह महीनों के उच्च स्तर 3.36 फीसद पर पहुंच गई। अभी इसमें बहुत बदलाव की गुंजाइश नजर नहीं आ रही। बरसात को देखते हुए विशेषज्ञों का मानना है कि अगले महीने इसमें कुछ कमी दर्ज होगी। बताया जा रहा है कि जून में तेज लू चलने के कारण सब्जियों के उत्पादन पर असर पड़ा, जिसकी वजह से महंगाई बढ़ी है। जून में खाद्य वस्तुओं की महंगाई दर 10.87 दर्ज हुई। इनमें सबसे अधिक महंगाई सब्जियों में देखी गई। प्याज की कीमतों में 99.35 फीसद, आलू में 66.37 तथा अन्य हरी सब्जियों में 38.35 फीसद की वृद्धि दर्ज की गई। फलों की कीमतों में 10.14 फीसद, मोटे अनाज में 9.27, गेहूं में 6.25 और दालों की कीमतों में 21.64 फीसद की वृद्धि दर्ज की गई। स्वाभाविक ही इसका असर विनिर्मित खाद्य वस्तुओं पर भी पड़ा है। यह तब है जब जून में पेट्रोल, डीजल, प्राकृतिक गैस और बिजली की कीमतों में कमी दर्ज हुई।

खाद्य वस्तुओं की कीमतों में बढ़ोतरी की मार सबसे अधिक गरीब और सामान्य आय वर्ग के लोगों पर पड़ता है। सब्जियों और दालों की कीमतें बढ़ने से लोगों को अपने भोजन पर अधिक खर्च करना पड़ रहा है। विशेषज्ञों का कहना है कि अगस्त में जब सब्जियों की नई फसल आनी शुरू होगी, तब महंगाई में कुछ कमी दर्ज होगी। इसी तरह मोटे अनाज और दलहन की नई फसल आने के बाद कुछ राहत मिलेगी। मगर यह तो तय है कि खाद्य वस्तुओं की कीमतें मौसम के मिजाज पर निर्भर करती हैं। पिछले कुछ वर्षों से जिस तरह मौसम का रुख कृषि क्षेत्र के लिए अनुकूल नहीं दिखाई दे रहा है, उसमें आने वाले समय में इसे लेकर कितना भरोसा किया जा सकता है। ऐसे में, फिर से यह जरूरत रेखांकित हुई है कि फसलों की सुरक्षा, भंडारण, शीतगृहों की क्षमता बढ़ाने आदि जैसे जरूरी उपायों पर गंभीरता से ध्यान दिया जाना चाहिए। महंगाई पर काबू पाने के लिए केवल रिजर्व बैंक की नीतिगत दरें पर्याप्त उपाय नहीं हैं।

नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता की जड़ें

नेपाल में अस्थिर सरकारों का दौर तभी शुरू हो गया था, जब 1990 में पंचायत व्यवस्था की औपचारिक समाप्ति हुई। नवंबर 1990 में नया संविधान बना और नेपाली कांग्रेस के नेता केपी भट्टराई के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बनी थी।

संजीव राय

नेपाल में सरकारों का बदलना कोई नई बात नहीं। मगर वहां किसी एक गठबंधन का कार्यकाल पूरा करना भी मुश्किल है। बीस महीनों के बाद ही नेपाल में एक बार फिर सरकार बदल गई है। अब माओवादी नेता पुष्प कमल दहल 'प्रचंड' की जगह केपी शर्मा ओली नेपाल के प्रधानमंत्री बन गए हैं। गठबंधन में विचारधारा पीछे रहती है और सरकार में शामिल राजनीतिक दल अपने-अपने हित साधने में लगे रहते हैं। दूसरे दलों के समर्थन पर टिकी सरकार पर दबाव रहता है, लेकिन प्रतिरोध और समझौते के पहियों से सरकार चलती रहती है। अब केपी शर्मा ओली की पार्टी एनसीपी (यूएमएल) समर्थन की जगह सरकार का नेतृत्व कर रही है। अभी तक विपक्ष में बैठने वाली नेपाली कांग्रेस, एनसीपी (यूएमएल) को समर्थन दे रही है। यह गठबंधन कितने समय तक चलेगा, देखने की बात है।

नेपाल में अस्थिर सरकारों का दौर तभी शुरू हो गया था, जब 1990 में पंचायत व्यवस्था की औपचारिक समाप्ति हुई। नवंबर 1990 में नया संविधान बना और नेपाली कांग्रेस के नेता केपी भट्टराई के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बनी थी। देश में 1959 के बाद, 1991 में बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत चुनाव कराए गए। कुल 205 संसद प्रतिनिधियों में से नेपाली कांग्रेस को 112 सीटों पर विजय मिली थी। गिरिजा प्रसाद कोइराला प्रधानमंत्री बने, लेकिन नेपाली कांग्रेस की अंदरूनी कलह के चलते चार साल से पहले ही यह सरकार गिर गई और देश फिर चुनाव के लिए बाध्य हुआ। तय अवधि से अट्ठारह महीने पहले, नवंबर 1994 में फिर चुनाव हुआ, लेकिन किसी पार्टी को बहुमत नहीं मिला। 88 सीटों के साथ एनसीपी (यूएमएल) के मनमोहन अधिकारी अल्पमत सरकार के प्रधानमंत्री बने और नौ महीने बाद ही वह सरकार गिर गई। यह नेपाल में पहली कम्युनिस्ट सरकार थी। उसके बाद सितंबर 1995 में नेपाली कांग्रेस के शेर बहादुर देउबा के नेतृत्व में सद्भावना पार्टी और राष्ट्रीय प्रजातांत्रिक पार्टी के सहयोग से नई सरकार बन गई। 1999 के चुनाव में नेपाली कांग्रेस को बहुमत मिला था, मगर राजा ज्ञानेंद्र ने अक्तूबर, 2002 में प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा को हटा कर संसद को भंग करके सत्ता की कमान अपने हाथ में ले ली थी।

1991 के बाद राजनीतिक अस्थिरता और भ्रष्टाचार से आम लोग दुखी थे। युवा देख रहे थे कि अस्थिर सरकारों के कारण आर्थिक विकास नहीं हो पा रहा और रोजगार के अवसर नहीं खुल रहे हैं। इसी बीच फरवरी 1996 में पुष्प कमल दहल 'प्रचंड' और बाबू राम भट्टराई ने छोटे-छोटे कम्युनिस्ट समूहों को मिला कर कम्युनिस्ट पार्टी नेपाल (माओवादी) का गठन किया और राजशाही के विरुद्ध 'सशस्त्र जनयुद्ध' की घोषणा कर दी। बैंक, सरकारी दफ्तर, स्कूल आदि पर नियंत्रण के साथ माओवादी अपना विस्तार करते जा रहे थे और पश्चिमी नेपाल में उन्हें ग्रामीण लोगों का अच्छा समर्थन मिल रहा था। 1996 से 2006 के बीच सेना और पुलिस के साथ माओवादियों की गोलाबारी रोज की खबर थी। इस जनयुद्ध में लगभग तेरह हजार लोगों की जान गई। 2002 के बाद राजनीतिक दलों और राजा ज्ञानेंद्र के बीच मतभेद उभरने लगे।

माओवादियों की राजशाही हटाने की मांग और हमले जारी रहे। 24 अप्रैल, 2006 को राजा ज्ञानेंद्र ने भंग हुई संसद को बहाल करने की घोषणा के साथ, देश के सात प्रमुख राजनीतिक दलों के संगठन से देश की एकता और समृद्धि के लिए कार्य करने का अनुरोध किया। नेपाली कांग्रेस के नेता गिरिजा प्रसाद कोइराला एक बार फिर प्रधानमंत्री बने और राजनीतिक दलों के बीच चुनाव कराने और नए संविधान बनाने पर भी सहमति बनी। नई सरकार ने कुछ ही दिनों बाद राजा के प्रमुख अधिकारों में कटौती कर दी। 21 नवंबर, 2006 को गिरिजा प्रसाद कोइराला के नेतृत्व वाली सात दलों की सरकार और नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के बीच शांति समझौते पर हस्ताक्षर हुए और फिर माओवादी मुख्यधारा की राजनीति में वापस लौट आए।

> **नेपाली संसद अगर आम लोगों की बेहतरी के लिए गंभीर नहीं है, तो जनता को उसकी उपयोगिता पर संदेह होगा! राजनीतिक दलों की अगुआई में लोकतंत्र बहाली आंदोलन, जनयुद्ध, राजशाही का समापन, नया संविधान, सब कुछ हुआ, लेकिन 'नउनो नेपाल' के सपने का क्या हुआ? कुछ लोग सोचते हैं कि राजशाही के समापन के बाद, राणा परिवारों की जगह, नए कुलीन सत्ता के प्रतिनिधि बन गए हैं और उनके बीच ही सत्ता का खेल चल रहा है! इस परिस्थिति में प्रमुख नेपाली राजनीतिक दलों की जिम्मेदारी है कि वे याद करें कि 1991 से 2006 के बीच उन्होंने आम लोगों से किस तरह का नेपाल बनाने का वादा किया था।**

नेपाल में लंबे राजनीतिक और सशस्त्र संघर्ष के बाद 2008 के अप्रैल में, संविधान सभा के चुनाव हुए, जिसमें माओवादियों को सबसे अधिक सीटें मिलीं, लेकिन उनको स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। मई 2008 में राजशाही की औपचारिक विदाई हो गई और नेपाल को एक संघीय गणराज्य के रूप में मान्यता दे दी गई। जुलाई, 2008 में रामबरन यादव देश के पहले राष्ट्रपति बने। उसी साल अगस्त में माओवादी नेता पुष्प कमल दहल 'प्रचंड' मिली-जुली सरकार के प्रधानमंत्री बन गए। मगर मई 2009 में ही प्रचंड ने प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया। इस तरह 2008 से 2013 के बीच दलों के पालाबदल खेल में अलग-अलग गठबंधन बने और देश को चार प्रधानमंत्री मिले। 2013 से 2017 के बीच चार प्रधानमंत्री और 2017 के चुनाव के बाद फरवरी 2018 से दिसंबर 2022 तक नेपाल में तीन प्रधानमंत्री बने।

आम चुनाव के बाद जनवरी, 2023 में फिर प्रचंड नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी (यूएमएल) के समर्थन से प्रधानमंत्री बने, लेकिन फरवरी 2023 में ही उनकी सरकार ने मुख्य विपक्षी दल नेपाली कांग्रेस के सहयोग वाला गठबंधन बना लिया। नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी (यूएमएल) ने सरकार से अपना समर्थन वापस ले लिया, लेकिन नेपाली कांग्रेस के सहयोग के कारण सरकार नहीं गिरी। मगर मार्च 2024 में प्रचंड ने एक बार फिर नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी (यूएमएल) से हाथ मिला लिया और प्रधानमंत्री बने रहे। अब नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी (यूएमएल) और नेपाली कांग्रेस एक साथ आ गए हैं और नए गठबंधन ने तीन बार प्रधानमंत्री रहे प्रचंड को सत्ता से बाहर कर दिया है।

नेपाली कांग्रेस के नेता शेर बहादुर देउबा पांच बार प्रधानमंत्री रह चुके हैं। ऐसा लगता है कि देश में कौन, कब, किसके साथ सत्ता में भागीदार होगा, इसका कोई वैचारिक आधार या आर्थिक नीतियों से कोई लेना-देना नहीं है। 275 सदस्यों वाली नेपाली संसद अगर आम लोगों की बेहतरी के लिए गंभीर नहीं है, तो जनता को उसकी उपयोगिता पर संदेह होगा! राजनीतिक दलों की अगुआई में लोकतंत्र बहाली आंदोलन, जनयुद्ध, राजशाही का समापन, नया संविधान, सब कुछ हुआ, लेकिन 'नउनो नेपाल' के सपने का क्या हुआ? कुछ लोग सोचते हैं कि राजशाही के समापन के बाद, राणा परिवारों की जगह, नए कुलीन सत्ता के प्रतिनिधि बन गए हैं और उनके बीच ही सत्ता का खेल चल रहा है! इस परिस्थिति में प्रमुख नेपाली राजनीतिक दलों की जिम्मेदारी है कि वे याद करें कि 1991 से 2006 के बीच उन्होंने आम लोगों से किस तरह का नेपाल बनाने का वादा किया था। नेपाल की अर्थव्यवस्था पूरी तरह चौपट हो चुकी है। सत्ताधारी दल खुल कर भ्रष्टाचार में शामिल हैं। लोग परेशान हैं, मगर लोकतांत्रिक ढंग से चुने हुए नेता एक नए तरह की राजशाही चला रहे हैं।

अस्थिर राजनीतिक गठबंधन और अल्पकालिक सरकारों के अनुभव के साथ लोकतांत्रिक देश इस प्रावधान को अपना सकते हैं कि कानूनी रूप से कोई भी व्यक्ति दो बार से अधिक देश का प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति नहीं बन सकता है!

नदी का जीवन

अंशु सारडा अन्वि

मानव सभ्यता में शुरू से ही नदियों का महत्त्व रहा है। नदियों का जल मूल प्राकृतिक संसाधन और मानव जीवन के लिए बेहद आवश्यक है। चारों ओर सूखी रेत, गंदगी का जमाव, जल प्रवाह में कमी, विकास के नाम पर अतार्किक हस्तक्षेप, औद्योगिक कचरे का निष्कासन, गंदे पानी का निकास आदि गंगा के लिए बुरे संकेत हैं। किसी-किसी स्थान पर पानी इतना कम हो चुका है कि लोग आसानी से चल कर भी नदी पार कर लेते हैं। कहीं-कहीं तो गंगा की गहराई अब दस फुट भी नहीं रही है, जबकि मछलियों और डाल्फिनों को गंगा में रहने के लिए कम से कम बारह से अठारह फुट गहरे पानी की आवश्यकता होती है। किसी भी नदी में डाल्फिन उस नदी की स्वच्छता का प्रतीक होती है और यह अब गंगा नदी में कम होती जा रही है। पर क्या वास्तव में हम चिंतित हैं गंगा को बचाने के लिए, जिसके आचमन मात्र से हम खुद को शुद्ध मान लेते हैं।

चिंता करना, उसके बारे में बातें करना, उस पर तमाम सरकारी परियोजनाएं बनाना अलग बात है और ईमानदार प्रयास अलग बात है। भारत में गंगा समेत अन्य नदियों को प्रदूषण से मुक्त बनाने के लिए राष्ट्रीय नदी संरक्षण और 'रिवर फ्रंट डेवलपमेंट' जैसी योजनाएं चलाई जा रही हैं। गंगा नदी प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से देश की तिरपन करोड़ से अधिक आबादी को प्रभावित करती है। इसलिए विभिन्न सरकारों द्वारा गंगा को स्वच्छ बनाने के लिए कई बड़ी और महत्त्वाकांक्षी योजनाओं की शुरुआत की गई। अब 'नमामि गंगे' परियोजना को भी शुरू हुए दस वर्ष पूरे हो चुके हैं। इसलिए देशवासियों को यह जानने का अधिकार है कि ऐसी परियोजनाओं का परिणाम क्या है। इस तरह की परियोजनाएं जितने दिखावे और शोर के साथ शुरू होती हैं, उनका क्रियान्वयन न तो उतना आसान होता है और न ही उतनी गति पकड़ पाता है।

गंगा या अन्य नदियों के किनारे सुंदर घाट बनाकर, सुंदर तरीके से उनकी आरती करने और देखने की व्यवस्था करना एक धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम हो सकता है, जिसका अब अपना व्यावसायिक महत्त्व भी है, पर यह नदियों की स्वच्छता और अविरलता को लेकर कितनी अलख जगा सकेगा, यह सोचने वाली बात है। गंगा समेत सभी बड़ी नदियों की सहायक नदियों को भी पुनर्जीवित करना और उन्हें साफ रखने के महत्त्व को समझना होगा। हजारों करोड़ रुपए खर्च करने के बावजूद गंगा के स्वच्छ होने और अविरल बहने वाली बातें अभी दूर की कौड़ी हैं। जिस वाराणसी के घाट और वहां मृत्यु होने पर मोक्ष प्राप्ति की बात कही जाती है, उसी वाराणसी में गंगा थकी हुई-सी चलती है। ऐसे में यमुना नदी की बात करना तो बेमानी है। इस नदी का अधिकांश हिस्सा स्नान करने लायक भी नहीं है।

नदियां अपने-अपने क्षेत्रों की लोक कथाओं, लोक संस्कृतियों, रचनाओं का प्रेरणा सूत्र होती हैं। इन नदियों ने अनेक दार्शनिकों को अपनी ओर आकर्षित किया है। एक नदी में जीवन और मृत्यु, सृजन और विनाश का चक्र निरंतर चलता रहता है। जब किसी भी नदी को बचाने और संवारने के लिए किसी भी परियोजना को लागू किया जाता है तो नदी के साथ-साथ उसका मानव समाज के साथ संबंधों को समझने की भी कोशिश करना आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन से जुड़ी एक रपट में कहा गया है कि गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र सहित दक्षिण एशिया की प्रमुख नदी घाटियों पर जलवायु परिवर्तन का खतरनाक प्रभाव दिखाई दे रहा है। मानवजनित गतिविधियों और जलवायु के स्वरूप में बदलाव होने के कारण उसके आसपास के इलाकों के लगभग एक अरब लोगों के लिए गंभीर नतीजों की चेतावनी दी गई है। रपट बताती है कि तीन नदियों गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र पर, नदी बेसिन प्रबंधन के लिए लचीले नजरिए को अपनाने की तत्काल आवश्यकता है।

नदियों का खत्म होते जाना न केवल खेती योग्य उर्वरा भूमि को खत्म करेगा, बल्कि नदी किनारे बसी सभ्यताओं के सांस्कृतिक नुकसान का भी कारण बनेगा। देश की तमाम नदियों में आक्सीजन का स्तर खतरनाक रूप से कम हो चला है, जिसके कारण जैव विविधता को बनाए रखना लगभग असंभव हो गया है। अगर इनको बचाना है तो सबसे पहले अपने लक्ष्य को परिभाषित करना होगा, पर्यावरणीय सेवाओं, जैव विविधता, आर्थिक सेवाओं को बनाए रखना होगा। नदियों से हमें मिलने वाली सामाजिक, धार्मिक सेवाओं को भी ध्यान रखना होगा। यह समझना भी आवश्यक है कि हम अपनी आस्था और मान्यताओं के अनुसार शवों, मूर्तियों और फूलों को नदियों में विशेष रूप से गंगा जैसी धार्मिक महत्त्व वाली नदियों में विसर्जित करते हैं, जिनसे नदियों का जल प्रदूषित होता है।

> **नदियों का खत्म होते जाना न केवल खेती योग्य उर्वरा भूमि को खत्म करेगा, बल्कि नदी किनारे बसी सभ्यताओं के सांस्कृतिक नुकसान का भी कारण बनेगा। देश की तमाम नदियों में आक्सीजन का स्तर खतरनाक रूप से कम हो चला है, जिसके कारण जैव विविधता को बनाए रखना लगभग असंभव हो गया है।**

हमारे देश में नदियों ही नहीं, झीलों और तालाबों जैसे अन्य जलस्रोतों की स्थिति भी अत्यंत दयनीय है। बढ़ते शहरीकरण, नदी किनारे स्थित उद्योगों के प्रदूषण और अपरिष्कृत कचरे को नदियों में डालने से प्रदूषण का स्तर बढ़ता जा रहा है। तेजी से हो रही जनसंख्या वृद्धि ने घरेलू, औद्योगिक और कृषि के क्षेत्र में नदियों के जल की मांग बढ़ा दी है, जिसके कारण नदियों से अधिकाधिक जल निकाला जाने लगा है। यह जानी हुई बात है कि इससे इनका आयतन घटता जाता है और गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। नदियों को स्वच्छ बनाने के लिए सरकार द्वारा भले ही कितने ही कदम उठाए जाएं, लेकिन अगर हम स्वयं जागरूक नहीं होंगे और अपने स्तर पर उन्हें स्वच्छ रखने में कोई पहल नहीं करेंगे तब तक ये नदियां कभी भी पूरी तरह से स्वच्छ नहीं हो पाएंगी। अगर नदियां मर गईं तो पृथ्वी पर जीवन का निर्वाह करना मुश्किल हो जाएगा।

दुनिया मेरे आगे

सेहत का दायरा

'आयुष्मान भारत योजना' देश के सत्तर बरस पार किए बुजुर्गों के लिए लागू की जाने वाली महत्त्वपूर्ण स्वास्थ्य योजना है। समय के मुताबिक इस योजना मे थोड़े बदलावों की जरूरत है। आज देश मे साठ की उम्र पूरी किए बुजुर्गों की संख्या लगभग पंद्रह करोड़ से अधिक है। ऐसे में इन बुजुर्गों को भी सरकार की आयुष्मान स्वास्थ्य योजना मे शामिल किया जाना चाहिए। साठ की उम्र के बाद अधिकतर बुजुर्ग सेवानिवृत्त हो जाते हैं और अपनी बीमारियों के इलाज के लिए परिवार के अन्य सदस्यों पर आश्रित हो जाते हैं। उस अवस्था में उन्हें नित होती स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के लिए सरकार द्वारा घोषित आयुष्मान भारत योजना राहत का काम करने वाली साबित हो सकती है। इसके साथ ही सरकार को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि जिन अस्पतालों में ये सुविधाएं मिलेंगी, उनकी सूची बुजुर्गों तक आसानी से उपलब्ध हों। वहां बिना किसी रुकावट के उन्हें संपूर्ण इलाज मिले, तब सरकार द्वारा बुजुर्गों के लिए किए जा रहे इस तरह के कार्य सार्थक कहलाएंगे।

– नरेश कानूनगो, देवास, मप्र

पकड़ से दूर

खबरों के मुताबिक भगोड़े विजय माल्या के विरुद्ध दो जुलाई, 2024 को फिर से एक और गैरजमानती गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया है। कई वर्षों से माल्या के ऊपर विभिन्न मुकदमों के अंतर्गत कानूनी कार्रवाई चल रही है, लेकिन वर्ष 2016 में विजय माल्या उस समय सुर्खियों में आया, जब वह किसी साजिश के तहत इंग्लैंड भाग गया और तमाम कोशिशों और आश्वासनों के बावजूद उसे अभी तक भारत नहीं लाया जा सका है। सरकार द्वारा कई बार माल्या के प्रत्यर्पण की बात कही गई, लेकिन इस मामले में अभी तक धरातल पर कोई सफलता दिखाई नहीं देती। मेहुल चौकसी, नीरव मोदी आदि दूसरे आर्थिक अपराधियों या आरोपियों के बारे में भी ऐसा ही कहा जा सकता है। हालांकि इन सबके खिलाफ कानूनी कार्रवाई, न्यायिक प्रक्रिया, जांच पड़ताल तथा अन्वेषण जैसी कार्रवाई लंबे समय तक चलती रहेगी, पर इसका कोई सार्थक नतीजा मिलने की कोई उम्मीद फिलहाल नहीं दिख रही है।

– इशरत अली कादरी, भोपाल

अनदेखी और हादसे

जब भी हमारे देश में कोई हादसा होता है तो सबसे पहले राजनीतिक दल चाहे वह सत्ता में हों या विपक्ष में, हादसे पर दुख जताते हैं, उसके बाद विपक्ष सत्ता पक्ष पर लापरवाही का आरोप लगाता है और हादसे के लिए सरकार को जिम्मेदार ठहराता है। जो पक्ष सत्ता में है, वह हादसे पर दुख तो जताता है और जिन लोगों की लापरवाही से हादसा हुआ है, उनको सजा देने की बात भी करता है, पीड़ितों को इंसाफ दिलाने का वादा करता है, मुआवजे का एलान करता है, पीड़ित परिवारों के एक सदस्य को सरकारी नौकरी देने का वादा करता है, मगर हादसे रुकें, इसे लेकर कुछ ठोस सामने नहीं आता। हादसे के लिए जिम्मेदार दो-चार लोगों को गिरफ्तार किया जाता है और हादसा किस वजह से हुआ उसके लिए जांच कमेटी बिठा दी जाती है। वक्त गुजरता है तो विपक्ष क्या, पक्ष क्या और आम जनता, सभी हादसे को भूल जाते हैं। जिनको गिरफ्तार किया गया, उनमें कई सबूतों के अभाव में छूट जाते हैं।

– चरनजीत अरोड़ा, नरेला, दिल्ली

उदासीनता का हासिल

'लापरवाही की लत' (दुनिया मेरे आगे, 9 जुलाई) में लेखिका ने सधा हुआ विश्लेषण किया है। हम आलसी होकर 'चलता है सब' कह कर आगे बढ़ जाते हैं और किसी मसले पर अपनी राय जाहिर करने या उसे सही-गलत के परिप्रेक्ष्य में देखने को वक्त बर्बाद करना मानते हैं। जबकि इसका असर यह सामने आता है कि जो नकारात्मक व्यवस्था बनती है, वह सबको प्रभावित करती है। यह सोचने की जरूरत है कि हमारी इस तरह की लापरवाही कैसी व्यवस्था का निर्माण करती है। छोटी-छोटी गड़बड़ियों को हम 'चलता है सब' के भाव में आकर नजरअंदाज कर देते हैं और वही गड़बड़ियां बाद में एक व्यवस्था के रूप में कायम हो जाती हैं और जाहिर है, उसका नतीजा नकारात्मक ही होगा और इसकी मार सभी लोगों को झेलनी पड़ती है। सवाल है कि हम कब यह सोचना शुरू करेंगे कि 'सब नहीं चलता है'!

– शेख यकीन याकूब, औरंगाबाद, महाराष्ट्र

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

www.readwhere.com

परमाणु हथियार बनाने वाले वैज्ञानिक मानव जाति के लिए इन्हें शक्तिहीन करने के साधन भी प्रदान करें। - रोनाल्ड रीगन

बीते कुछ महीनों में खासकर जम्मू में आतंकियों ने जिस तरह चुनौती देने वाले अंदाज में हमले किए हैं, उसके पीछे अस्थिरता फैलाने की मंशा ही ज्यादा दिखती है। जरूरी है कि सुरक्षा एजेंसियां संगठित, सतर्क और सशक्त दृष्टिकोण के साथ रणनीतियों पर पुनर्विचार करते हुए आतंकियों को कड़ा संदेश दें।

कड़ा संदेश जरूरी

बीते जून में रियासी में शिवखोड़ी से कटरा जा रही बस पर आतंकी हमले के बाद से जम्मू के डोडा में हुए ताजा हमले सहित जिस तरह जम्मू-कश्मीर में एक के बाद एक आतंकी हमले हुए हैं, उसके पीछे आतंकियों की माहौल को अस्थिर बनाए रखने की ही मंशा ज्यादा दिखती है। उल्लेखनीय है कि पिछले हफ्ते कठुआ में सेना के वाहन को निशाना बनाने के बाद अब डोडा जिले के जंगलों में सेना व आतंकियों के बीच ताजा मुठभेड़ में तीन जवानों और एक कैप्टन रैंक के अधिकारी का बलिदान हुआ। जम्मू में हुए पिछले हमलों की तरह इस आतंकी हमले की जिम्मेदारी भी पाकिस्तान समर्थित आतंकवादी समूह जैश-ए-मोहम्मद के मुखौटा संगठन कश्मीर टाइगर्स ने ली है। उल्लेखनीय है कि ऐसे आतंकी गुट 2019 में जम्मू-कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा खत्म करने के बाद ही उभरे हैं। हालांकि, जैश-ए-मोहम्मद और हिजबुल मुजाहिदीन जैसे आतंकी समूह कश्मीर में पहले से सक्रिय थे, लेकिन अंतरराष्ट्रीय मंचों पर इन समूहों के जरिये कश्मीर की शांति भंग करने को लेकर भारत द्वारा की जाने वाली फजीहत से बचने के लिए पाकिस्तान ने आतंकी समूहों के नाम ऐसे रखने शुरू किए, जो इस्लामी न लगें। एक दौर था, जब कश्मीर घाटी में आतंकियों का नेटवर्क हुआ करता था, जिसे पाकिस्तान से नियंत्रित किया जाता था। बाद के वर्षों में सेना ने अपने विभिन्न अभियानों के जरिये घाटी से आतंकियों का सफाया कर दिया, और अनुच्छेद 370 के निरस्त होने के बाद तो ये नेटवर्क पूरी तरह से ध्वस्त हो गए। जो आतंकी बच गए, वे स्थानीय आबादी में छिपकर काम करने लगे। इसके अतिरिक्त, विदेशी आतंकी भी कश्मीर में अवैध तरीके से घुसपैठ कर रहे हैं, जो शुरू में शांत बने रहते हैं। लेकिन बाद में ये आतंकी स्थानीय आबादी के साथ घुलमिल जाते हैं और फिर पाकिस्तान में बैठे अपने आकाओं के निर्देशों का इंतजार करते हैं। अब यही छिपे हुए आतंकी कश्मीर टाइगर्स जैसे आतंकी गुटों के लिए

सूचनाओं के स्रोत बन गए हैं और जम्मू में हुए विभिन्न आतंकी हमलों के सिरे भी इनसे जुड़ते हैं। उत्तरी कश्मीर और कठुआ में हुई मुठभेड़ों से इसकी पुष्टि भी होती है। लिहाजा, आतंकियों के स्थानीय सूचना नेटवर्क को ध्वस्त करना भी सुरक्षा बलों के लिए एक चुनौती है। पिछले कुछ महीनों में जम्मू में हुए आतंकी हमले दर्शाते हैं कि आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई और आतंकी जिस चुनौती देने वाले अंदाज में हमला कर रहे हैं, उसे देखते हुए जरूरी है कि सुरक्षा एजेंसियां संगठित, सतर्क और सशक्त दृष्टिकोण के साथ रणनीतियों पर पुनर्विचार करें और आतंकियों को कड़ा संदेश भी दें।

परमाणु युद्ध की जमीन तैयार है

महाशक्तियों के बीच हथियारों की सीमा संबंधी सभी वार्ताएं खत्म हो गई हैं। हम दुनिया भर में फैले दुश्मनों के बीच 12,121 परमाणु हथियारों के साथ जी रहे हैं। अमेरिका, रूस और चीन जैसे देश इस होड़ में पिछड़ना नहीं चाह रहे हैं।

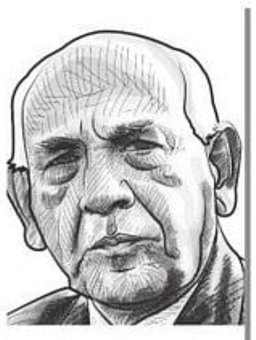

प्रशांत दीक्षित
रणनीतिक मामलों के जानकार

एनी जैकबसन की रोमांचक थ्रिलर पुस्तक *'परमाणु युद्ध : एक परिदृश्य'* परमाणु युद्ध की भयावहता को स्पष्ट करती है कि कैसे दुनिया परमाणु हथियारों से नष्ट हो सकती है। इस पुस्तक को वास्तविक अर्थों में एक क्लासिक के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि यह हमें दृढ़ता से याद दिलाती है कि हम अपने डाटाबेस से परमाणु प्रलय की काली छाया को खत्म नहीं होने देंगे।

इस वर्ष की सिपरी रिपोर्ट से हमें इस भयावह परिदृश्य का एहसास होता है कि हम दुनिया भर में फैले दुश्मनों के बीच 12,121 से ज्यादा परमाणु हथियारों के साथ जी रहे हैं। अनुमान है कि अमेरिका और रूस के पास हर समय क्रमशः 1,770 और 1,710 हथियार तैनात रहते हैं। ब्रिटेन, फ्रांस और चीन के पास क्रमशः 120, 280 और 24 हथियार तैयार हैं। संग्रहीत हथियार 5,684 हैं और सैन्य भंडार में 9,585 हथियार हैं।

इस परिदृश्य को रॉयटर्स की एक रिपोर्ट और भयावह बनाती है, जिसमें बताया गया है कि 'रूस सैन्य अभ्यास करेगा, जिसमें जंगी परमाणु हथियारों के उपयोग का अभ्यास किया जाएगा। यह 6 मई, 2024 तक की ताजा रिपोर्ट है। सैन्य अभ्यास में गैर-रणनीतिक परमाणु हथियारों के उपयोग के लिए तैयारी और तैनाती का अभ्यास इसमें शामिल होगा। रूस के दक्षिणी सैन्य जिले में मिसाइल संरचनाएं होंगी और नौसेना बल इसमें भाग लेंगे।

अभ्यास के दौरान, 'तथाकथित' गैर-रणनीतिक परमाणु हथियारों की तैयारी और उपयोग के कई उपाय किए जाएंगे। यह जंगी परमाणु हथियारों के लिए एक गलत नाम है। रूस का दावा है कि अभ्यास का उद्देश्य 'रूसी संघ के खिलाफ कुछ पश्चिमी अधिकारियों द्वारा दिए गए भड़काऊ बयानों और धमकियों के जवाब में' रूस की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता सुनिश्चित करना है। रूसी सेना की लीक हुई फाइलों के अनुसार, व्लादिमीर पुतिन की सेनाओं ने एक प्रमुख विश्वशक्ति के

साथ संघर्ष के शुरुआती चरण में जंगी परमाणु हथियारों का उपयोग करने का अभ्यास किया है, जिसमें चीन द्वारा आक्रमण के लिए प्रशिक्षण भी शामिल हैं। रूस अपने परमाणु शस्त्रागार को अपनी रक्षा नीति की आधारशिला मानता है और कुछ युद्धक्षेत्र में पहले परमाणु हमला करने के लिए यह अपने बलों को प्रशिक्षित करता है।

सैन्य अभ्यासों से पता चलता है कि 'यदि पारंपरिक तरीकों से वांछित परिणाम प्राप्त नहीं किया जा सकता है, तो परमाणु हथियारों का उपयोग करने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।' रूस के जंगी परमाणु हथियार, जिन्हें जमीन या समुद्र से प्रक्षेपित मिसाइलों या विमानों से पहुंचाया जा सकता है, यूरोप और एशिया में सीमित युद्धक्षेत्र में उपयोग के लिए तैयार किए गए हैं, जबकि बड़े 'रणनीतिक' हथियारों का उद्देश्य अमेरिका पर हमला करना है।

रूस के पास दुनिया का सबसे बड़ा परमाणु हथियार भंडार है और हमें भरोसा दिलाया जाता है कि जंगी परमाणु उपकरण का कोई रणनीतिक मतलब नहीं होता! हालांकि, अध्ययनों से पता चला है कि आधुनिक जंगी हथियार अब भी 1945 में नागासाकी और हिरोशिमा पर गिराए गए हथियारों की तुलना में काफी अधिक ऊर्जा जारी कर सकते हैं। रूस ने इसी वर्ष जून में उत्तर कोरिया के साथ एक पारस्परिक हथियार आपूर्ति संधि पर भी हस्ताक्षर किए, जिसका मुख्य उद्देश्य अपने शस्त्रागार को बढ़ाना और जंगी परमाणु हथियार ले जाने में सक्षम बैलिस्टिक मिसाइलों का भंडार भरना है।

अमेरिका भी मानो इस होड़ में पीछे नहीं रहना चाहता। अप्रैल 2023 में, अमेरिकी स्ट्रेटेजिक कमांड ने ग्लोबल थंडर नामक सैन्य अभ्यास शुरू किया था, जिसमें देश की परमाणु कमान, नियंत्रण और संचालन प्रक्रियाओं का सफलतापूर्वक परीक्षण व सत्यापन किया गया। इसकी योजना एक साल पहले से ही बनाई जा रही थी। यह 'रणनीतिक कमान के जवानों और इकाइयों को मित्र राष्ट्रों और साझेदार संगठनों के साथ प्रशिक्षण के लिए तैयार करता है, ताकि एकजुटता मजबूत की जा सके और वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिए जरूरी अमेरिका के रणनीतिक निवारक बल की तत्परता, प्रभावशीलता और सुरक्षा को बढ़ाया जा सके।'

नाटो सहयोगियों ने भी अपनी गति बनाए रखी है और उसने 24 जनवरी, 2024 को दशक का अपना सबसे बड़ा सैन्य अभ्यास शुरू किया, जिसमें 90,000 जवानों को उत्तरी अटलांटिक और यूरोप में महीनों तक चलने वाले युद्धाभ्यास में भाग लेने के लिए तैयार किया गया। अभ्यास मुख्य रूप से पोलैंड और नॉर्वे में हो रहे हैं, लेकिन जर्मनी, बाल्टिक राज्यों, रोमानिया, फिनलैंड, स्लोवाकिया, ग्रीस और स्वीडन में भी हो रहे हैं। दावा किया गया कि यह अभ्यास यूक्रेन में रूस के 'विशेष सैन्य अभियान' और व्लादिमीर पुतिन द्वारा यूरोप के पूर्वी देशों को दी गई धमकियों पर प्रतिक्रिया देने की गठबंधन की क्षमता का परीक्षण करेगा। इस तरह से परमाणु टकराव की स्थिति पूरी तरह से तैयार है। इसमें चीन भी पीछे नहीं रहना चाहता, इसलिए उसने अपने शस्त्रागार में 90 और परमाणु हथियार जोड़ लिए हैं और उन्हें हाई अलर्ट पर रखा है।

परमाणु हथियारों में इस वृद्धि के कारण स्पष्ट रूप से हैरान करने वाले हैं। दावा किया जाता है कि 11 मार्च, 2024 को अग्नि पांच पर भारत द्वारा मल्टीपल इंडिपेंडेंटली टार्गेटेबल री-एंट्री व्हीकल्स (एमआईआरवी) का परीक्षण चीनी कार्रवाई को बढ़ावा दे सकता है।

हालांकि भारतीय अनुसंधान प्रतिष्ठान केवल अमेरिका, फ्रांस, रूस, चीन और ब्रिटेन के उस चुनिंदा समूह में शामिल होना चाहता है, जिनके पास यह क्षमता है। रणनीतिक मजबूरियों की वजह से शायद भारत भी पीछे नहीं रहना चाहता! ऐसे में, हम इस धारणा से बच नहीं सकते कि हम एक अत्यंत प्रतिकूल शीतयुद्ध परमाणु परिदृश्य का सामना कर रहे हैं, जबकि ध्यान देने वाली बात है कि महाशक्तियों के बीच हथियारों की सीमा संबंधी सभी वार्ताएं खत्म हो गई हैं।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

अरस्तु

मनुष्य लक्ष्य-प्राप्ति करने वाला प्राणी है। उसका जीवन तभी सार्थक है, जब वह लक्ष्यों के लिए प्रयास करता रहे। सोचने और सीखने से मिलने वाला आनंद हमें और अधिक सोचने और सीखने के लिए प्रेरित करेगा।

शिक्षा की जड़ें कड़वी हैं, लेकिन फल मीठा है

मैं उस व्यक्ति को अधिक बहादुर मानता हूं, जो अपनी इच्छाओं पर विजय प्राप्त कर लेता है, न कि उस व्यक्ति को, जो अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है, क्योंकि स्वयं पर विजय प्राप्त करना सबसे कठिन है। हमारे आस-पास कोई भी क्रोधित हो सकता है-यह आसान है, लेकिन सही व्यक्ति पर, सही मात्रा में, सही समय पर, सही उद्देश्य से, और सही तरीके से क्रोधित होना-यह हर किसी के बस की बात नहीं है, और आसान भी नहीं है। इन सभी को जोड़ने का मार्ग शिक्षा है, जो समृद्धि में आभूषण है, विपत्ति में शरण है, तथा बुढ़ापे में सहारा है। स्वयं को जानने से ही सभी ज्ञान की शुरुआत होती है। और जिन चीजों को करने से पहले हमें उन्हें सीखना पड़ता है, उन्हें करके हम सीखते हैं।

हमें पहले दिल को शिक्षित करना होगा, इसके बिना दिमाग को शिक्षित करना कोई शिक्षा नहीं है। मानव जाति पर शासन करने की कला पर ध्यान देने वाले सभी लोगों को यह विश्वास हो गया है कि साम्राज्यों का भाग्य युवाओं की शिक्षा पर निर्भर करता है। मनुष्य लक्ष्य-प्राप्ति करने वाला प्राणी है। उसका जीवन तभी सार्थक है, जब वह अपने लक्ष्यों की ओर बढ़ता रहे और उनके लिए प्रयास करता रहे। सोचने और सीखने से मिलने वाले आनंद हमें और अधिक सोचने और सीखने के लिए प्रेरित करेंगे। यह सरलता ही है, जो लोकप्रिय श्रोताओं को संबोधित करते समय अशिक्षित लोगों को शिक्षित लोगों की तुलना में अधिक प्रभावी बनाती है। यह मानना बेतुका है कि किसी व्यक्ति को अपने अंगों से आत्मरक्षा करने में असमर्थ होने पर शर्म आनी चाहिए, जबकि वाणी और तर्क से आत्मरक्षा करने में असमर्थ होने पर शर्म आनी चाहिए; क्योंकि तर्कसंगत वाणी का प्रयोग मनुष्य के अंगों के प्रयोग से अधिक विशिष्ट है। इतिहास बताता है कि क्या हुआ है, जबकि कविता बताती है कि क्या हो सकता है। इसलिए कविता इतिहास से ज्यादा दार्शनिक और गंभीर चीज है; क्योंकि कविता सार्वभौमिक चीजों के बारे में बताती है, जबकि इतिहास विशेष चीजों के बारे में बताता है। आलोचना एक ऐसी चीज है, जिसे आप आसानी से टाल सकते हैं–कुछ न कहकर, कुछ न करके, और कुछ न होकर। अज्ञानता को छिपाना और अज्ञानता से छिपाना एक बात नहीं है। किसी को केवल यह अध्ययन नहीं करना चाहिए कि क्या सर्वोत्तम है, बल्कि यह भी अध्ययन करना चाहिए कि क्या संभव है, तथा इसी प्रकार क्या सरल है तथा सभी के लिए क्या अधिक प्राप्य है। मैंने जो कहा है, उसका समर्थन इस तथ्य से होता है कि युवा लोग ज्यामितिज्ञ, गणितज्ञ और ऐसे विषयों में वैज्ञानिक बनते हैं, लेकिन यह नहीं माना जाता है कि एक युवा व्यक्ति में व्यावहारिक बुद्धि आ सकती है: अब कारण यह है कि इस बुद्धि का उद्देश्य विशेष तथ्य होते हैं, जो अनुभव से ज्ञात होते हैं, जो एक युवा व्यक्ति के पास नहीं होते, क्योंकि यह केवल समय की दीर्घता से उत्पन्न होते हैं।

स्वयं को जीतें

सूत्र

अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करना बहुत कठिन नहीं है, लेकिन स्वयं पर विजय प्राप्त करना सबसे कठिन है। जो व्यक्ति अपनी इच्छाओं को वश में करके उस पर विजय प्राप्त कर लेता है, वास्तव में वही बहादुर है। स्वयं को जानने से ही हर तरह के ज्ञान की शुरुआत होती है, इसलिए ज्ञान प्राप्त करने के लिए पहले स्वयं को जानें।

दूसरा पहलू

महामारी के समय पैदा हुए ज्यादातर बच्चे शैक्षणिक और मानसिक विकास के मोर्चे पर पीछे हैं। इनमें लड़के ज्यादा प्रभावित हैं।

संघर्ष कर रहे हैं महामारी में जन्मे बच्चे

महामारी के समय जन्मे बच्चे अब न सिर्फ स्कूल जाने की उम्र में पहुंच चुके हैं, बल्कि महामारी का असर उन पर साफ दिख रहा है। इनमें से ज्यादातर बच्चे शैक्षणिक और मानसिक विकास के मोर्चे पर पीछे हैं। दो दर्जन से अधिक शिक्षकों, बाल चिकित्सकों और बाल विशेषज्ञों के इंटरव्यू के आधार पर यह अध्ययन सामने आया है कि महामारी में जन्मे बच्चों को पेंसिल पकड़ने, अपनी जरूरतों के बारे में बताने, अपने आवेगों को नियंत्रित करने तथा दोस्तों की मदद से अपनी समस्याओं का समाधान करने में भारी मुश्किलें आ रही हैं। अध्ययन से यह भी सामने आया है कि लड़कियों की तुलना में लड़कों को ज्यादा समस्या आ रही है।

क्लैरे केन मिलर

महामारी के समय जो बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे थे और जिन्हें लंबे समय तक घरों में रहना पड़ा, वे भी गणित और रीडिंग में पिछड़ गए हैं। इसके लिए मोबाइल-टीवी भी जिम्मेदार हैं।

एलेन को किंडरगार्टन में पढ़ाने का ग्यारह साल का अनुभव है। इस साल पहली बार उनका सामना ऐसे बच्चों से हुआ है, जो मुश्किल से बोल पाते हैं, जो अकेले शौचालय नहीं जा सकते, और कुछ बच्चे तो पेंसिल तक नहीं पकड़ सकते।

हालांकि महामारी के समय जो बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे थे और जिन्हें लंबे समय तक घरों में रहना पड़ा, वे भी गणित और रीडिंग में पिछड़ गए हैं। विशेषज्ञ इसके कई कारण बताते हैं, जैसे-माता-पिता की ओर से बढ़ा दबाव, बाहरी लोगों से न के बराबर मिलना-जुलना, टीवी और मोबाइल पर ज्यादा समय गुजारना और खेलने का अवसर न मिल पाना। महामारी के समय मोबाइल पर बच्चों का ज्यादा समय गुजरने लगा था, जो महामारी खत्म होने पर स्कूल खुलने के बाद भी कम नहीं हुआ। पर महामारी के समय जन्मे बच्चों के मानसिक विकास पर चौंकाने वाला असर पड़ा है।

ब्रुक एलेन को किंडरगार्टन में पढ़ाने का ग्यारह साल का अनुभव है। लेकिन इस साल पहली बार उनका सामना ऐसे बच्चों से हुआ है, जो मुश्किल से बोल पाते हैं, जो अकेले शौचालय नहीं जा सकते, और कुछ बच्चे तो पेंसिल तक नहीं पकड़ सकते। लिजा की कक्षा में ऐसे ही बच्चे आए हैं, जो धक्का-मुक्की करते हैं, सामान इधर से उधर फेंकते हैं, अपने साथियों और शिक्षकों तक को चोट पहुंचाते हैं। विशेषज्ञ इसका सबसे बड़ा कारण यह बताते हैं कि महामारी के दौरान उनके माता-पिता विभिन्न कारणों से भारी तनाव में थे, जिसका असर उन पर पड़ा है। अगर अमेरिका की ही बात करें, तो महामारी के समय पैदा हुए सभी बच्चे फिसड्डी नहीं हैं। एक आंकड़े के मुताबिक, अश्वेत, हिस्पैनिक और कम आय वर्ग वाले बच्चे अध्ययन और मानसिक विकास में ज्यादा पिछड़ रहे हैं। यह इतनी बड़ी समस्या है कि अमेरिकी शिक्षा व्यवस्था में इसे 'महामारी जनित सुनामी' कहा जा रहा है। विशेषज्ञों का अलबत्ता मानना है कि इस समस्या का हल निकाला जा सकता है। लेकिन फिलहाल तो इस मामले में सरकार और प्रशासन की गंभीरता का आभास नहीं मिलता।

©The New York Times 2024

आंकड़े

बिजली के स्रोत

कोयले के भंडार बेशक खत्म हो रहे हैं, लेकिन भारत में कोयले से बनी बिजली का ही सबसे ज्यादा इस्तेमाल किया जाता है।

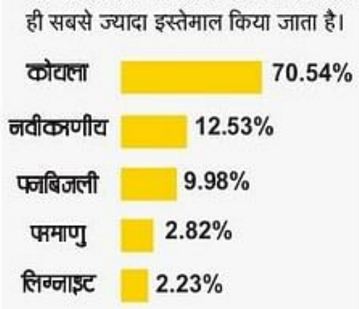

आंकड़े वर्ष 2022-23 के हैं। | स्रोत: MoP

आज देवशयनी एकादशी है। भगवान ने वामन अवतार लेकर बलि से दान में तीन पग भूमि मांगी। भगवान ने दो पग में ही पूरा संसार नाप लिया।

बलि ने वरदान में भगवान को मांगा

अंतर्यात्रा
संकलित

आषाढ़ शुक्ल एकादशी को देवशयनी एकादशी भी कहते हैं। पुराणों के अनुसार, भगवान विष्णु इस दिन से कार्तिक शुक्ल एकादशी तक क्षीर सागर में शयन करते हैं। इस एकादशी और भगवान श्रीहरि के शयन को लेकर कई कथाएं प्रचलित हैं। एक कथा के अनुसार, आषाढ़ शुक्ल पक्ष एकादशी तिथि को भगवान ने शंखासुर दैत्य को मारा था।

युद्ध की थकान मिटाने के लिए भगवान ने चार मास तक क्षीर समुद्र में शयन किया। वहीं, पुराणों में वर्णन है कि भगवान हरि ने वामन रूप में दैत्य बलि से दान में तीन पग भूमि मांगी थी। भगवान ने पहले पग में संपूर्ण पृथ्वी, आकाश और सभी दिशाओं को ढक लिया। अगले पग में संपूर्ण स्वर्ग लोक ले लिया। तीसरे पग में बलि ने अपने आप को समर्पित करते हुए सिर पर रखने के लिए कहा। इस प्रकार के दान से भगवान ने प्रसन्न होकर बलि को पाताल लोक का अधिपति बना दिया और कहा, वर मांगो। बलि ने वर मांगते हुए कहा कि भगवान आप मेरे महल में नित्य रहें। भगवान जब बलि के यहां रहने लगे, तो लक्ष्मी ने बलि को भाई बना लिया और भगवान को वचनमुक्त करने का अनुरोध किया। तब इसी दिन से भगवान विष्णु के वर का पालन करते हुए तीनों देवता चार-चार माह पाताल लोक में निवास करते हैं। विष्णु देवशयनी एकादशी से देवोत्थान एकादशी तक, शिव जी महाशिवरात्रि तक और ब्रह्मा जी शिवरात्रि से देवशयनी एकादशी तक पाताल में निवास करते हैं।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 05 मार्च, 1956

ब्रिटेन व भारत के बीच सहमति अधिक, मतभेद कम

ब्रिटेन व भारत के बीच सहमति
अधिक मतभेद कम
दोनों शांति व विश्व बंधुत्व के उपासक
ब्रिटेन के विदेशमंत्री सेल्विन लायड का वक्तव्य

ब्रिटेन के विदेश मंत्री सेल्विन लॉयड ने कहा कि भारत और ब्रिटेन में मतभेद कम हैं, जबकि विचारों की एकता अधिक है। दोनों ही शांति और विश्व बंधुत्व के लिए कार्य करना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि युद्ध कोई नहीं चाहता।

क्या सादगी के लिए कोई गुंजाइश है?

हम सरोकारों से कटे हुए, एकांगी और आत्ममुग्ध समाज में बदल गए हैं, जहां प्रदर्शन ही सबकुछ है और चकाचौंध अंतिम पड़ाव।

मनोज मिश्र | **समाज**

हाल ही में संपन्न एक बड़े उद्योगपति के बेटे के ब्याह का खुमार अभी उतरा नहीं है। रील्स की दुनिया में हाहाकार है। टीवी चैनलों पर सोहर जारी हैं। कोई वक्त था, जब धन के ऐसे अश्लील प्रदर्शन को समाज न केवल अनैतिक मानता था, बल्कि कई देशों में तो जेल तक हो जाया करती थी। जिनके पास अकूत दौलत हुआ करती थी, वे तब भी उसे विलासिता पर खर्च करने से पीछे नहीं रहते थे, लेकिन सामान्यतया यह सब कोठियों की बंद दीवारों के पीछे हुआ करता था। एक खास तबके के लोगों के बीच। कोशिश होती थी कि बाहर की दुनिया को इसकी ज्यादा भनक न लगे। कोई खिड़की, कोई रोशनदान खुला रह गया, तो उसकी झिर्री से मीडिया के छापामार दस्ते कुछ दृश्य चुरा लाया करते थे और उसे बड़ी उपलब्धि मानते थे। मगर, पिछले सालों में वक्त बदला और उसके साथ सामाजिक मूल्य भी।

अब किसी को इस बात की परवाह नहीं होती कि अब भी इस देश के बड़े हिस्से में लड़की का बाप सबसे निरीह प्राणी कहा जाता है। बड़ी मिसालें हैं कि बेटी के

लिए दहेज जुटाने में कई लोगों की जिंदगी भर की पूंजी खर्च हो जाती है, फिर भी ससुराल वाले संतुष्ट नहीं होते। इस बात का खतरा बना रहता है कि न जाने कब लाडली की मासूम मुस्कराहटें ससुराल पक्ष की टीवी, फ्रिज और कार जैसे ठंडे लोहे की लालसाओं की भेंट चढ़ जाएं। अब इस बात को लेकर कहीं कोई फिक्र नहीं दिखती कि लकदक शादियों को फटी आंखों से देखने के बाद दूल्हों के कस्बाई मां-बापों की हसरतें किस कदर आसमान छू रही होंगी। ब्याह में ऐसी न सही, इसके आस-पास की शान-शौकत के निष्ठुर सपने उनकी आंखों में भी कुलबुलाने लगे होंगे। महंगी सजावट, डिजाइनर कपड़े, भारी-भरकम गहने-जेवर और छप्पन प्रकार के व्यंजन, सब वैसा चाहिए होगा, जिसकी चकाचौंध से फिल्मी सितारों, खिलाड़ियों व धर्मगुरुओं से लेकर राजनेताओं तक, सब सम्मोहित हैं।

सामाजिक सरोकारों से कटे हुए, एकांगी और आत्ममुग्ध समाज इसी तरह व्यवहार करते हैं। वहां सादगी के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती है। आजकल किसी से इस बात की अपेक्षा रखना कि वह अपने मोहल्ले के प्राथमिक शिक्षक का सम्मान करेगा, किसी कारीगर को उसकी उजरत का पैसा चुकाते हुए विनम्र बना रहेगा या अपेक्षाकृत कमजोर आर्थिक स्थिति वाले अपने संबंधियों को भी घरेलू फोटो फ्रेम में हिस्सा देगा, बेमानी है। जब समाज के भीतर खुद मूल्यों को लेकर कोई आग्रह न हो, तो फिर जिनकी जेब में पैसा है, उनसे किसी नैतिकता और मर्यादा की अपेक्षा क्यों रखी जानी चाहिए? इस पूरे विमर्श का एक सिरा समाज में मूल्यों के ह्रास से जुड़ता है, तो दूसरा क्रोनी कैपिटलिज्म से। कहने की जरूरत नहीं कि हाल के वर्षों में एकाएक बने कई अमीरों की दौलत में पीढ़ी-दर-पीढ़ी व्यापार के विस्तार की कमाई के बजाय नए तरीकों और तंत्र के चोर दरवाजे से घुसकर जुटाई गई समृद्धि का हिस्सा है। इसलिए भी अब समाज को लेकर नैतिक दायित्वों का कोई दबाव नहीं दिखता।

दुनिया में ऐसे तमाम उदाहरण हैं, जहां उद्योगपतियों ने फाउंडेशन बनाए, चैरिटेबल ट्रस्ट खोले या फिर इसी तरह का कोई और उपक्रम करते हुए अपनी दौलत का एक हिस्सा उस समाज को लौटाया, जिससे उन्होंने इसे हासिल किया था। बेशक इस प्रक्रिया में भी तमाम झोल हैं। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जहां दान के बजाय दिखावा ज्यादा है या फिर दान के नाम पर संपत्ति को उलटफेर कर अपने ही खाते में जोड़ लेने की शातिर कवायद। इस कड़वे सच के बावजूद इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि उद्योगपतियों के ट्रस्टों और फाउंडेशनों ने तमाम जरूरतमंदों के जीवन में बदलाव लाने में अहम भूमिका निभाई है। मगर इन मिसालों से इतर ब्याह के नाम पर लगातार बढ़ रहे तमाशे, किराये के मेहमान, फिल्मी गानों पर ठुमके और पति-पत्नी के प्रेम के प्रदर्शन के नाम पर हिंदी-अंग्रेजी फिल्मों से चुराए सस्ते संवाद बढ़ते जा रहे हैं। अधनंगी मॉडलों के वार्षिक कलेंडर से लेकर महंगी पार्टियों तक, हवाई जहाज से लेकर यॉट की खरीद तक वैभव का प्रदर्शन करने वाले लोगों की एक श्रृंखला मिलेगी, जो बैंकों को दिवालियापन सौगात में देते हैं।

लकदक शादियों को हसरत भरी निगाहों से देखने वाले आम लोगों को शायद इस बात का एहसास भी नहीं है कि सारे खाली खजाने आखिर में उन्हें और उनकी आने वाली पीढ़ियों को अपने ही खून-पसीने की कमाई से भरने हैं।

शब्द विष भी हैं और अमृत भी

बेलगाम होता आतंक

डोडा जिले में एक आतंकी हमले में कैप्टन समेत सेना के चार जवानों और जम्मू कश्मीर के एक पुलिसकर्मी का बलिदान इसलिए कहीं अधिक आघातकारी है, क्योंकि कुछ ही दिनों पहले कठुआ में एक सैन्य अफसर सहित पांच जवान आतंकियों का निशाना बन गए थे। इसके पहले भी जम्मू संभाग में ही सेना के कई जवान आतंकियों से लोहा लेते हुए अपना सर्वोच्च बलिदान दे चुके हैं। यह बेहद चिंतित करने वाला घटनाक्रम है कि पिछले कुछ समय से कश्मीर घाटी के साथ-साथ जम्मू संभाग में भी आतंकियों की गतिविधियां बढ़ती जा रही हैं। हाल की कुछ घटनाओं से तो यह भी लगता है कि आतंकियों ने जम्मू संभाग को अपनी गतिविधियों का प्रमुख केंद्र बना लिया है। एक ऐसे समय जब जम्मू कश्मीर में विधानसभा चुनाव कराने की तैयारी हो रही है, तब आतंकियों का बेलगाम नजर आने लगना गंभीर चिंता का विषय बनना चाहिए। यह ठीक नहीं कि पाकिस्तान प्रशिक्षित आतंकी न केवल घुसपैठ करने में समर्थ हैं, बल्कि अपनी गतिविधियों को अंजाम देने और इस क्रम में सेना को निशाना बनाने में भी। ऐसा क्यों हो रहा है, इसकी तह तक जाने की जरूरत है। आखिर क्या कारण है कि प्रधानमंत्री मोदी के तीसरी बार सत्ता संभालने के बाद से जम्मू कश्मीर में आतंकी हमलों में तेजी आती दिख रही है? आतंकी जिस तरह अपनी रणनीति बदलकर सुरक्षा बलों को कहीं अधिक क्षति पहुंचाने में समर्थ दिखने लगे हैं, वह किसी बड़ी साजिश का संकेत है। भारत सरकार को एक ओर जहां सीमा पार से होने वाली आतंकियों की घुसपैठ पर प्रभावी नियंत्रण करना होगा, वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान को नए सिरे से सबक भी सिखाना होगा। यह इसलिए अनिवार्य हो गया है, क्योंकि पिछले कुछ समय में आतंकी हमलों में बलिदान होने वाले सैनिकों की संख्या कहीं अधिक बढ़ी है। एक आंकड़े के अनुसार पिछले तीन वर्ष में करीब 50 जवानों को अपना बलिदान देना पड़ा है। यह बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं। आतंक को करारा जवाब केवल तभी नहीं दिया जाना चाहिए, जब एक साथ बड़ी संख्या में सुरक्षा बलों के जवानों को बलिदान देना पड़े। वास्तव में हमारे एक भी सैनिक का बलिदान व्यर्थ नहीं जाना चाहिए। डोडा की घटना के बाद यह जो कहा जा रहा है कि सैनिकों के बलिदान का बदला लिया जाएगा, उसे न केवल पूरा करके दिखाया जाना चाहिए, बल्कि आतंकियों, उनके आकाओं और उन्हें सहयोग-समर्थन देने वालों पर ऐसा करारा प्रहार किया जाना चाहिए, जिससे वे अपनी हरकतों से हमेशा के लिए बाज आएं। पाकिस्तान भले ही आर्थिक संकट और राजनीतिक अस्थिरता से जूझ रहा हो, लेकिन वह जम्मू कश्मीर में पहले की तरह ही आतंकवाद को बढ़ावा देने में लगा हुआ है। चूंकि इसकी भरी-पूरी आशंका है कि चीन उसे उकसाने में लगा हुआ होगा, इसलिए भारत को कहीं अधिक सतर्क रहना होगा।

समृद्धि की राह

वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट के तहत राज्य के सभी जिलों में वहां के विशेष उत्पादों का चयन किया गया है। मकसद है, किसानों की आय बढ़ाना। मजदूरों को रोजगार मुहैया कराना। ज्यादा से ज्यादा लोगों तक उत्पाद की पहुंच बढ़ाना। मगर, यह महत्वाकांक्षी योजना आंशिक रूप से ही जमीन पर उतर पाई है। वजह कई हैं। मसलन, भागलपुर में इस योजना के तहत जर्दालू आम का चयन किया गया, लेकिन सरकारी पौधारोपण अभियान में पिछले कई वर्षों से इस ओर ध्यान ही नहीं दिया गया कि इसके पेड़ों की संख्या बढ़े। पौधारोपण अभियान में जर्दालू आम की जगह पीपल, बरगद आदि के पौधे लगाए जा रहे हैं। जाहिर है जर्दालू की पैदावार बढ़े कहां से। विदेश तक में इस आम की मांग है, लेकिन ब्रांडिंग के अभाव और उत्पाद को विदेश भेजने की उचित व्यवस्था न होने के कारण इसका बहुत निर्यात नहीं हो पाता। यही हाल मुजफ्फरपुर की शाही लीची, मिथिला का मखाना या फिर खगड़िया के मक्का का है। उचित बाजार और प्रोसेसिंग प्लांटों के अभाव में इन उत्पादों को उपजाने वाले किसानों को वह मूल्य नहीं मिल पाता, जिसके वह हकदार हैं। जबकि इन उत्पादों से जुड़े किसानों की उन्नति होगी तभी दूसरे किसान इस ओर रुख करेंगे। पारंपरिक खेती को छोड़कर वह अपने जिले के खास उत्पाद को बढ़ावा देने की ओर कदम उठाएंगे। हर जिले में प्रशासन को यह सुनिश्चित करना होगा कि चिह्नित उत्पाद की पैदावार बढ़े, उसे उचित बाजार मिले, उसके बाय प्रोडक्ट के लिए फूड प्रोसेसिंग प्लांट की व्यवस्था हो। यहां मुख्यमंत्री उद्यमी योजना और वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट को एक-दूसरे से जोड़ने पर विचार किया जाना चाहिए।

वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट के तहत उत्पादों को सही से बढ़ावा दिया जाए तो किसान खुशहाल होंगे।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के हित में सुप्रीम कोर्ट के फैसले ने समान नागरिक संहिता की राह आसान कर दी है?

आज का सवाल
क्या एएसआइ की रिपोर्ट के बाद मुस्लिम पक्ष को भोजशाला से अपना दावा छोड़ना चाहिए?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

सुधार की राह देखती आइबीसी

डा. अश्विनी महाजन

आइबीसी में आवश्यक बदलाव की जरूरत है, ताकि अदालतों में अनावश्यक देरी से बचा जा सके

इंसोल्वेंसी एंड बैंकरप्सी कोड यानी आइबीसी के कानूनी रूप लेने से पहले दिवालियापन से निपटने के लिए लगभग एक दर्जन कानून थे। उनमें से कुछ कानून तो 100 साल से भी अधिक पुराने थे। मोदी सरकार ने इन कानूनों के स्थान पर आइबीसी के रूप में जो पहल की, उसे एक बड़ा आर्थिक सुधार माना गया। आइबीसी के अनुसार जब कोई देनदार दिवालिया हो जाता है तो उसकी संपत्ति को लेनदार आसानी से अपने कब्जे में ले सकते हैं। यदि लेनदारों की समिति के 75 प्रतिशत या उससे अधिक सदस्य सहमत होते हैं तो ऐसी कार्रवाई के लिए आवेदन स्वीकार किए जाने की तिथि से (एनसीएलटी की मंजूरी के अधीन 90 दिनों की छूट अवधि के साथ) 180 दिनों में कार्रवाई की जा सकती है। यदि तब भी ऋण का भुगतान नहीं होता तो व्यक्ति/फर्म को दिवालिया घोषित कर दिया जाएगा। आइबीसी के पीछे यह मंशा थी कि इससे ऋण की वसूली में होने वाली देरी और उससे जुड़े नुकसान स्वतः खत्म हो जाएंगे। कारोबारी सुगमता को बढ़ावा देने के लिहाज से वैश्विक संस्थाएं भी आइबीसी को सराहती रही हैं। विश्व बैंक की 'ईज आफ डूइंग बिजनेस' रैंकिंग में भारत के 2014 में 142वें स्थान से 2019 तक 63वें स्थान तक पहुंचने में आइबीसी जैसे सुधार की अहम भूमिका मानी गई।

कारोबारी सुगमता में व्यवसाय शुरू करने और उसे बंद करने में सहूलियत जैसे दोनों पहलू शामिल होते हैं। आइबीसी ने व्यवसाय को बंद करना आसान बना दिया। हालांकि आइबीसी की घोषित अपेक्षाओं और जमीनी स्तर पर अनुभव के बीच कुछ अंतर जरूर है। आइबीसी के तहत तनावग्रस्त संपत्तियों के समाधान का प्रारंभिक बिंदु कारपोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया (सीआइआरपी) है, जो वित्तीय लेनदारों, परिचालन लेनदारों या यहां तक कि कारपोरेट द्वारा स्वयं सीआइआरपी शुरू करने के लिए एक वसूली तंत्र है। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार आइबीसी के बाद से जनवरी 2024 तक 7,058 कारपोरेट देनदारों को सीआइआरपी में लाया गया है, जिनमें से 5,057 मामले बंद कर दिए गए और 2,001 समाधान के विभिन्न चरणों में हैं। जो मामले बंद हो गए हैं, उनमें से करीब 16 प्रतिशत में सफल समाधान योजनाएं सामने आई हैं। वहीं, 19 प्रतिशत को आइबीसी की धारा 12ए के तहत वापस ले लिया गया है, जहां बड़े पैमाने पर देनदार लेनदारों के साथ पूर्ण या आंशिक निपटान के लिए सहमत हुए। जबकि 21 प्रतिशत अपील या समीक्षा पर बंद कर दिए गए और 44 प्रतिशत मामलों में परिसमापन आदेश पारित किए गए हैं। हालांकि, समाधान के विभिन्न चरणों में अटके मामलों में देरी चिंता के रूप में उभरी है। वर्ष 2020-21 और 2021-22 के दौरान मामले को स्वीकार करने में लगने वाला औसत समय क्रमशः 468 दिन और 650 दिन रहा। यह अपेक्षित समय से कहीं अधिक है।

अवधेश राजपूत

वित्तीय लेनदारों द्वारा दायर अपीलों के निपटारे में देरी का एक कारण यह है कि अक्सर अदालतें लेनदेन के वाणिज्यिक पहलुओं में उलझ जाती हैं। ये पहलू कानून से संबंधित बिंदुओं से नहीं, बल्कि प्राप्त मूल्य आदि के संदर्भ में लेनदारों से संबंधित होते हैं, जो समाधान योजना को मंजूरी देने का फैसला करने वाले लेनदारों की व्यावसायिक बुद्धि पर सवाल उठाने जैसा है। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि लेनदारों की समिति (सीओसी) की व्यावसायिक समझ पर सवाल नहीं उठाया जा सकता। एक बार जब सीओसी अंतिम निर्णय ले लेती है कि समाधान योजना को मंजूरी दी जाए या नहीं तो इसे अदालतों द्वारा समीक्षा का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए। विशेषकर उस स्थिति में जब किसी कानूनी प्रविधान का उल्लंघन न हो। एस्सार स्टील मामले में सुप्रीम कोर्ट ने पाया कि यह बहुसंख्यक लेनदारों की व्यावसायिक समझ है, जो संभावित समाधान आवेदक के साथ बातचीत के जरिये यह निर्धारित करती है कि कारपोरेट समाधान प्रक्रिया कैसे और किस तरीके से संपादित होनी है। एसआरईआइ मल्टीपल्स मामले में भी शीर्ष अदालत ने कहा कि समाधान योजना सीओसी द्वारा स्वीकृत हो जाने के बाद कोई संशोधन स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि यह आइबीसी की मूल भावना के विपरीत न हो। हालांकि वास्तविकता अलग है। वीडियोकान मामले में समाधान योजना को जून 2021 में एनसीएलटी ने अनुमोदित किया, मगर यह सुप्रीम कोर्ट में अभी भी लंबित है। एसकेएस पावर जेनरेशन मामले में सीओसी ने जून 2023 में पूर्ण सहमति के साथ सारदा एनर्जी एंड मिनरल्स की योजना को मंजूरी दी, फिर भी यह मामला अभी तक अनसुलझा है। ऐसी देरी से परिसंपत्तियों के मूल्य में कमी आने की आशंका होती है। इससे लेनदारों को नुकसान हो सकता है। इसके चलते भविष्य में संभावित खरीदारों को लुभाना भी मुश्किल हो जाता है और अंततः आइबीसी का उद्देश्य विफल हो जाएगा।

वित्तीय मामलों की स्थायी समिति की एक रिपोर्ट में कारपोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया (सीआइआरपी) में देरी के कुछ चरणों की पहचान की गई है। इसमें पहला चरण है सीआइआरपी शुरू करने के लिए आवेदन की स्वीकृति और दूसरा एनसीएलटी द्वारा समाधान योजना को मंजूरी। सीआइआरपी आरंभ करने के लिए आवेदन स्वीकार करने से जुड़ी समस्याओं की चर्चा करें तो कभी-कभी हितधारकों के बीच असहमति के कारण भी देरी होती है। कानून कहता है कि यदि सीओसी के 75 प्रतिशत या उससे अधिक सदस्य सहमत हैं तो सीओसी द्वारा समाधान की प्रक्रिया के दौरान कुछ कार्रवाई संभव है। कई बार लेनदार और अन्य हितधारक समाधान योजना पर सहमत नहीं हो पाते हैं और इससे भी प्रक्रिया में देरी हो सकती है। दिवालियापन प्रक्रिया में शामिल विभिन्न हितधारकों जैसे लेनदार, देनदार और संभावित खरीदार के बीच विवाद एवं अदालती लड़ाई से और भी देरी हो सकती है। दिवाला और दिवालियापन के मामलों में समाधान खोजने में आने वाली प्रमुख समस्याएं कर्मचारियों की कमी से लेकर प्रक्रियाओं और उनसे संबंधित कानून के बोझिल बिंदुओं की प्रणालीगत अक्षमताओं से संबंधित हैं, जिनका दुरुपयोग भ्रष्ट और विलफुल डिफाल्टर मामलों को लटकाने के लिए करते हैं। वैसे तो, सुप्रीम कोर्ट ने आइबीसी की वैधता से जुड़े कई बुनियादी सवालों का समाधान कर दिया है, लेकिन कुछ मुद्दे सामने आते ही रहते हैं। जबकि आइबीसी जैसे किसी भी महत्वपूर्ण कानून पर लगातार समझ बनाते हुए उसमें आवश्यक बदलावों की जरूरत है ताकि अदालतों में अनावश्यक देरी से बचा जा सके।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पीजीडीएवी कालेज में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

भारत में भी घुलता अमेरिका जैसा जहर

राजीव सचान

राजनीतिक बैर भाव के मामले में भारत की स्थिति कोई बहुत संतोषजनक नहीं कही जा सकती

अमेरिका में राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी और पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर प्राणघातक हमले के बाद वहां के साथ-साथ भारत में भी लोग कह रहे हैं कि लोकतंत्र और राजनीति में हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। आश्चर्यजनक रूप से इनमें वे भी हैं, जो अपने राजनीतिक विरोधियों के प्रति वैसी ही नफरत भरी और उकसावे वाली शब्दावली का प्रयोग करते रहते हैं, जैसी अमेरिका में की जाती है और जिसके चलते वहां का राजनीतिक वातावरण इतना जहरीला हो गया कि उसका घातक दुष्प्रभाव राजनीति के साथ समाज में भी दिखने लगा और संभवतः इसी के चलते ट्रंप पर हमला हुआ। एक समय था, जब भारतीय राजनीति में परस्पर विरोधी दल प्रतिस्पर्धी होते थे, लेकिन अब वे शत्रु के तौर पर देखे जाते हैं और उनकी आलोचना के नाम पर उन्हें नीचा दिखाते हैं, अपमानित करते हैं और लोकतंत्र के शत्रु के रूप में पेश करते हैं। जब नेता एक-दूसरे के प्रति बैर भाव से भरे दिखते हैं, तो उनके दल के प्रवक्ता तो टीवी चैनलों में एक-दूजे के मान-सम्मान से खुलकर खेलते ही हैं, उनके समर्थक भी सोशल नेटवर्क साइट्स पर गाली-गलौज करते हैं। इस मामले में किसी दल या उनके नेताओं और समर्थकों को अपवाद में रूप देखना कठिन है। एक-दूसरे के प्रति ओछी, नफरत भरी और भड़काऊ टिप्पणियां करना भारतीय राजनीति का स्वभाव बनता जा रहा है। इसकी झलक विभिन्न दलों के इंटरनेट मीडिया हैंडल से पोस्ट की जाने वाली सामग्री में देखी जा सकती है। कुछ दलों की सामग्री से तो ऐसा लगता है कि इन हैंडल के संचालन का दायित्व खास तौर पर ऐसे लोगों को सौंपा गया है, जो विरोधी दलों के प्रति सबसे अधिक घृणा से भरे हैं।

राजनीतिक वातावरण में जहर घोलने का काम केवल नेता ही नहीं करते। इस काम में अमेरिकी मीडिया की तरह भारतीय मीडिया का भी एक हिस्सा शामिल रहता है। वे लोग कुछ ज्यादा ही जहर घोलते हैं, जो यूट्यूब के जरिये कथित तौर पर पत्रकारिता कर रहे हैं। कुछ तो नफरत भरा केरोसिन छिड़कते दिखते हैं। लिबरल कहे जाने वालों का एक वर्ग भी यही काम करता है। ये सब राजनीतिक कारणों से जिस किसी को पसंद नहीं करते, उसके अपमान और यहां तक कि उसकी सुरक्षा के लिए संकट पैदा होने पर यदि खुशी नहीं मनाते तो विरोध में कुछ कहते भी नहीं। कभी-कभी वे खुशी और उसके साथ ही अपनी घृणा प्रकट करने में भी संकोच नहीं करते। अभी हाल में जब वाराणसी में प्रधानमंत्री मोदी के काफिले पर किसी ने चप्पल फेंक दी तो विरोधी दल के कई नेताओं और उनके समर्थकों की प्रतिक्रिया में खुशी और नफरत का भाव ही अधिक था। इसी तरह दो वर्ष पहले जब फिरोजपुर, पंजाब में प्रधानमंत्री का काफिला रोक लिया गया था और उन्हें लौटना पड़ा था तो विरोधी दल के नेताओं ने इसे सुरक्षा में चूक मानने से इन्कार कर दिया था और प्रधानमंत्री का उपहास उड़ाया था। एक्स और फेसबुक जैसे प्लेटफार्म पर तो इस घटना पर अपनी नफरत भरी खुशी जताने वालों की गिनती ही नहीं थी। ऐसी गिनती करना तब भी कठिन था, जब नवनिर्वाचित सांसद कंगना रनौत को चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर सीआइएसएफ की कांस्टेबल कुलविंदर कौर ने थप्पड़ मार दिया था। इस घटना के तत्काल बाद इस महिला कांस्टेबल को असली हीरोइन बताने वालों की एक उन्मादी भीड़ 'एक्स' पर दौड़ पड़ी थी। इस भीड़ का कुतर्क यह था कि कुलविंदर की कंगना से नाराजगी जायज थी। यह वैसा ही है, जैसे कोई किसी गोडसे समर्थक को यह कहने की सुविधा दे कि उसकी गांधीजी से नाराजगी जायज थी। यह भी न भूलें कि पंजाब में कुलविंदर के समर्थन में किस तरह मार्च निकाले गए और उसके खिलाफ कोई कार्रवाई न करने की मांग करते हुए धमकियां दी गईं।

बंगाल में हिंसा के शिकार लोगों के स्वजन ● प्रेट्र

कंगना को थप्पड़ मारे जाने पर संगीतकार विशाल डडलानी ने तो बिना किसी शर्म-संकोच नफरत की बीन बजाते हुए कुलविंदर को नौकरी देने की पेशकश कर दी थी। उन्होंने साबित किया कि गीत-संगीत जगत का भी कोई व्यक्ति किस कदर नफरत से सना हो सकता है। कंगना का थप्पड़ कांड लोकसभा चुनाव नतीजों के बाद हुआ था। इसी दौरान कोयंबटूर में डीएमके कार्यकर्ताओं ने भाजपा नेता अन्नामलाई की हार का जश्न एक बकरे पर उनकी फोटो लगाने के बाद सरे आम उसे काटकर मनाया था। इसे नफरत की राजनीति की पराकाष्ठा ही कहा जाएगा, लेकिन बंगाल में जो कुछ हो रहा है, वह शायद इसके आगे कुछ भी नहीं, क्योंकि वहां तो तृणमूल कांग्रेस समर्थकों के हाथों विरोधी दलों के समर्थक मारे-काटे जा रहे हैं, लेकिन ममता बनर्जी पर सेक्युलर नेता का तमगा लगा होने के कारण अधिकतर दल, राष्ट्रीय मीडिया और खासकर अंग्रेजी मीडिया का एक हिस्सा बंगाल की नफरत भरी राजनीतिक हिंसा की चर्चा नहीं करता। शायद उसे यह लगता है कि जब तक बंगाल में 'सेक्युलर' ताकतें मजबूत हो रही हैं, तब तक उन्हें अपने विरोधियों को कुचलने का अवसर और साथ ही छूट भी मिलनी चाहिए।

राजनीतिक बैर भाव के कारण बंगाल में इतना जहर घुल गया है कि वहां चुनाव के पहले, चुनाव के समय और चुनाव के बाद राजनीतिक हिंसा का दुष्चक्र जारी रहता है। इस लोकसभा चुनाव के बाद केंद्रीय बलों की तैनाती के बावजूद वहां राजनीतिक हिंसा का सिलसिला कायम है। देश में राजनीतिक बैर बढ़ने के बाद भी सब कुछ बिगड़ा नहीं, इसका उदाहरण हैं नवीन पटनायक। वह न केवल विरोधी दल के मुख्यमंत्री के शपथ ग्रहण समारोह में जाते हैं, बल्कि खुद को पराजित करने वाले से विनम्र भाव से मिलकर बधाई भी देते हैं। भारतीय राजनीति को ऐसे भद्र नेताओं की सख्त जरूरत है।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

गतिशीलता ही जीवन है

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। परिवर्तन के कारण ही गतिशीलता है। परिवर्तन के कारण ही विभिन्न ऋतुओं का आवागमन चलता है। स्थिर दिखने वाले पहाड़ों के भीतर भी निरंतर परमाणु की हलचल जारी रहती है। यदि यह परिवर्तन का क्रम न होता तो मनुष्य आदिमानव से वर्तमान स्थिति तक नहीं पहुंच पाता। विज्ञान का भी विकास न होता। न ही वर्तमान की तरह हमारा जीवन इतनी सुविधाओं से भरा होता। सभी में समय की गति के साथ गतिशीलता है। समय स्वयं भी निरंतर गतिशील है। जीवन के विभिन्न आयामों से हमारा परिचय कराती जन्म से मृत्यु तक शिशु, वयस्क, प्रौढ़ और वृद्ध अवस्थाएं हम सभी के साथ होने वाली प्राकृतिक परिवर्तन की अनिवार्य प्रक्रिया हैं। हमारे शरीर के भीतर भी स्थिरता नहीं है। हमारे मस्तिष्क में क्षण प्रति क्षण कुछ नए बदलाव होते रहते हैं और उनसे सामंजस्य के लिए हमें भी अपनी जीवनशैली में बदलाव लाना पड़ता है।

जीवन में परिवर्तन न हो तो नीरसता छा जाएगी। समय के साथ पहनावा या खानपान में बदलाव जीवन में ज्यादा मायने नहीं रखता, परंतु हमारे विचारों का, परंपराओं का बदलाव खुशहाल जीवन का आधार होता है। जब भी हमने परिवर्तन अस्वीकार किया तो हमें दुखी ही होना पड़ा। हम सारे परिवर्तन स्वीकार करते हैं तो उनसे लाभान्वित भी होते हैं, लेकिन फिर भी इस एक बदलाव से क्यों घबराते हैं कि सदैव सुख ही बना रहे। कभी कष्टों का आगमन न हो। भला ऐसा कभी संभव है।

अगर परिवर्तनशीलता का बोध प्रतिपल बना रहे तो जीवन के दुख समाप्त हो सकते हैं। हम अनित्य को नित्य, संयोग को शाश्वत और विजातीय को सजातीय मानकर चलते हैं। जन्म एवं मृत्यु स्थिर है, लेकिन जीवन यात्रा की स्थिति परिवर्तनशील है। उसे स्वीकारना ही होगा। जीवन में आया हुआ हर परिवर्तन हमारे भीतर एक नई ऊर्जा भर देता है। कुछ परिवर्तन हमें सफल बनाते हैं और कुछ सफल होने के तरीके बताते हैं।

डा. निर्मल जैन

पाठकनामा

pathaknama@pat .jagran.com

संसदीय गरिमा का बड़ा सवाल

'संसद की गरिमा पर संकट' शीर्षक से लिखे आलेख में हृदयनारायण दीक्षित ने विधायी संस्थाओं की कार्यप्रणाली के स्तर में आ रही गिरावट को रेखांकित किया है। यह उचित ही है, क्योंकि पूरे विश्व में भारत की प्रतिष्ठा सबसे बड़े लोकतंत्र की है और उसकी सर्वोच्च विधायी संस्था संसद में यदि जनप्रतिनिधियों का आचरण मर्यादा की कसौटी पर खरा न उतरे तो यह कितनी लज्जाजनक बात है। कुछ राज्यों की विधानसभाओं की बात करें तो वहां सदन की कार्यवाही के दौरान हिंसक गतिविधियां तक देखने को मिली हैं। लेखक महोदय ने उचित ही लिखा है कि आदर्श जनप्रतिनिधि चुनना जितना जनता के पाले में है उतना ही राजनीतिक दलों के अधिकार क्षेत्र में भी। राजनीतिक दलों को ऐसे उम्मीदवार उतारने चाहिए जो संसदीय कार्यवाही में सार्थक एवं सकारात्मक भूमिका के निर्वहन में सक्षम हों। साथ ही, चुनाव के बाद भी सदन की कार्यवाही चलाने के लिए उन्हें राजनीतिक मतभेद भुलाकर आगे आना चाहिए, लेकिन अफसोस की बात कि ऐसा कुछ हो नहीं पा रहा है। विधायी संस्थाओं में हंगामे पर जितनी जल्दी विराम लगे उतना ही अच्छा होगा। अन्यथा नई पीढ़ी की लोकतंत्र में आस्था भी ऐसे आचरण से प्रभावित होगी।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

सेहत का ध्यान

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अर्थात यूजीसी ने सभी विश्वविद्यालयों और कालेजों को यह सही निर्देश दिया कि वे अपने यहां हानिकारक खाद्य पदार्थों की बिक्री रोकें और उनके स्थान पर पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्द्धक खाद्य सामग्री उपलब्ध कराएं। यह अच्छी पहल है। खराब बात यह है कि आवश्यक नियम-कानूनों के अभाव में सेहत के लिए हानिकारक डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों की बिक्री बढ़ती चली जा रही है। प्रोसेस्ड फूड यानी प्रसंस्कृत खाद्य सामग्री का उपयोग तो तब भी स्वीकार्य है, लेकिन अल्ट्रा प्रोसेस्ड फूड का नियमित उपभोग तो एक तरह से बीमारियों को निमंत्रण है। समस्या यह है कि उनका भी चलन तेजी से बढ़ रहा है और कई बार यह देखने में भी आ रहा है कि ऐसे खाद्य पदार्थ बनाने वाले तय मानकों की उपेक्षा ही करते हैं। अपने देश में खाद्य पदार्थों के संदर्भ में जो नियम-कानून हैं, उनकी अनदेखी ही अधिक होती है। इसी का दुष्परिणाम है कि देश में मिलावटी खाद्य पदार्थों की बिक्री पर भी अंकुश नहीं लग पा रहा है। ऐसा नियामक और निगरानी संस्थाओं की सुस्ती एवं लापरवाही के चलते हो रहा है। निश्चित रूप से सेहत की चिंता करना केवल सरकारों और उनकी एजेंसियों की ही जिम्मेदारी नहीं। इसके प्रति कहीं न कहीं आम जनता को भी जागरूक होना होगा। इस सबके बावजूद इतना तो है ही कि जिन सरकारी संस्थाओं को खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी है, वे अपना काम सही से करें। ऐसी संस्थाएं दावा चाहे जो करें, सच यह है कि वे अपना काम सही तरह नहीं कर रही हैं। पहले नाश्ते और भोजन में पौष्टिक तत्वों का ध्यान रखा जाता था। आज जंक फूड को युवा ज्यादा पसंद कर रहे हैं। ये स्वाद में भले ही अच्छे लगते हों, लेकिन स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी नहीं होते हैं। हमें कोशिश करनी चाहिए कि इससे बचा जाए।

अशोक कुमार, पटना

बढ़ती आतंकी घटनाएं

आतंकी जम्मू संभाग को लगातार निशाना बना रहे हैं। डोडा के देसा क्षेत्र के जंगल में मुठभेड़ में एक अधिकारी समेत पांच जवान घायल हो गए। इसके बाद सुरक्षा बलों ने क्षेत्र में तलाशी अभियान चलाया। दूसरी ओर रियासी में तलाशी अभियान के दौरान सुरक्षा बलों ने आतंकियों के एक ठिकाने का पता लगाया और ध्वस्त कर दिया। इसके पास ही शिवाधार क्षेत्र है, जहां से कुछ दूरी पर लाल द्रमण में आतंकियों और सुरक्षाबलों के बीच मुठभेड़ हुई थी, लेकिन तीन दिनों के तलाशी अभियान के बाद भी सुरक्षाबलों को कोई कामयाबी नहीं मिली थी। आशंका जताई जा रही है कि आतंकियों का वही समूह भागकर इस क्षेत्र में है। वहीं, नौ जून को आतंकियों ने शिवखोड़ी श्रद्धालुओं की बस पर हमला किया था, जिसमें नौ लोगों की मौत व 41 घायल हो गए थे। 11 जून को कठुआ के गांव में आतंकी घुस गए थे। इसमें दो आतंकी मारे गए व एक जवान बलिदान बलिदान हुआ था। जम्मू में हाई कोर्ट परिसर में पार्किंग के पास एक पुराना ग्रेनेड बरामद हुआ था। विगत कुछ महीनों से जम्मू में आतंकी वारदातें बढ़ गई हैं। इसे सुरक्षा बलों की नाकामी नहीं कहा जाएगा, लेकिन कहीं न कहीं खुफिया तंत्र की विफलता कहा जा सकता है। जम्मू-कश्मीर में शांति बहाली की जो केंद्र सरकार ने कोशिशें कीं, उनका सकारात्मक परिणाम दिखा था। आतंकी वारदातों में काफी हद तक लगाम लगी थी, लेकिन पड़ोसी की नापाक हरकतों की वजह से फिर से आतंकी घटनाएं बढ़ी हैं।

राकेश शर्मा, बक्सर

X पोस्ट

मुकेश सहनी के पिता की जिस निर्ममता से हत्या हुई, उसके बाद यही कहना पड़ेगा कि बिहार में कुछ नहीं बदला। कुमार अंशुमन@anshumanscribe

तमिलनाडु में बसपा प्रमुख के बाद अब एनटीके के एक नेता की हत्या हो गई। हालांकि ऐसे मामलों पर जैसा बवाल आपको भाजपा शासित राज्यों में सुनने को मिलेगा, वैसा गैर-भाजपा शासित राज्यों से गायब दिखेगा। बालियान@Baliyan_x

यूपी की योगी सरकार में कुछ खामियां हो सकती हैं, लेकिन जिस तरह भाजपा के ही कुछ नेता मुख्यमंत्री के खिलाफ एजेंडा चला रहे हैं, वह पार्टी के लिए बिल्कुल भी सही नहीं कहा जा सकता। योगी जी 2022 में अपना चुनाव पूर्ण बहुमत से जीत चुके हैं, जबकि 2024 के लोकसभा चुनाव में जो कुछ हुआ उसके लिए संगठन की जिम्मेदारी को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

अमित यादव@amityadavamit

जम्मू का घटनाक्रम शुभ संकेत नहीं। ताजा घुसपैठ के साथ ही यह भी दिख रहा है कि जम्मू में आतंकियों की सक्रियता कहीं ज्यादा बढ़ रही है। जिस तादाद में हमारे जवान बलिदान हो रहे हैं, वह कतई स्वीकार्य नहीं। स्थितियां निश्चित रूप से बदलनी होंगी। राहुल पंडिता@rahulpandita

जनपथ

सरकारी स्कूल में शिक्षक पूरे पांच,
होनी चहिए साथियो अब रिजल्ट की जांच।
अब रिजल्ट की जांच न होती तनिक पढ़ाई,
गुरुजन हों नाराज अगर हो तनिक कड़ाई।
सुविधाएं सरकार दे रही उनको सारी,
पर रिजल्ट स्कूल न दे पाते सरकारी।

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 25 अंक 96

****

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
बुधवार 17 जुलाई, 2024

दैनिक जागरण
शब्द विष भी हैं और अमृत भी

बेलगाम होता आतंक

डोडा जिले में एक आतंकी हमले में कैप्टन समेत सेना के चार जवानों और जम्मू कश्मीर के एक पुलिसकर्मी का बलिदान इसलिए कहीं अधिक आघातकारी है, क्योंकि कुछ ही दिनों पहले कठुआ में एक सैन्य अफसर सहित पांच जवान आतंकियों का निशाना बन गए थे। इसके पहले भी जम्मू संभाग में ही सेना के कई जवान आतंकियों से लोहा लेते हुए अपना सर्वोच्च बलिदान दे चुके हैं। यह बेहद चिंतित करने वाला घटनाक्रम है कि पिछले कुछ समय से कश्मीर घाटी के साथ-साथ जम्मू संभाग में भी आतंकियों की गतिविधियां बढ़ती जा रही हैं। हाल की कुछ घटनाओं से तो यह भी लगता है कि आतंकियों ने जम्मू संभाग को अपनी गतिविधियों का प्रमुख केंद्र बना लिया है। एक ऐसे समय जब जम्मू कश्मीर में विधानसभा चुनाव कराने की तैयारी हो रही है, तब आतंकियों का बेलगाम नजर आने लगना गंभीर चिंता का विषय बनना चाहिए। यह ठीक नहीं कि पाकिस्तान प्रशिक्षित आतंकी न केवल घुसपैठ करने में समर्थ हैं, बल्कि अपनी गतिविधियों को अंजाम देने और इस क्रम में सेना को निशाना बनाने में भी। ऐसा क्यों हो रहा है, इसकी तह तक जाने की जरूरत है। आखिर क्या कारण है कि प्रधानमंत्री मोदी के तीसरी बार सत्ता संभालने के बाद से जम्मू कश्मीर में आतंकी हमलों में तेजी आती दिख रही है? आतंकी जिस तरह अपनी रणनीति बदलकर सुरक्षा बलों को कहीं अधिक क्षति पहुंचाने में समर्थ दिखने लगे हैं, वह किसी बड़ी साजिश का संकेत है।

भारत सरकार को एक ओर जहां सीमा पार से होने वाली आतंकियों की घुसपैठ पर प्रभावी नियंत्रण करना होगा, वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान को नए सिरे से सबक भी सिखाना होगा। यह इसलिए अनिवार्य हो गया है, क्योंकि पिछले कुछ समय में आतंकी हमलों में बलिदान होने वाले सैनिकों की संख्या कहीं अधिक बढ़ी है। एक आंकड़े के अनुसार पिछले तीन वर्ष में करीब 50 जवानों को अपना बलिदान देना पड़ा है। यह बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं। आतंक को करारा जवाब केवल तभी नहीं दिया जाना चाहिए, जब एक साथ बड़ी संख्या में सुरक्षा बलों के जवानों को बलिदान देना पड़े। वास्तव में हमारे एक भी सैनिक का बलिदान व्यर्थ नहीं जाना चाहिए। डोडा की घटना के बाद यह जो कहा जा रहा है कि सैनिकों के बलिदान का बदला लिया जाएगा, उसे न केवल पूरा करके दिखाया जाना चाहिए, बल्कि आतंकियों, उनके आकाओं और उन्हें सहयोग-समर्थन देने वालों पर ऐसा करारा प्रहार किया जाना चाहिए, जिससे वे अपनी हरकतों से हमेशा के लिए बाज आएं। पाकिस्तान भले ही आर्थिक संकट और राजनीतिक अस्थिरता से जूझ रहा हो, लेकिन वह जम्मू कश्मीर में पहले की तरह ही आतंकवाद को बढ़ावा देने में लगा हुआ है। चूंकि इसकी भरी-पूरी आशंका है कि चीन उसे उकसाने में लगा हुआ होगा, इसलिए भारत को कहीं अधिक सतर्क रहना होगा।

चिंताजनक तस्वीर

उत्तराखंड में सड़क दुर्घटनाओं का आंकड़ा चिंता में डाल रहा है, विशेषकर रफ्तार के शौकीन अपने साथ ही दूसरों की जिंदगी भी खतरे में डाल रहे हैं। इस वर्ष जनवरी से मई के दरम्यान हुई दुर्घटनाओं के आंकड़े इस सच को सामने ला रहे हैं। इन पांच महीनों में प्रदेश में सात सौ से अधिक दुर्घटनाएं हुईं, जिनमें 413 लोगों की जान चली गई। ज्यादातर लोगों ने तेज रफ्तार वाहन चलाने के कारण हुई दुर्घटनाओं में जान गंवाई। हरिद्वार में सर्वाधिक 113, ऊधम सिंह नगर में 103 और देहरादून में 89 की मौत इस वजह से हुई। पर्वतीय क्षेत्रों में भी स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। यहां होने वाली दुर्घटनाओं में ज्यादातर में तेज रफ्तार ही मुख्य कारण सामने आता रहा है। पिछले दिनों नोएडा से तुंगनाथ पर्यटन के लिए आ रहे लोगों का वाहन भी तेज रफ्तार के कारण गहरी खाई में गिर गया था, इसमें पंद्रह पर्यटकों की जान चली गई थी। यह कहने में संकोच नहीं कि दुर्घटनाओं के आंकड़े सोचने को मजबूर कर रहे हैं कि आखिर कैसे इस स्थिति को संभाला जाए। जहां तक यातायात नियमों की बात है, इसका पालन करना प्रत्येक नागरिक की जिम्मेदारी है। उन्हें इस प्रवृत्ति का त्याग करना होगा कि जब कोई टोका-टोकी करेगा, तभी नियमों को मानेंगे। यह समझ विकसित करनी होगी कि नियम तोड़ने से वाहन चालक और राहगीर दोनों की जिंदगी पर खतरा बढ़ जाता है। चिंताजनक यह कि रफ्तार के रोमांच का शौक युवाओं में ज्यादा दिखता है और दुर्घटनाओं में जान गंवाने वालों में यही सबसे अधिक हैं। ऐसे में अभिभावकों की भी जिम्मेदारी है कि वह बच्चों को यातायात के नियमों के प्रति सजग करें। यही नहीं, शिक्षण संस्थाओं में बच्चों को यातायात नियमों की जानकारी देने के लिए नियमित अंतराल पर कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। यह जिम्मेदारी पुलिस और प्रशासन को उठानी चाहिए।

सुधार की राह देखती आइबीसी

डा. अश्विनी महाजन

आइबीसी में आवश्यक बदलाव की जरूरत है, ताकि अदालतों में अनावश्यक देरी से बचा जा सके

अवधेश राजपूत

इंसोल्वेंसी एंड बैंकरप्सी कोड यानी आइबीसी के कानूनी रूप लेने से पहले दिवालियापन से निपटने के लिए लगभग एक दर्जन कानून थे। उनमें से कुछ कानून तो 100 साल से भी अधिक पुराने थे। मोदी सरकार ने इन कानूनों के स्थान पर आइबीसी के रूप में जो पहल की, उसे एक बड़ा आर्थिक सुधार माना गया। आइबीसी के अनुसार जब कोई देनदार दिवालिया हो जाता है तो उसकी संपत्ति को लेनदार आसानी से अपने कब्जे में ले सकते हैं। यदि लेनदारों की समिति के 75 प्रतिशत या उससे अधिक सदस्य सहमत होते हैं तो ऐसी कार्रवाई के लिए आवेदन स्वीकार किए जाने की तिथि से (एनसीएलटी की मंजूरी के अधीन 90 दिनों की छूट अवधि के साथ) 180 दिनों में कार्रवाई की जा सकती है। यदि तब भी ऋण का भुगतान नहीं होता तो व्यक्ति/फर्म को दिवालिया घोषित कर दिया जाएगा। आइबीसी के पीछे यह मंशा थी कि इससे ऋण की वसूली में होने वाली देरी और उससे जुड़े नुकसान स्वतः खत्म हो जाएंगे। कारोबारी सुगमता को बढ़ावा देने के लिहाज से वैश्विक संस्थाएं भी आइबीसी को सराहती रही हैं। विश्व बैंक की 'ईज आफ डूइंग बिजनेस' रैंकिंग में भारत के 2014 में 142वें स्थान से 2019 तक 63वें स्थान तक पहुंचने में आइबीसी जैसे सुधार की अहम भूमिका मानी गई।

कारोबारी सुगमता में व्यवसाय शुरू करने और उसे बंद करने में सहूलियत जैसे दोनों पहलू शामिल होते हैं। आइबीसी ने व्यवसाय को बंद करना आसान बना दिया। हालांकि आइबीसी की घोषित अपेक्षाओं और जमीनी स्तर पर अनुभव के बीच कुछ अंतर जरूर है। आइबीसी के तहत तनावग्रस्त संपत्तियों के समाधान का प्रारंभिक बिंदु कारपोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया है, जो वित्तीय लेनदारों, परिचालन लेनदारों या यहां तक कि कारपोरेट द्वारा स्वयं सीआइआरपी शुरू करने के लिए एक वसूली तंत्र है। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार आइबीसी के बाद से जनवरी 2024 तक 7,058 कारपोरेट देनदारों को सीआइआरपी में लाया गया है, जिनमें से 5,057 मामले बंद कर दिए गए और 2,001 समाधान के विभिन्न चरणों में हैं। जो मामले बंद हो गए हैं, उनमें से करीब 16 प्रतिशत में सफल समाधान योजनाएं सामने आई हैं। वहीं, 19 प्रतिशत को आइबीसी की धारा 12ए के तहत वापस ले लिया गया है, जहां बड़े पैमाने पर देनदार लेनदारों के साथ पूर्ण या आंशिक निपटान के लिए सहमत हुए। जबकि 21 प्रतिशत अपील या समीक्षा पर बंद कर दिए गए और 44 प्रतिशत मामलों में परिसमापन आदेश पारित किए गए हैं। समाधान के विभिन्न चरणों में अटके मामलों में देरी चिंता के रूप में उभरी है। 2020-21 और 2021-22 के दौरान मामले को स्वीकार करने में लगने वाला औसत समय क्रमशः 468 और 650 दिन रहा। यह अपेक्षित समय से कहीं अधिक है।

वित्तीय लेनदारों द्वारा दायर अपीलों के निपटारे में देरी का एक कारण यह है कि अक्सर अदालतें लेनदेन के वाणिज्यिक पहलुओं में उलझ जाती हैं। ये पहलू कानून से संबंधित बिंदुओं से नहीं, बल्कि प्राप्त मूल्य आदि के संदर्भ में लेनदारों से संबंधित होते हैं, जो समाधान योजना को मंजूरी देने का फैसला करने वाले लेनदारों की व्यावसायिक बुद्धि पर सवाल उठाने जैसा है। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि लेनदारों की समिति (सीओसी) की व्यावसायिक समझ पर सवाल नहीं उठाया जा सकता। एक बार जब सीओसी अंतिम निर्णय ले लेती है कि समाधान योजना को मंजूरी दी जाए या नहीं तो इसे अदालतों द्वारा समीक्षा का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए। विशेषकर उस स्थिति में जब किसी कानूनी प्रविधान का उल्लंघन न हो। एस्सार स्टील मामले में सुप्रीम कोर्ट ने पाया कि यह बहुसंख्यक लेनदारों की व्यावसायिक समझ है, जो संभावित समाधान आवेदक के साथ बातचीत के जरिये यह निर्धारित करती है कि कारपोरेट समाधान प्रक्रिया कैसे और किस तरीके से संपादित होनी है। एसआरईआइ मल्टीपल्स मामले में भी शीर्ष अदालत ने कहा कि समाधान योजना सीओसी द्वारा स्वीकृत हो जाने के बाद कोई संशोधन स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि यह आइबीसी की मूल भावना के विपरीत न हो। हालांकि वास्तविकता अलग है। वीडियोकान मामले में समाधान योजना को जून 2021 में एनसीएलटी ने अनुमोदित किया, मगर यह सुप्रीम कोर्ट में अभी लंबित है। एसकेएस पावर जेनरेशन मामले में सीओसी ने जून 2023 में पूर्ण सहमति के साथ सारदा एनर्जी एंड मिनरल्स की योजना को मंजूरी दी, फिर भी यह मामला अभी तक अनसुलझा है। ऐसी देरी से परिसंपत्तियों के मूल्य में कमी आने की आशंका होती है।

वित्तीय मामलों की स्थायी समिति की एक रिपोर्ट में कारपोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया (सीआइआरपी) में देरी के कुछ चरणों की पहचान की गई है। इसमें पहला चरण है सीआइआरपी शुरू करने के लिए आवेदन की स्वीकृति और दूसरा एनसीएलटी द्वारा समाधान योजना को मंजूरी। सीआइआरपी आरंभ करने के लिए आवेदन स्वीकार करने से जुड़ी समस्याओं की चर्चा करें तो कभी-कभी हितधारकों के बीच असहमति के कारण भी देरी होती है। कानून कहता है कि यदि सीओसी के 75 प्रतिशत या उससे अधिक सदस्य सहमत हैं तो सीओसी द्वारा समाधान की प्रक्रिया के दौरान कुछ कार्रवाई संभव है। कई बार लेनदार और अन्य हितधारक समाधान योजना पर सहमत नहीं हो पाते हैं और इससे भी प्रक्रिया में देरी हो सकती है। दिवालियापन प्रक्रिया में शामिल विभिन्न हितधारकों जैसे लेनदार, देनदार और संभावित खरीदार के बीच विवाद एवं अदालती लड़ाई से और भी देरी हो सकती है। दिवाला और दिवालियापन के मामलों में समाधान खोजने में आने वाली समस्याएं कर्मचारियों की कमी से लेकर प्रक्रियाओं और उनसे संबंधित कानून के बोझिल बिंदुओं की प्रणालीगत अक्षमताओं से संबंधित हैं, जिनका दुरुपयोग भ्रष्ट और विलफुल डिफाल्टर मामलों को लटकाने के लिए करते हैं। वैसे सुप्रीम कोर्ट ने आइबीसी की वैधता से जुड़े कई सवालों का समाधान कर दिया है, लेकिन कुछ मुद्दे सामने आते ही रहते हैं। जबकि आइबीसी जैसे किसी भी महत्वपूर्ण कानून पर लगातार समझ बनाते हुए उसमें आवश्यक बदलावों की जरूरत है ताकि अदालतों में अनावश्यक देरी से बचा जा सके।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पीजीडीएवी कालेज में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

भारत में भी घुलता अमेरिका जैसा जहर

राजीव सचान

राजनीतिक बैर भाव के मामले में भारत की स्थिति कोई बहुत संतोषजनक नहीं कही जा सकती

अमेरिका में राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी और पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर प्राणघातक हमले के बाद वहां के साथ-साथ भारत में भी लोग कह रहे हैं कि लोकतंत्र और राजनीति में हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। आश्चर्यजनक रूप से इनमें वे भी हैं, जो अपने राजनीतिक विरोधियों के प्रति वैसी ही नफरत भरी और उकसावे वाली शब्दावली का प्रयोग करते रहते हैं, जैसी अमेरिका में की जाती है और जिसके चलते वहां का राजनीतिक वातावरण इतना जहरीला हो गया कि उसका घातक दुष्प्रभाव राजनीति के साथ समाज में भी दिखने लगा और संभवतः इसी के चलते ट्रंप पर हमला हुआ। एक समय था, जब भारतीय राजनीति में परस्पर विरोधी दल प्रतिस्पर्धी होते थे, लेकिन अब वे शत्रु के तौर पर देखे जाते हैं और उनकी आलोचना के नाम पर उन्हें नीचा दिखाते हैं, अपमानित करते हैं और लोकतंत्र के शत्रु के रूप में पेश करते हैं। जब नेता एक-दूसरे के प्रति बैर भाव से भरे दिखते हैं, तो उनके दल के प्रवक्ता तो टीवी चैनलों में एक-दूजे के मान-सम्मान से खुलकर खेलते ही हैं, उनके समर्थक भी सोशल नेटवर्क साइट्स पर गाली-गलौज करते हैं। इस मामले में किसी दल या उनके नेताओं और समर्थकों को अपवाद में रूप देखना कठिन है। एक-दूसरे के प्रति ओछी, नफरत भरी और भड़काऊ टिप्पणियां करना भारतीय राजनीति का स्वभाव बनता जा रहा है। इसकी झलक विभिन्न दलों के इंटरनेट मीडिया हैंडल से पोस्ट की जाने वाली सामग्री में देखी जा सकती है। कुछ दलों की सामग्री से तो ऐसा लगता है कि इन हैंडल के संचालन का दायित्व खास तौर पर ऐसे लोगों को सौंपा गया है, जो विरोधी दलों के प्रति सबसे अधिक घृणा से भरे हैं।

राजनीतिक वातावरण में जहर घोलने का काम केवल नेता ही नहीं करते। इस काम में अमेरिकी मीडिया की तरह भारतीय मीडिया का भी एक हिस्सा शामिल रहता है। वे लोग कुछ ज्यादा ही जहर घोलते हैं, जो यूट्यूब के जरिये कथित तौर पर पत्रकारिता कर रहे हैं। कुछ तो नफरत भरा केरोसिन छिड़कते दिखते हैं। लिबरल कहे जाने वालों का एक वर्ग भी यही काम करता है। ये सब राजनीतिक कारणों से जिस किसी को पसंद नहीं करते, उसके अपमान और यहां तक कि उसकी सुरक्षा के लिए संकट पैदा होने पर यदि खुशी नहीं मनाते तो विरोध में कुछ कहते भी नहीं। कभी-कभी वे खुशी और उसके साथ ही अपनी घृणा प्रकट करने में भी संकोच नहीं करते। अभी हाल में जब वाराणसी में प्रधानमंत्री मोदी के काफिले पर किसी ने चप्पल फेंक दी तो विरोधी दल के कई नेताओं और उनके समर्थकों की प्रतिक्रिया में खुशी और नफरत का भाव ही अधिक था। इसी तरह दो वर्ष पहले जब फिरोजपुर, पंजाब में प्रधानमंत्री का काफिला रोक लिया गया था और उन्हें लौटना पड़ा था तो विरोधी दल के नेताओं ने इसे सुरक्षा में चूक मानने से इन्कार कर दिया था और प्रधानमंत्री का उपहास उड़ाया था। एक्स और फेसबुक जैसे प्लेटफार्म पर तो इस घटना पर अपनी नफरत भरी खुशी जताने वालों की गिनती ही नहीं थी। ऐसी गिनती करना तब भी कठिन था, जब नवनिर्वाचित सांसद कंगना रनौत को चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर सीआइएसएफ की कांस्टेबल कुलविंदर कौर ने थप्पड़ मार दिया था। इस घटना के तत्काल बाद इस महिला कांस्टेबल को असली हीरोइन बताने वालों की एक उन्मादी भीड़ 'एक्स' पर दौड़ पड़ी थी। इस भीड़ का कुतर्क यह था कि कुलविंदर की कंगना से नाराजगी जायज थी। यह वैसा ही है, जैसे कोई किसी गोडसे समर्थक को यह कहने की सुविधा दे कि उसकी गांधीजी से नाराजगी जायज थी। यह भी न भूलें कि पंजाब में कुलविंदर के समर्थन में किस तरह मार्च निकाले गए और उसके खिलाफ कोई कार्रवाई न करने की मांग करते हुए धमकियां दी गईं।

बंगाल में हिंसा के शिकार लोगों के स्वजन। प्रेट्र

कंगना को थप्पड़ मारे जाने पर संगीतकार विशाल डडलानी ने तो बिना किसी शर्म-संकोच नफरत की बीन बजाते हुए कुलविंदर को नौकरी देने की पेशकश कर दी थी। उन्होंने साबित किया कि गीत-संगीत जगत का भी कोई व्यक्ति किस कदर नफरत से सना हो सकता है। कंगना का थप्पड़ कांड लोकसभा चुनाव नतीजों के बाद हुआ था। इसी दौरान कोयंबटूर में डीएमके कार्यकर्ताओं ने भाजपा नेता अन्नामलाई की हार का जश्न एक बकरे पर उनकी फोटो लगाने के बाद सरे आम उसे काटकर मनाया था। इसे नफरत की राजनीति की पराकाष्ठा ही कहा जाएगा, लेकिन बंगाल में जो कुछ हो रहा है, वह शायद इसके आगे कुछ भी नहीं, क्योंकि वहां तो तृणमूल कांग्रेस समर्थकों के हाथों विरोधी दलों के समर्थक मारे-काटे जा रहे हैं, लेकिन ममता बनर्जी पर सेक्युलर नेता का तमगा लगा होने के कारण अधिकतर दल, राष्ट्रीय मीडिया और खासकर अंग्रेजी मीडिया का एक हिस्सा बंगाल की नफरत भरी राजनीतिक हिंसा की चर्चा नहीं करता। शायद उसे यह लगता है कि जब तक बंगाल में 'सेक्युलर' ताकतें मजबूत हो रही हैं, तब तक उन्हें अपने विरोधियों को कुचलने का अवसर और साथ ही छूट भी मिलनी चाहिए।

राजनीतिक बैर भाव के कारण बंगाल में इतना जहर घुल गया है कि वहां चुनाव के पहले, चुनाव के समय और चुनाव के बाद हिंसा का दुष्चक्र जारी रहता है। इस लोकसभा चुनाव के बाद केंद्रीय बलों की तैनाती के बावजूद वहां राजनीतिक हिंसा का सिलसिला कायम है। देश में राजनीतिक बैर बढ़ने के बाद भी सब कुछ बिगड़ा नहीं, इसका उदाहरण हैं नवीन पटनायक। वह न केवल विरोधी दल के मुख्यमंत्री के शपथ ग्रहण समारोह में जाते हैं, बल्कि खुद को पराजित करने वाले से विनम्र भाव से मिलकर बधाई भी देते हैं। भारतीय राजनीति को ऐसे भद्र नेताओं की सख्त जरूरत है।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

गतिशीलता ही जीवन है

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। परिवर्तन के कारण ही गतिशीलता है। परिवर्तन के कारण ही विभिन्न ऋतुओं का आवागमन चलता है। स्थिर दिखने वाले पहाड़ों के भीतर भी निरंतर परमाणु की हलचल जारी रहती है। यदि यह परिवर्तन का क्रम न होता तो मनुष्य आदिमानव से वर्तमान स्थिति तक नहीं पहुंच पाता। विज्ञान का भी विकास न होता। न ही वर्तमान की तरह हमारा जीवन इतनी सुविधाओं से भरा होता। सभी में समय की गति के साथ गतिशीलता है। समय स्वयं भी निरंतर गतिशील है। जीवन के विभिन्न आयामों से हमारा परिचय कराती जन्म से मृत्यु तक शिशु, वयस्क, प्रौढ़ और वृद्ध अवस्थाएं हम सभी के साथ होने वाली प्राकृतिक परिवर्तन की अनिवार्य प्रक्रिया हैं। हमारे शरीर के भीतर भी स्थिरता नहीं है। हमारे मस्तिष्क में क्षण प्रति क्षण कुछ नए बदलाव होते रहते हैं और उनसे सामंजस्य के लिए हमें भी अपनी जीवनशैली में बदलाव लाना पड़ता है।

जीवन में परिवर्तन न हो तो नीरसता छा जाएगी। समय के साथ पहनावा या खानपान में बदलाव जीवन में ज्यादा मायने नहीं रखता, परंतु हमारे विचारों का, परंपराओं का बदलाव खुशहाल जीवन का आधार होता है। जब भी हमने परिवर्तन अस्वीकार किया तो हमें दुखी ही होना पड़ा। हम सारे परिवर्तन स्वीकार करते हैं तो उनसे लाभान्वित भी होते हैं, लेकिन फिर भी इस एक बदलाव से क्यों घबराते हैं कि सदैव सुख ही बना रहे।

अगर परिवर्तनशीलता का बोध प्रतिपल बना रहे तो जीवन के दुख समाप्त हो सकते हैं। हम अनित्य को नित्य, संयोग को शाश्वत और विजातीय को सजातीय मानकर चलते हैं। जन्म एवं मृत्यु स्थिर है, लेकिन जीवन यात्रा की स्थिति परिवर्तनशील है। उसे स्वीकारना ही होगा। जीवन में आया हुआ हर परिवर्तन हमारे भीतर एक नई ऊर्जा भर देता है। कुछ परिवर्तन हमें सफल बनाते हैं और कुछ सफल होने के तरीके बताते हैं।

डा. निर्मल जैन

बढ़ता तापमान, पिघलते हिमनद

सुधीर कुमार

बढ़ता समुद्री जलस्तर तटीय शहरों और छोटे द्वीपीय देशों के लिए गंभीर खतरा बन सकता है

यूनेस्को ने चेतावनी दी है कि अगर वैश्विक तापमान को नियंत्रित करने की दिशा में ठोस प्रयास नहीं किए गए, तो 2050 तक यूनेस्को द्वारा चिह्नित विश्व धरोहर स्थलों में से एक तिहाई स्थलों में स्थित हिमनद गायब हो सकते हैं। गौरतलब है कि यूनेस्को द्वारा संरक्षित 50 विश्व धरोहर स्थल साढ़े 18 हजार से अधिक हिमनद के घर हैं, जो पृथ्वी के कुल हिमनदों का 10 प्रतिशत हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है, ताकि इन महत्वपूर्ण धरोहर स्थलों की सुरक्षा की जा सके। हिमनदों के पिघलने के गंभीर दुष्परिणाम हो सकते हैं, जिनमें समुद्री जल स्तर में वृद्धि, तटीय कटाव में वृद्धि, बाढ़ और जलप्लावन का खतरा और जैव विविधता का ह्रास शामिल हैं।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व मौसम विज्ञान संगठन के अनुसार, जलवायु परिवर्तन और कार्बन डाईआक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसों की सांद्रता बढ़ने से पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है, जिसके परिणामस्वरूप हिमनद लगातार पिघल रहे हैं। 1970 के बाद से विश्व के ग्लेशियरों की औसत मोटाई लगभग 30 मीटर कम हो गई है। विज्ञानियों के अनुसार, हिमनदों के पिघलने की शुरुआत 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में शुरू हुई औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप हुई। औद्योगिक क्रांति के बाद कल-कारखानों की संख्या बढ़ने से कार्बन डाईआक्साइड और अन्य ग्रीनहाउस गैसों का बेतहाशा उत्सर्जन हुआ, जिससे 1900 के बाद से दुनियाभर के हिमनदों में पिघलन शुरू हो गई। अगर कार्बन उत्सर्जन की मौजूदा दर में कटौती नहीं की गई, तो 2040 तक आर्कटिक क्षेत्र गर्मियों में बर्फ रहित हो सकता है। वैश्विक तापमान में चार डिग्री सेल्सियस की वृद्धि दुनिया के लगभग सभी हिमनदों को खत्म कर देगी। वहीं तापमान में दो से तीन डिग्री सेल्सियस की वृद्धि से ग्रीनलैंड की बर्फ की चादरों का पिघलना शुरू हो सकता है। बढ़ता समुद्री जलस्तर तटीय शहरों और छोटे द्वीपीय देशों के लिए गंभीर खतरा बन सकता है। समुद्र स्तर में एक मीटर की वृद्धि से मालदीव का 80 प्रतिशत हिस्सा जलमग्न हो सकता है, जिससे वहां के निवासियों को विस्थापन का सामना करना पड़ेगा। समुद्र स्तर में वृद्धि से बांग्लादेश, भारत और इंडोनेशिया के 2.4 करोड़ लोग अपने घरों से विस्थापित हो जाएंगे।

बहरहाल, हिमनदों के पिघलने से न केवल समुद्र स्तर में वृद्धि होती है, बल्कि यह वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र, मानव समाज और आर्थिक स्थिरता पर भी गहरा प्रभाव डालता है। इस समस्या से निपटने के लिए वैश्विक स्तर पर समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है, जिसमें कार्बन उत्सर्जन को कम करने, टिकाऊ विकास को बढ़ावा देने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति संवेदनशील समुदायों को सहायता प्रदान करने के उपाय शामिल हैं।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

मेलबाक्स

संसदीय गरिमा का बड़ा सवाल

'संसद की गरिमा पर संकट' शीर्षक से लिखे आलेख में हृदयनारायण दीक्षित ने विधायी संस्थाओं की कार्यप्रणाली के स्तर में आ रही गिरावट को रेखांकित किया है। यह उचित ही है, क्योंकि पूरे विश्व में भारत की प्रतिष्ठा सबसे बड़े लोकतंत्र की है और उसकी सर्वोच्च विधायी संस्था संसद में यदि जनप्रतिनिधियों का आचरण मर्यादा की कसौटी पर खरा न उतरे तो यह कितनी लज्जाजनक बात है। कुछ राज्यों की विधानसभाओं की बात करें तो वहां सदन की कार्यवाही के दौरान हिंसक गतिविधियां तक देखने को मिली हैं। लेखक महोदय ने उचित ही लिखा है कि आदर्श जनप्रतिनिधि चुनना जितना जनता के पाले में है उतना ही राजनीतिक दलों के अधिकार क्षेत्र में भी। राजनीतिक दलों को ऐसे उम्मीदवार उतारने चाहिए जो संसदीय कार्यवाही में सार्थक एवं सकारात्मक भूमिका के निर्वहन में सक्षम हों। साथ ही, चुनाव के बाद भी सदन की कार्यवाही चलाने के लिए उन्हें राजनीतिक मतभेद भुलाकर आगे आना चाहिए, लेकिन अफसोस की बात कि ऐसा कुछ हो नहीं पा रहा है। विधायी संस्थाओं में हंगामे पर जितनी जल्दी विराम लगे उतना ही अच्छा होगा। अन्यथा नई पीढ़ी की लोकतंत्र में आस्था भी ऐसे आचरण से प्रभावित होगी।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

शिक्षा के मायने

आज के तेजी से बदलते समय में शिक्षा प्रणाली को नवाचार के माध्यम से सुधारना बेहद जरूरी हो गया है। शिक्षा का उद्देश्य केवल पाठ्यक्रम को पढ़ाना नहीं होना चाहिए, बल्कि छात्रों में रचनात्मकता, समस्या समाधान की क्षमता और स्वतंत्र सोच को विकसित करना भी शामिल होना चाहिए। इस संदर्भ में अल्बर्ट आइंस्टीन का कहना था, ''शिक्षा का असली उद्देश्य यह है कि मस्तिष्क को सोचने के लिए प्रशिक्षित किया जाए, न कि तथ्यों को याद रखने के लिए।'' इसलिए, शिक्षा प्रणाली में नवीनतम तकनीकों और पद्धतियों को शामिल करना आवश्यक है। शिक्षकों को भी नियमित रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वे छात्रों को सबसे बेहतर तरीके से शिक्षा प्रदान कर सकें। शिक्षा विनम्रता देती है, विनम्रता से योग्यता आती है, योग्यता से धन मिलता है और धन से धर्म और फिर सुख प्राप्त होता है। इस दृष्टिकोण से, शिक्षकों का ज्ञान और प्रशिक्षण ही छात्रों को श्रेष्ठ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षा में नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए डिजिटल शिक्षा, प्रायोगिक शिक्षा, शिक्षकों का नियमित प्रशिक्षण और अनुसंधान व विकास को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। महात्मा गांधी का कथन है, ''जीवन की सबसे बड़ी शिक्षा यह है कि कोई व्यक्ति अपने प्रयास से क्या बना सकता है।'' अंततः शिक्षा में नवाचार केवल छात्रों के भविष्य के लिए ही नहीं, बल्कि समाज के समग्र विकास के लिए भी आवश्यक है। आधुनिक तकनीकों और पद्धतियों को अपनाकर हम एक मजबूत, साक्षर और उन्नत समाज की नींव रख सकते हैं। शिक्षा प्रणाली में सुधार और नवाचार से ही हम एक प्रगतिशील और सशक्त समाज का निर्माण कर सकते हैं, जो हर चुनौती का सामना कर सके।

अवनीश कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

संविधान के अनुरूप करें शासन

'संविधान हत्या दिवस' मनाने का निर्णय बिल्कुल एक राजनीतिक फैसला है। मगर यह सोचना भी जरूरी है कि आखिर सरकार इस तरह के निर्णय लेने के लिए बाध्य क्यों हुई? दरअसल गत चुनाव में विपक्ष ने जोरदार तरीके से यह आरोप लगाने शुरू कर दिए कि अगर भाजपा को 400 से अधिक सीटें आईं तो वह संविधान बदल देगी। आरक्षण समाप्त कर दिए जाएंगे। जिससे भाजपा को काफी नुकसान हुआ। जवाब में मोदी सरकार ने आपातकालीन ज्यादतियों सहित अन्य मौकों पर कांग्रेस के संविधान विरोधी कदमों को याद दिलाने के लिए संविधान हत्या दिवस मनाने का फैसला कर डाला। खैर, इससे आने वाले शासकों में संविधान के अनुरूप शासन करने का ध्यान हमेशा रहेगा। इसका शायद यह फायदा हो।

मुकेश कुमार मनन, पटना

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

दहशत के खिलाफ

जम्मू-कश्मीर के डोडा जिले में सोमवार रात आतंकियों से मुठभेड़ में एक कैप्टन समेत चार जवानों की शहादत ने फिर से यह उजागर किया है कि आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई जितनी मुश्किल है, उतनी ही आवश्यक भी है। पिछले करीब चालीस दिनों में 12 जवान और 10 आम नागरिक विभिन्न आतंकी वारदातों व मुठभेड़ों की भेंट चढ़ चुके हैं। साफ है, घाटी में सुरक्षा बलों की सक्रियता से बौखलाए आतंकी अपने दुस्साहस से अब राज्य के उस खित्ते में दहशत पैदा करना चाहते हैं, जिसे हालिया वर्षों में अपेक्षाकृत शांत माना जाता रहा है। डोडा भी इसी जम्मू संभाग का एक जिला है। अभी चंद रोज पहले कठुआ में फौजी वाहन पर आतंकी हमले में पांच फौजी शहीद हुए थे। हालांकि, घने जंगलों का फायदा उठाकर आतंकी तब बच निकले थे। इस बार सर्च ऑपरेशन जारी है। सुरक्षाकर्मियों की परेशानी यह है कि जम्मू खित्ते के रिहाइशी इलाकों में आबादी काफी घनी है और वन क्षेत्र इतने सघन हैं कि उनकी हवाई निगरानी मुमकिन नहीं। ऐसे में, दहशतगर्दों की पहचान करने और उन्हें घेरने में काफी कठिनाई होती है।

डोडा वारदात की जिम्मेदारी लेने वाले 'कश्मीर टाइगर्स' जैसे आतंकी संगठनों की ताजा बौखलाहट की एक बड़ी वजह जम्मू-कश्मीर में राजनीतिक प्रक्रिया की बहाली को लेकर बढ़ी सरगर्मी है। राज्य में लोकप्रिय सरकार के गठन के लिए अगले चंद महीनों में ही विधानसभा चुनाव होने वाले हैं। ऐसे में, आतंकियों की बेचैनी समझी जा सकती है कि जिस तरह लोकसभा चुनाव में घाटी में लोग मतदान केंद्रों पर उमड़ पड़े और दशकों पुराना रिकॉर्ड टूटा, अगर विधानसभा चुनाव में लोगों का उत्साह और बढ़ा, तो जिन 'स्लीपर सेल्स' की बदौलत वे दहशत का अपना पूरा कारोबार चलाते हैं, वे भी मुख्यधारा के प्रति आकर्षित होकर, उनके खिलाफ हो सकते हैं और फिर उनके सफाये में बहुत वक्त नहीं लगेगा। इसलिए उन्होंने घाटी के बजाय जम्मू संभाग में अपनी सक्रियता बढ़ाई है, ताकि लोकतांत्रिक प्रक्रिया को बाधित किया जा सके और सीमा पार के आकाओं से मदद हासिल करने का सिलसिला जारी रहे।

घाटी में सुरक्षा बलों की सक्रियता से बौखलाए आतंकी अब राज्य के उस खित्ते में दहशत पैदा करना चाहते हैं, जिसे हालिया वर्षों में अपेक्षाकृत शांत माना जाता रहा है।

मगर आतंकियों के खिलाफ सुरक्षा बलों की लड़ाई के इस अहम मोड़ पर जम्मू-कश्मीर की पूर्व मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती ने राज्य पुलिस को जिस तरह से घेरने की कोशिश की है, उसकी सराहना नहीं की जा सकती। महबूबा सूबे के शीर्ष पुलिस अधिकारी पर जैसे आरोप लगा रही हैं, उससे पहले से ही विभाजित समाज में न सिर्फ ध्रुवीकरण और गहराएगा, बल्कि सुरक्षा बलों के मनोबल पर भी इसका बुरा असर पड़ेगा। पुलिस के आला अधिकारी यदि यह कह रहे हैं कि घाटी के नागरिक समाज में पाकिस्तानी 'घुसपैठ' को बढ़ावा देने में कतिपय राजनीतिक दलों का रुख भी जिम्मेदार रहा है, तो क्या यह आधारहीन है? विडंबना यह है कि किसी भी राज्य को आतंक-मुक्त करने के लिए राजनीतिक वर्गों और प्रशासनिक तंत्र में बेहतर तालमेल पहली जरूरत है। जम्मू-कश्मीर के राजनीतिक दलों को इसको जानने के लिए दूर देखने की भी आवश्यकता नहीं है। पंजाब में आतंकवाद के सफाये में कामयाबी इसलिए मिल सकी, क्योंकि वहां के तमाम राजनीतिक दलों ने एक सुर में आतंकियों का विरोध किया। मगर उस राजनीतिक एकजुटता की कमी जम्मू-कश्मीर में हमेशा दिखी। इसलिए समय की मांग है कि राजनीतिक पार्टियों और पुलिस-प्रशासन से जुड़े लोग पहले एकजुटता दिखाएं, वरना आतंकी उनके सार्वजनिक मतभेदों का लाभ उठाते रहेंगे।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 17 जुलाई, 1949

कम्यूनिस्ट विरोधी मोर्चा

राष्ट्रवादी चीन के एक समय के भाग्य-विधाता मार्शल च्यांग काई शेक, जो कुछ महीनों से अज्ञातवास का सेवन कर रहे थे, पुनः प्रकाश में आ रहे हैं। हाल ही में वह दो दिन के लिए फिलिपाइन गये थे। उन्होंने फिलिपाइन की ग्रीष्मकालीन राजधानी में वहां के राष्ट्रपति क्वीरिनो से मुलाकात की। उनकी बातचीत का मुख्य उद्देश्य यह था कि प्रशान्त क्षेत्र में कम्यूनिस्ट विरोधी मोर्चा संगठित किया जाये। वार्तालाप के अन्त में जो वक्तव्य निकले हैं, उनसे पता चलता है कि दोनों राजनीतिज्ञों में इस बात पर पूर्ण मतैक्य है कि प्रशान्त क्षेत्र में कम्यूनिस्टों की बढ़ती हुई शक्ति को रोकने के लिए एक कम्यूनिस्ट विरोधी संघ की स्थापना की जाये। इस संघ में प्रशान्त क्षेत्र के कौन-कौन से देश शामिल होंगे, यह अनिश्चित है। फिलिपाइन की चर्चा को हम बहुत ही प्रारम्भिक चर्चा मान सकते हैं। उसमें एक विचार का बीज बोया गया है। यह बीज अनुकूल जलवायु प्राप्त करके एक बड़े पेड़ का रूप भी धारण कर सकता है और यह भी सम्भव हो सकता है कि वह सड़ गलकर बिलकुल नष्ट हो जाये।

इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य पहली बात तो यह है कि मार्शल च्यांग चीन की राष्ट्रवादी सरकार के प्रतिनिधि के रूप में फिलिपाइन नहीं गये थे। उन्होंने उस पार्टी के नेता की हैसियत से फिलिपाइन की चर्चा में भाग लिया था, जो चीन की मौजूदा राष्ट्रीय सरकार का नियंत्रण करती है। मार्शल च्यांग चाहें तो आज भी चीन की राष्ट्रवादी सरकार का नेतृत्व अपने हाथ में ले सकते हैं। वे प्रत्यक्ष नेतृत्व ग्रहण न करें, तो भी राष्ट्रीय सरकार से अपनी योजना मंजूर करा सकते हैं। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या चीन की राष्ट्रीय सरकार में कम्यूनिस्टों के हाथों बुरी तरह पराजित होने के बाद इतनी शक्ति शेष रह गई है कि वह किसी स्वीकृत योजना को कार्यान्वित कर सके? कम्यूनिस्ट राष्ट्रीय सरकार को चीन के अधिकतर भाग से खदेड़ चुके हैं और केवल दक्षिण का कुछ भाग राष्ट्रीय सरकार के अधिकार में रह गया है। इस हिस्से में भी कम्यूनिस्ट गुरिल्ला दस्ते सक्रिय हैं और राष्ट्रीय सरकार के शासन को असम्भव बना रहे हैं।... चीन की राष्ट्रीय सरकार लंगड़ी हो चुकी है और जिस मोर्चे का एक पांव ही लंगड़ा हो, वह कितना मजबूत होगा, यह आसानी से समझा जा सकता है।

चढ़ती कीमतों को नीचे लाने के उपाय

यहां स्कैन करें

अरुण कुमार | वरिष्ठ अर्थशास्त्री

महंगाई से गरीबों की थाली कहीं ज्यादा बिगड़ जाती है, तो यह अमीरों की बचत पर चोट करती है, वहीं एक तबका ऐसा भी है, जिसके लिए महंगाई कारोबारी लाभ लेकर आती है।

पिछले महीने यूरोपीय संघ ने यह कहते हुए ऋण दरों में कटौती की थी कि उसने महंगाई को काफी हद तक काबू में कर लिया है। ऐसा करने वाली वह दूसरी प्रमुख वैश्विक अर्थव्यवस्था थी, क्योंकि इससे पहले कनाडा ने भी दरों में कमी करने का एलान किया था। अब अमेरिका ने भी लगातार तीन महीने तक महंगाई कम होने के कारण यह संकेत दिया है कि जल्द ही फेडरल रिजर्व ब्याज दरों में कटौती कर सकता है। जाहिर है, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनेक देश अपने यहां दरों में कमी कर रहे हैं, जिससे लगता है कि महंगाई को नियंत्रित करने में वे सफल साबित हो रहे हैं। इसकी वजह यह हो सकती है कि कोरोना महामारी, यूक्रेन संकट और फिर इजरायल-हमास जंग की वजह से वैश्विक आपूर्ति शृंखला पर जो नकारात्मक असर पड़ा था, उससे पार पाने में उन्हें सफलता मिलने लगी है। मगर भारत में हालात चुनौतीपूर्ण नजर आते हैं। यहां फल-सब्जियां ही नहीं, खाद्यान्न के दाम भी चढ़ रहे हैं।

अक्सर देखा गया है कि गर्मी बढ़ने या बारिश ज्यादा होने से फलों और सब्जियों की कीमतें बढ़ जाती हैं, क्योंकि इनके भंडारण की समुचित व्यवस्था अपने देश में नहीं है। मगर क्या वजह है कि गेहूं, चावल जैसे खाद्यान्न की कीमतें भी चढ़ रही हैं, जबकि इनका संग्रह किया जा सकता है और हमारे पास इनका पर्याप्त भंडार भी है? वह भी तब, जब इनकी रिकॉर्ड पैदावार के दावे किए गए थे और हमने निर्यात पर भी रोक लगा दी थी? साफ है, भारत में विशेषकर खाने-पीने की वस्तुओं का प्रबंधन काफी कमजोर है, और यह भी कि शायद रिकॉर्ड उत्पादन नहीं हुआ है। कुछ विशेषज्ञ कहते भी हैं कि उत्पादन के आकलन का मौजूदा तरीका गलत है, जिसमें सुधार की सख्त जरूरत है।

अभी महंगाई दो तरीकों से मापी जाती है- एक, थोक मूल्यों के आधार पर, और दूसरा, उपभोक्ता मूल्यों के आधार पर। थोक मूल्य मूलतः उत्पादकों से जुड़ा है। किसानों, फैक्टरियों या उत्पादन करने वाली

इकाइयों आदि के थोक उत्पाद इसमें शामिल होते हैं। महामारी के बाद भारत में थोक मूल्य सूचकांक में काफी बढ़ोतरी देखी गई थी। एक समय तो यह 15 प्रतिशत की रफ्तार से बढ़ रहा था। मगर इसकी तुलना में उपभोक्ता मूल्य उतना नहीं बढ़ा और वह सात-आठ प्रतिशत पर बना रहा। इसके बाद थोक मूल्य नीचे लुढ़का, लेकिन उपभोक्ता मूल्य पर आधारित महंगाई में बहुत कमी नहीं आई। रिजर्व बैंक द्वारा तय चार प्रतिशत (दो प्रतिशत ऊपर या नीचे) के लक्ष्य के करीब आने में भी इसे खासा वक्त लगा। आज भी यह पांच प्रतिशत से अधिक की रफ्तार से बढ़ रही है।

सवाल है, महंगाई आम आदमी को किस तरह परेशान करती है? दरअसल, हर तबके के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का अर्थ अलग-अलग होता है। ऐसा इसलिए, क्योंकि हर वर्ग के लिए उपभोग की प्राथमिकता अलग-अलग होती है। मसलन, गरीबों के बजट में खाने-पीने की वस्तुओं की हिस्सेदारी 40 फीसदी तक होती है, जबकि अमीर तबके में यह बमुश्किल पांच प्रतिशत। इसी कारण जब खाद्यान्न के दाम बढ़ते हैं, तो गरीबों की थाली कहीं ज्यादा बिगड़ जाती है। इसके बनिस्बत, महंगाई अमीरों की बचत पर चोट करती है, क्योंकि वे अपनी बचत घटाकर ही महंगाई से लड़ते हैं, वहीं एक तबका व्यापारी वर्ग भी है, जिसके लिए महंगाई कारोबारी लाभ लेकर आती है।

ऐसे में, जरूरी है कि महंगाई से पार पाने के लिए पर्याप्त उपाय किए जाएं। इस दिशा में फूड मैनेजमेंट, यानी खाद्य प्रबंधन काफी अहम साबित हो सकता है। गेहूं, चावल जैसे उत्पादों के दाम इसलिए फल अथवा सब्जियों की तरह तेजी से ऊपर-नीचे नहीं होते, क्योंकि इनकी सरकारी खरीद होती है और एक नियत मात्रा में इनका भंडारण किया जाता है। हमें बाकी उत्पादों के लिए भी यही रणनीति अपनानी चाहिए। विशेषकर टमाटर, आलू अथवा प्याज को कोल्ड स्टोरेज में रखा जा सकता है। बाकी सब्जियों अथवा फलों को खाद्य प्रसंस्करण के जरिये सहेजने की रणनीति बनाई जानी चाहिए। मौजूदा हालात में खाद्य प्रसंस्करण और खाद्य भंडारण को बढ़ावा देना काफी जरूरी है। मगर दिक्कत यह है कि इसमें पर्याप्त मात्रा में निवेश नहीं हो रहा। निवेशकों की चिंता है कि यदि वे भंडारण करते हैं और बाद में भंडारण की सीमा कम कर दी गई, तो उन्हें औने-पौने दाम पर उत्पाद बेचने होंगे, जिससे उनको घाटा हो सकता है। लिहाजा, सरकार को एक स्थायी नीति बनानी चाहिए।

उसे न सिर्फ इन उत्पादों की खरीद करनी चाहिए, बल्कि कारोबारियों को यह भरोसा भी देना चाहिए कि दाम ज्यादा ऊपर-नीचे नहीं होंगे। इससे कोल्ड स्टोरेज करने वाले लोगों या खाद्य प्रसंस्करण करने वाली कंपनियों को एक मुकम्मल संदेश जाएगा। वैसे भी, महंगाई बढ़ने पर सरकार दखल देने में देर नहीं करती। मसलन, टमाटर-प्याज के दाम बढ़ने पर वह खुद सस्ते दामों में इनको बेचने लगती है। लिहाजा, जब हर साल तात्कालिक तौर पर यही नीति अपनाई जा रही है, तो इसे स्थायी जामा क्यों नहीं पहना दिया जाता?

विकसित देशों में यह नीति काफी कारगर रही है। वहां खाद्य प्रसंस्करण करने वाली कंपनियां उत्पादन अधिक होने पर प्रबंधन की जिम्मेदारी संभाल लेती हैं। वहां बड़ी जोत वाली कॉरपोरेट कंपनियां भी अधिक हैं, जो सुनिश्चित करती हैं कि कैसे उत्पादों का भंडारण किया जाए? जबकि, भारत में छोटे किसानों की संख्या अधिक है, जिनके पास भंडारण की उचित सुविधा नहीं है। इसलिए जो काम विदेश में कंपनियां करती हैं, उसे हमारी सरकारों को करना होगा। फसलों की सरकारी खरीद के साथ-साथ उनका भंडारण भी किया जाना चाहिए। बेशक, इस काम में प्रशासनिक चुनौतियां भी आड़े आएंगी, लेकिन ऐसा करना जरूरी है।

महंगाई कम करने में रिजर्व बैंक भी कुछ हद तक अपनी भूमिका निभा सकता है। वह मांग को नियंत्रित करके महंगाई कम कर सकता है, लेकिन जहां आपूर्ति शृंखला में गड़बड़ी है, वहां वह खाली हाथ रह सकता है। कराधान में भी सुधार आवश्यक है और हमें अप्रत्यक्ष कर को कम करना चाहिए। अभी कर-जीडीपी अनुपात 17 फीसदी के करीब है, जिसमें प्रत्यक्ष कर की हिस्सेदारी 11 प्रतिशत और अप्रत्यक्ष कर की 6 प्रतिशत है। ऐसे में, यदि हम लग्जरी उत्पादों पर ही अप्रत्यक्ष कर लगाएं, तो गरीबों को काफी राहत मिल सकेगी। मतलब साफ है कि महंगाई नियंत्रित करने में रिजर्व बैंक की उतनी भूमिका नहीं है, जितनी सरकार की है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

दुनिया में सच्चाई और अच्छाई की जीत का महीना मोहर्रम

यहां स्कैन करें

एम जे वारसी | प्रोफेसर, अलीगढ़ मुस्लिम विवि

मोहर्रम अधर्म पर धर्म की, असत्य पर सत्य की तथा अन्याय पर न्याय की जीत को दर्शाता है। यह इस्लामी नव वर्ष के प्रारंभ का प्रतीक है। मोहर्रम इस्लामी कैलेंडर का प्रथम माह होने के साथ-साथ इस्लामी मान्यताओं के अनुसार अत्यंत पवित्र महीना भी माना जाता है। मोहर्रम माह के दसवें दिन को आशूरा कहा जाता है। इसी दिन सन 680 ईस्वी में इराक के कर्बला में इमाम हुसैन और यजीद के मध्य निर्णायक युद्ध हुआ था, जिसमें इमाम हुसैन ने धर्म की रक्षा हेतु अपने प्राण न्योछावर कर दिए थे। इस प्रकार, आशूरा का दिन धार्मिक और ऐतिहासिक महत्व का दिन हो गया।

विभिन्न प्रांतों, संस्कृतियों एवं समुदायों के शोकाकुल लोग अलग-अलग ढंग से इस दिन को याद करते हैं। उस दिन इमाम हुसैन और उनके परिजनों व साथियों पर हुए अत्याचारों को बयान करते हुए लोग नौहे पढ़ते हैं और शोक संतप्त होकर उन दुखों को अनुभूत करने का प्रयास करते हैं। कुछ लोग इस दिन उपवास भी रखते हैं। इस दौरान विभिन्न क्षेत्रों में इमाम हुसैन के त्याग और बलिदान की याद में जुलूस, ताजिए आदि निकाले जाते हैं तथा अलग-अलग रूप में शोक व्यक्त किया जाता है। इनमें मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्मों के लोग भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते हैं तथा इमाम हुसैन की शहादत को याद करते हैं।

यह अवसर हमें मानवता, न्याय व समता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करने के साथ ही प्रेम व क्षमा को स्वयं में समाहित करने की सीख देता है।

वस्तुतः शोक की यह अवधि मोहर्रम के महीने की पहली से दसवीं तारीख तक चलती है, जिसमें पैगम्बर मोहम्मद (स अ) के नवासे इमाम हुसैन, उनके परिजन और अनुयायियों के साथ हुई क्रूरता, अत्याचार को मार्मिक ढंग से याद किया जाता है। यजीद की शक्तिशाली सेना के सामने इमाम हुसैन व उनके साथियों ने घुटने नहीं टेके तथा निर्भीकतापूर्वक सामना किया। वे भले ही संख्या-बल की दृष्टि से शत्रु की विशाल सेना के समक्ष कमजोर थे, परंतु उनका आत्मबल, दृढ़-संकल्प और नैतिक विश्वास अपने उच्चतम स्तर पर था। उनकी जीवटता और सत्य के मार्ग पर चलते हुए आत्मोत्सर्ग की प्रबल भावना उनमें अद्भुत शक्ति का संचार करती रही। यही कारण है कि अकल्पनीय कठिनाइयों, अभावों का सामना करते हुए भी इमाम हुसैन व उनके साथी सत्य, निष्ठा व धर्म के मार्ग पर अडिग रहे और पूरी दुनिया में मिसाल बन गए।

मोहर्रम के दसवें दिन, कर्बला की युद्ध भूमि अंततः इमाम हुसैन, उनके परिजन और साथियों के अदम्य साहस व बलिदान की साक्षी बनी, जिन्हें सत्ता के मद में चूर शासक द्वारा निर्दयतापूर्वक मार दिया गया। यजीद के दमनकारी शासन के विरुद्ध इमाम हुसैन त्याग, समर्पण और न्याय के मूल्यों को अपार धैर्य के साथ थामे हुए तब तक डटे रहे, जब तक उनके शरीर में प्राण शेष रहे। तमाम प्रतिकूल हालात को झेलते हुए भी उन्होंने धर्म और न्याय के मूल्यों की रक्षा के लिए अपनी कुर्बानी दे दी। युद्ध में हारकर भी इमाम हुसैन इतिहास में न केवल अमर हो गए, अपितु उनका संघर्षशील जीवन आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा-स्रोत बन गया। वह आज भी समाज को आदर्शों पर जीने के लिए प्रेरित करते हैं। स्पष्ट है, कर्बला की हृदय विदारक घटना आज भी दुनिया में अन्याय, शोषण, दमन और अत्याचार के विरुद्ध सतत संघर्ष का आह्वान करती है।

मोहर्रम सभी समुदायों के बीच शांति, सद्भाव और एकता का संदेश प्रसारित करता है। यह अवसर हमें मानवता, न्याय और समता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित तो करता ही है, साथ ही, समस्त मानव जाति के लिए प्रेम, क्षमा और विवेक के मूल्यों को स्वयं में समाहित करने की सीख भी देता है। यह केवल मुसलमानों के प्रति ही नहीं, अपितु बिना किसी भेदभाव के सभी के प्रति दया, उदारता और करुणा की भावना स्वयं में विकसित करने की प्रेरणा देता है। वर्तमान संदर्भ में विचार करें, तो मोहर्रम से जुड़ी ऐतिहासिक घटनाओं और इमाम हुसैन के जीवन-संघर्षों से हम यह प्रेरणा लेते हैं कि हर तरह के अन्याय व उत्पीड़न के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना हममें निरंतर बनी रहे। साथ ही, विश्व भर के अलग-अलग क्षेत्रों में चल रहे संघर्षों व युद्धों पर विराम लगाने के प्रयास सफल हों, जिससे वैश्विक शांति और सौहार्द को बढ़ावा मिल सके और यह दुनिया थोड़ी अधिक मानवीय और करुणामय बन सके।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

दिखावे की चिंता छोड़िए

यह सोचकर कि 'लोग क्या कहेंगे' किसी काम को करने से पहले मन दुविधा में पड़ जाता है। एक अज्ञात चिंता हमें सताने लगती है। गृहस्थ जीवन में यह बहुत आम चिंता है। इसीलिए किसी काम को करने से पहले, कुछ कहने से पहले लोग बहुत ज्यादा सोचते हैं। इस बारे में अधिक सोचना दिखावा को बल देता है, जो क्षमता से अधिक प्रदर्शन के लिए उकसाता है। समझने वाली बात है कि बाहरी प्रदर्शन में अपनी ऊर्जा नष्ट करने से क्या फायदा होगा? यदि भीतर सब कुछ ठीक रहेगा, तो बाहर दिखेगा ही दिखेगा। इतना समझ जाएं, तो दिखावे की कोई चिंता नहीं रह जाएगी।

मानव जीवन का लक्ष्य है प्रेम। प्रेम से ही श्रद्धा की उत्पत्ति होती है और इसी से सत्य से साक्षात्कार होता है। अंततः हमारा लक्ष्य इस सत्य तक पहुंचना होता है। जो सत्य का व्रती है और तपोनिष्ठ है, उसे कष्ट से डरना नहीं चाहिए। यह स्थापित बात है कि जो कष्ट से डरते हैं, उनसे बड़ा काम नहीं हो पाता। जीवन के हर स्तर पर उनकी हार होती है। कभी सोचा है, मनुष्य की हार क्यों होती है? पता लगाने पर मालूम होगा कि उनमें सत्यनिष्ठा और तपस्या नहीं थी। जहां सत्यनिष्ठा और तपस्या होती है, वहां विजय अवश्य होती है।

जीवन में किसी भी मनुष्य की तब तक विजय नहीं हो सकती और सत्य से उसका परिचय नहीं हो सकता, जब तक कि वह बुद्धिमान नहीं होता और सत्य का आश्रय नहीं लेता। बुद्धिमान और बौद्धिक लोग सत्य का आश्रय लेते हैं और उनके बारे में लोग कहते हैं कि उनकी विजय हुई है। दरअसल, सत्य मनुष्य को परमात्मा के पास पहुंचाता है। सत्य का अपना घर कहां है? परमात्मा में ही उसका अपना घर है। अगर परमात्मा में ही सत्य का घर है, तो जो उसके साथ हैं, उनकी विजय होगी। फिर भला वे क्यों डरेंगे? इस दुनिया की किसी भी चीज से वे नहीं डरेंगे।

अब जिस विद्यार्थी ने अच्छी तरह से तैयारी कर रखी है, वह परीक्षा से नहीं डरेगा और जिसने तैयारी नहीं की है, वह यहां-वहां आरती करता रहेगा। परमात्मा से यही गुहार लगाएगा कि प्रभु, अगर आपने पास नहीं कराया, तो आपके इस भक्त की बेइज्जती होगी। इसे अपने जूनियर साथियों के साथ पढ़ना होगा। तुम अगर ठीक से पढ़ते हो, तो वैसा नहीं होगा। ठीक इसी तरह, जो सत्यनिष्ठ हैं, वे न घबराएंगे, न अधीर होंगे, न ही डरेंगे।

जो सत्य का व्रती है, उसे कष्ट से डरना नहीं चाहिए। जो कष्ट से डरते हैं, उनसे बड़ा काम नहीं हो पाता। तपस्या, प्रेम और सत्यनिष्ठा के मार्ग पर चलते हुए ही हम जीवन के लक्ष्यों को पा सकते हैं।

सत्यनिष्ठा, तपस्या और प्रेम के मार्ग पर चलते हुए ही हम जीवन के सच्चे लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं और किसी भी प्रकार की चिंता या डर से मुक्त हो सकते हैं। सत्य और तपस्या के मार्ग पर चलने वाले लोगों को सफलता और शांति अवश्य प्राप्त होती है।

श्री श्री आनंदमूर्ति

शेखर कपूर | फिल्म निर्देशक

भारत में अनौपचारिक शिक्षा क्षेत्र लगभग 20 अरब डॉलर का है। इसके ज्यादातर संस्थानों की विश्वसनीयता संदिग्ध है। जाहिर है, एआई इस क्षेत्र को कड़ी चोट पहुंचाने जा रही है।

अनुलोम-विलोम

ट्रंप पर हमला

ट्रंप को रोकने के लिए सभी एक हुए

पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर हुए हमले की दुनिया भर के नेताओं ने निंदा की है। उन पर गोली एक बीस वर्षीय शूटर ने चलाई थी, जिसे मौके पर ही मार गिराया गया। वास्तव में, यह चुनाव ट्रंप बनाम बाइडन नहीं है, बल्कि इस चुनाव में एक तरफ डोनाल्ड ट्रंप हैं, तो दूसरी तरफ जो बाइडन, अमेरिका का अधिकांश मीडिया संस्थान, ज्यादातर अश्वेत लोग, नामचीन एक्टर, गायक-गायिका और एलजीबीटी समुदाय है। जाहिर है, इस चुनाव में ट्रंप को खुद को बचाकर भी रखना है और वोट भी जुटाने हैं। वहां एक निष्पक्ष दक्षिणपंथी के खिलाफ सारी विचारधाराएं एक हो चुकी हैं। आमतौर पर अमेरिका में किसी की भी सरकार आए, उसकी विदेश नीति में बड़ा बदलाव नहीं होता, लेकिन अमेरिका को एलजीबीटी एजेंडे, श्वेत-अश्वेत संघर्ष और अवैध घुसपैठियों से बचाना है, तो आज की तारीख में डोनाल्ड ट्रंप का राष्ट्रपति बनना जरूरी है। किसी भी अमेरिकी राष्ट्रपति ने उतना काम नहीं किया, जितना डोनाल्ड ट्रंप ने अपने पिछले कार्यकाल में किया था। फिलहाल, यह अच्छी बात रही कि गोली लगने के बाद भी ट्रंप डिगे नहीं हैं और पूरी सक्रियता से मैदान में डटे हुए हैं।

कुलदीप सिंह, टिप्पणीकार

दुर्भाग्यपूर्ण हमला

पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर हुआ हमला हर लिहाज से दुर्भाग्यपूर्ण कहा जाएगा। गनीमत है कि इस हमले में उनको ज्यादा नुकसान नहीं हुआ और वह सुरक्षित हैं। अमेरिकी खुफिया सेवा की गिनती विश्व में पहले नंबर पर होती है, लेकिन ऐसा लगता है कि यह अब उतनी अनुशासित नहीं रही, इसीलिए समय रहते वह ट्रंप पर हमला नहीं रोक सकी। क्या होता, यदि वह गोली ट्रंप के माथे पर लगती? बहरहाल, बैलेट से होने वाले चुनावों को बुलेट द्वारा बाधित करने के प्रयास विश्व के हरेक कोने में होने लगे हैं। अभी कुछ समय पहले ही जापान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री की चुनावी भाषण के दौरान हत्या कर दी गई थी। भारत में भी राजनीतिक हत्याएं होती रही हैं। जाहिर है, अब समूचे विश्व को मिलकर आतंकवाद को जड़ से मिटाना चाहिए। बंदूक के जोर पर लोकतांत्रिक व्यवस्था को कमजोर करने का यह प्रयास अक्षम्य है। संबंधित जांच एजेंसी को तत्परता दिखानी चाहिए और जो भी षड्यंत्र में शामिल हो, उसे सख्त सजा दिलानी चाहिए। नामचीन हस्तियों की सुरक्षा व्यवस्था भी चाक-चौबंद की जानी चाहिए, ताकि कानून-व्यवस्था को चुनौती देने का साहस कोई कर न सके। असामाजिक तत्वों का सफाया जरूरी है।

सुभाष बुड़ावन वाला, टिप्पणीकार

हमलावर तो खुद उन्हीं की पार्टी का

निस्संदेह, शनिवार देर शाम अमेरिकी राज्य पेंसिल्वेनिया में पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर किए गए हमले की जितनी निंदा की जाए, वह कम है। मगर इस निंदा के साथ-साथ हमें यह भी देखना चाहिए कि आखिर उन पर यह हमला क्यों किया गया? दरअसल, राजनेता अब खुद को सर्वेसर्वा समझने लगे हैं। अमेरिका ही नहीं, दुनिया भर में राजनेता अपना वर्चस्व बनाने के लिए लालायित रहते हैं। वे खुद को कानून से ऊपर तो समझते ही हैं, साथ ही शासक बनकर जनता पर राज करने की मंशा भी पाले रखते हैं। मानो, आज भी राजशाही चल रही हो, जबकि आदर्श लोकतांत्रिक राजनीति में राजशाही प्रवृत्ति की कोई जगह नहीं। इसलिए, ट्रंप पर जिस 20 वर्षीय किशोर ने हमला किया था, उसकी मनोस्थिति को समझा जाना चाहिए। जिस बात ने सभी को चिंतित कर दिया था, वह यह थी कि कहीं हमलावर डेमोक्रेटिक पार्टी का समर्थक न निकल जाए। इससे स्वाभाविक ही राजनीतिक माहौल काफी खराब हो जाता। मगर ऐसा नहीं हुआ, बल्कि खबरों में यही बताया जा रहा है कि वह रिपब्लिकन पार्टी का ही पंजीकृत वोटर था और डोनाल्ड ट्रंप की कथित विभाजनकारी नीतियों का पुरजोर विरोधी था। इसी कारण उसने खुद से पूर्व राष्ट्रपति की हत्या करने की सोची।

वैसे भी, अमेरिकी समाज में बंदूक संस्कृति की जड़ें काफी गहरी हैं। जिस देश में प्रतिवर्ष दस हजार लोग बंदूक की ऐसी ही गोलीबारी में मारे जाते हों और जहां आबादी से ज्यादा बंदूक हो, तो वहां इस तरह की घटनाएं आम बात हैं। वैसे भी, रिपब्लिकन पार्टी को अपनी उस नीति की पुनर्समीक्षा करनी चाहिए, जिसके तहत वह हमेशा से बंदूक लॉबी, व्यापारी व इसके निर्माताओं के साथ खड़ी रही है। अलबत्ता, जो बाइडन सरकार ने इसके विरुद्ध प्रयास भी किया और संसद में कानून बनाकर इस संस्कृति को खत्म करने की कोशिश की, लेकिन यह ट्रंप की ही रिपब्लिकन पार्टी थी, जिसने उसका पुरजोर विरोध किया।

बहरहाल, अमेरिकी समाज में भी आहिस्ता-आहिस्ता अपने राजनेताओं के प्रति गुस्सा पनपने लगा है। यह गुस्सा खासतौर से डोनाल्ड ट्रंप के प्रति अधिक है, क्योंकि उन्होंने खुलेआम संसद भवन पर आक्रमण के लिए लोगों को भड़काया था, मगर बाद में सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें राहत दे दी। इससे ऐसा ही लगा कि पूर्व राष्ट्रपति को कानून से ऊपर समझा जा रहा है। साफ है, आपने जो बोया है, वही काट रहे हैं। उदारवाद आज के वक्त की जरूरत है। अगर कोई अतिवादी सोच रखता है, तो उसे इसका नुकसान उठाना पड़ सकता है। डोनाल्ड ट्रंप पर चुनावी सभा में चली गोली का यही संदेश है।

जंग बहादुर सिंह, टिप्पणीकार

निर्यात में वृद्धि

वर्तमान वित्त वर्ष 2024-25 की पहली तिमाही (अप्रैल-जून) में भारत का निर्यात (वस्तु एवं सेवाएं) 200 अरब डॉलर से अधिक रहा है. इस उत्साहजनक आंकड़े के आधार पर अनुमान लगाया जा रहा है कि इस वर्ष कुल निर्यात 800 अरब डॉलर से अधिक हो सकता है. किसी भी तिमाही में सर्वाधिक निर्यात का यह एक नया रिकॉर्ड है. वाणिज्य मंत्रालय द्वारा जारी प्रारंभिक सूचनाओं के अनुसार पिछले वित्त वर्ष की पहली तिमाही में 184.5 अरब डॉलर का निर्यात हुआ था. हालांकि अंतरराष्ट्रीय बाजार पर भू-राजनीतिक तनावों एवं संघर्षों का साया बना हुआ है तथा बड़ी लड़ाइयों की आशंका भी बढ़ती जा रही है, पर वैश्विक आर्थिक वृद्धि को लेकर आशाएं भी हैं तथा मुद्रास्फीति में भी सुधार के संकेत हैं. भारतीय वस्तुओं और सेवाओं के बढ़ते निर्यात से यह स्पष्ट रूप से इंगित होता है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इनकी गुणवत्ता में भरोसा बढ़ रहा है.

बढ़ते निर्यात से यह स्पष्ट रूप से इंगित होता है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इनकी गुणवत्ता में भरोसा बढ़ रहा है.

सबसे अधिक गति से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था होने के नाते वैश्विक आर्थिक वृद्धि में भी भारत का योगदान बढ़ता जा रहा है. निर्यात में निरंतर वृद्धि के पीछे कई कारक हैं. हाल के वर्षों में हुए व्यापक आर्थिक सुधारों ने कारोबारी सुगमता को बढ़ाया है. निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए प्रखंड स्तर तक नेटवर्क स्थापित किये गये हैं. गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए कंपनियों को प्रोत्साहित किया जा रहा है तथा विदेशी साझेदारी को बढ़ावा दिया जा रहा है. भारत ने महत्वपूर्ण 20 देशों को चिह्नित किया है तथा छह ऐसे बड़े क्षेत्रों को चुना गया है, जिससे लक्ष्य-आधारित निर्यात बढ़ सके. इन क्षेत्रों में इंजीनियरिंग वस्तुएं, वस्त्र, इलेक्ट्रॉनिक्स, दवाएं, रसायन एवं प्लास्टिक तथा कृषि एवं संबंधित उत्पाद. इन क्षेत्रों में भारत का पहले से व्यापक अनुभव है तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन की संभावनाएं भी हैं. वैश्विक उत्पादन शृंखला में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने को भारत ने प्राथमिकताओं में शामिल किया है. निर्यात और आयात के बीच परस्पर संबंध होता है. उत्पादन बढ़ाने के लिए बाहर से विभिन्न चीजों को खरीदना पड़ता है. घरेलू उत्पादन बढ़ने का एक नतीजा आमदनी बढ़ने के रूप में भी सामने आता है, जिससे मांग बढ़ती है. इसकी पूर्ति के लिए भी आयात आवश्यक हो जाता है. इस वित्त वर्ष की पहली तिमाही में 172.23 अरब डॉलर की वस्तुओं का आयात हुआ, जबकि बीते वर्ष इसी अवधि में यह आंकड़ा 160.05 अरब डॉलर रहा था. हम अपनी ऊर्जा जरूरतों, तकनीक, दवा उद्योग के लिए आवश्यक वस्तुओं, कंप्यूटर, उन्नत इलेक्ट्रॉनिक एवं डिजिटल उपकरण, खाद्य तेल, दाल आदि के लिए आयात पर निर्भर हैं. आशा है कि निकट भविष्य में उत्पादन बढ़ाकर हम व्यापार घाटे को बहुत हद तक पाट सकेंगे.

अमेरिका में बढ़ गया है राजनीतिक विभाजन

अनिल त्रिगुणायत
पूर्व राजदूत
amb.trigunayat@gmail.com

अमेरिका में 'गन कल्चर' पर बहुत लंबे समय से बहस चल रही है. जब कोई ऐसी घटना होती है, तो यह बहस तेज हो जाती है. अभी कांग्रेस में हथियार रखने के बारे में नियम बनाने को लेकर प्रस्ताव भी विचाराधीन है, पर इस मुद्दे पर भी बड़ा विभाजन है. अमेरिका में विभाजन और हिंसा के संबंध में विचार करते हुए यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वहां तरह-तरह की लॉबी सक्रिय हैं तथा उनका बड़ा प्रभाव है. 'गन लॉबी' भी बहुत ताकतवर है. ट्रंप भी इस लॉबी के बड़े समर्थक हैं.

पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति और इस बार के चुनाव में रिपब्लिकन पार्टी के उम्मीदवार डोनाल्ड ट्रंप पर हुआ जानलेवा हमला बेहद दुर्भाग्यपूर्ण घटना है. इस घटना की पूरी जांच होने के बाद ही हमें हमलावर के इरादों के बारे जानकारी मिल सकेगी, पर यह सुरक्षा में हुई गंभीर चूक का नतीजा तो है ही. इस घटना से यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अमेरिकी समाज और राजनीति में भारी विभाजन हो चुका है. पिछले चुनाव में जब राष्ट्रपति ट्रंप हार गये थे, तो हमने देखा कि अमेरिकी कैपिटल, जो वहां की संसद है, पर भीड़ का हमला हुआ था. तब ट्रंप ने एक तरह से उनका समर्थन किया था और कैपिटल मार्च का आह्वान भी किया था. आज तक उन्होंने यह स्वीकार नहीं किया है कि 2020 का चुनाव वे हार गये थे. भले ही अमेरिका अपने को महानतम लोकतंत्र की संज्ञा दे, पर राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण आसान नहीं रह गया है. कैपिटल हमले के बाद भी राजनीतिक विभाजन को पाटने की कोई ठोस कोशिश नहीं की गयी. यह जगजाहिर तथ्य है कि अमेरिका के रोजमर्रा का जीवन हिंसक घटनाओं से भरा पड़ा है. आये दिन गोलीबारी की घटनाएं होती रहती हैं, कभी स्कूल में, कभी सड़क पर, तो कभी शॉपिंग मॉल में सरफिरे अंधाधुंध गोलियां चलाकर बहुत से लोगों की जान ले लेते हैं. अमेरिका में 'गन लॉबी' बहुत ताकतवर है और हिंसक माहौल बनाने में उसकी भी एक भूमिका है.

अमेरिका में दो पार्टियां हैं- रिपब्लिकन और डेमोक्रेट. वर्तमान राष्ट्रपति और डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रत्याशी जो बाइडेन अधिक उम्र में होने वाली समस्याओं से घिरे हैं और इसके कारण उनकी लोकप्रियता बहुत घट गयी है. उनके बरक्स ट्रंप की लोकप्रियता बढ़ी है. हालिया हमले के बाद ऐसा लगता है कि जो मध्यमार्गी मतदाता हैं, जो किसी पार्टी से संबद्ध नहीं हैं और वैसे रिपब्लिकन, जो ट्रंप को लेकर आश्वस्त नहीं थे, ये लोग अब ट्रंप को समर्थन देंगे. घटना के बाद बाइडेन ने राजनीतिक तनातनी कम करने का जो आह्वान किया है, वह स्वागतयोग्य है. किसी भी लोकतंत्र में जब राजनीतिक विमर्श हिंसक हो जाता है, तो उससे लोकतंत्र को ही नुकसान होता है, वह समाज के लिए घातक हो जाता है. हमले के क्षण भर बाद ट्रंप ने घायल होने के बाद भी जिस प्रकार से मुट्ठी बांधकर 'फाइट, फाइट' की बात कही, वह चित्र अब एक प्रतीक बन गया है. उसके बाद वे रिपब्लिकन पार्टी के सम्मेलन में गये, जहां आशा के अनुरूप औपचारिक रूप से उन्हें पार्टी का उम्मीदवार घोषित किया गया. वहां उन्होंने ओहायो के सीनेटर जेडी वैन्स को बतौर उपराष्ट्रपति उम्मीदवार बनाने का ऐलान किया. यहां थोड़ा भारतीय आयाम यह है कि वैन्स की पत्नी भारतीय मूल की हैं. दोनों ने येल विश्वविद्यालय में साथ पढ़ाई की है.

अमेरिकी चुनाव के मतदान में चार महीने बचे हैं. इस अवधि में राजनीतिक और सामाजिक विभाजन खत्म होने की उम्मीद नहीं की जानी चाहिए. वहां बहुत अधिक राजनीतिक ध्रुवीकरण हो चुका है. वहां की राजनीतिक संस्कृति में ऐसा देखा जाता है कि जो व्यक्ति डेमोक्रेट या रिपब्लिकन होता है, वह जीवनभर अपनी पार्टी का समर्थक बना रहता है. ऐसे बहुत कम लोग अपनी पसंदीदा पार्टी को छोड़कर विरोधी पार्टी के लिए मतदान करते हैं. अगर नेता या समर्थक सार्वजनिक रूप से हिंसा की बात करेंगे, तो हिंसक घटनाओं में बढ़ोतरी होना स्वाभाविक ही है. हालांकि दोनों नेताओं ने शांति की अपील की है, पर अमेरिकी समाज बहुत अधिक सशस्त्र है. अमेरिका में लोगों को हथियार रखने का संवैधानिक अधिकार है. अधिकतर नागरिकों के पास बंदूकें हैं. कई लोगों के पास एक से अधिक हथियार हैं. हालांकि हथियार रखने का कारण आत्म सुरक्षा को बताया जाता है, पर सिरफिरे लोग तो उसका इस्तेमाल कहीं भी कर सकते हैं. ऐसे में मुझे नहीं लगता है कि यह पूरी चुनावी प्रक्रिया शांति से संपन्न हो सकेगी. अमेरिका में 'गन कल्चर' पर बहुत लंबे समय से बहस चल रही है. जब कोई ऐसी घटना होती है, तो यह बहस तेज हो जाती है. अभी कांग्रेस में हथियार रखने के बारे में नियम बनाने को लेकर प्रस्ताव भी विचाराधीन है, पर इस मुद्दे पर भी बड़ा विभाजन है. अमेरिका में विभाजन और हिंसा के संबंध में विचार करते हुए यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वहां तरह-तरह की लॉबी सक्रिय हैं तथा उनका बड़ा प्रभाव है. 'गन लॉबी' भी बहुत ताकतवर है. ट्रंप भी इस लॉबी के बड़े समर्थक हैं. अब देखना है कि वे आगे क्या करते हैं.

जहां तक विदेश नीति का सवाल है, तो अगर बाइडेन फिर जीतते हैं, मौजूदा नीतियां ही जारी रहेंगी. अगर ट्रंप की वापसी होती है, तो वे रूस-यूक्रेन युद्ध को रोकने की कोशिश जरूर करेंगे. वे अपने बयानों में कहते भी रहे हैं कि वे चौबीस घंटे में इस युद्ध को रोक देंगे. रूस का मानना है कि यह लड़ाई यूक्रेन के साथ नहीं, बल्कि अमेरिका और नाटो के साथ है. हाल में नाटो की स्थापना के 75 साल पूरे होने के मौके पर जो सम्मेलन हुआ है, उसमें यूक्रेन को मदद देते रहने की बात हुई है. भविष्य ही बतायेगा कि आगे क्या होता है. अमेरिका में इस्राइली लॉबी भी बहुत मजबूत है और ट्रंप पर भी उसका प्रभाव है. अगर ट्रंप की जीत होती है, तो इस्राइली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू का हौसला और बढ़ेगा. यह संभव है कि गाजा में शांति के लिए ट्रंप कोशिश करें, पर वह समझौता ऐसा होगा, जो इस्राइल के पक्ष में होगा.

अमेरिकी राजनीति के मौजूदा दौर को हमें भारतीय नजरिये से दो तरह से देखना चाहिए. एक तो यह है कि जब भी वहां रिपब्लिकन राष्ट्रपति रहे हैं, तो दोनों देशों के संबंध आम तौर पर अच्छे रहे हैं. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की राष्ट्रपति ट्रंप से निकटता भी रही है. हमले के बाद जो संदेश भारतीय प्रधानमंत्री ने दिया, उसमें भी उन्होंने उन्हें 'मेरे दोस्त' कहकर संबोधित किया है. उनके कार्यकाल में जब प्रधानमंत्री मोदी अमेरिका गये थे, टेक्सस में स्टेडियम में आयोजित कार्यक्रम में ट्रंप भी आये थे और दोनों नेताओं ने पूरे स्टेडियम का चक्कर लगाया था. यह असाधारण घटना थी. उसमें प्रधानमंत्री मोदी ने 'अबकी बार ट्रंप सरकार' का नारा भी दे दिया था. आज वैश्विक मंच पर और अमेरिकी विदेश नीति में भी भारत का रणनीतिक महत्व बहुत बढ़ गया है. ऐसे में किसी भी अमेरिकी प्रशासन के लिए भारत को अनदेखा करना असंभव है, पर वे दबाव बनाने की कोशिश कर सकते हैं.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

यूरोप के सामने पहचान की चुनौती

प्रभु चावला
एडिटोरियल डायरेक्टर
द न्यू इंडियन एक्सप्रेस
prabhuchawla@newindianexpress.com

इस वर्ष अप्रैल में द इकोनॉमिस्ट ने लिखा था कि यूरोपीय संघ में कोई ढाई करोड़ मुस्लिम हैं और पूरे यूरोप में इनकी संख्या पांच करोड़ है. इनमें अधिकतर काम की तलाश में आये थे और मुश्किल कामों के लिए उनकी जरूरत भी थी. अब इससे यूरोपीय समाजों के ताने-बाने को खतरा पैदा हो गया है. ऐसे में मुस्लिम-विरोधी भावनाओं को बल मिल रहा है.

वर्तमान यूरोप में अतीत ही भविष्य है. लगभग 13 सौ साल पहले युद्ध से यूरोप के धार्मिक परिदृश्य को बदलने की कोशिश हुई थी. आठवीं से दसवीं सदी के बीच उम्मयद शासकों ने स्पेन, पुर्तगाल, सिसिली और माल्टा को जीतकर यूरोपीय इतिहास को नया मोड़ देने की कोशिश की, पर वे इन दक्षिणी सीमाओं से आगे नहीं जा सके. ब्रिटिश इतिहासकार एडवर्ड क्रीजी ने 19वीं सदी में लिखा था कि चार्ल्स मार्टेल की महान जीत ने पश्चिमी यूरोप में अरबों की जीत को निर्णायक रूप से रोका, इस्लाम से ईसाइयत को बचाया तथा प्राचीन अवशेषों एवं आधुनिक सभ्यता के स्त्रोतों को संरक्षित किया. हाल में ब्रिटेन में लेबर पार्टी ने भारी जीत हासिल की है. नयी संसद में मुस्लिम सांसदों की संख्या 19 से बढ़कर 25 हो गयी है. फ्रांस में इस्लाम-विरोधी, प्रवासन-विरोधी राष्ट्रवादी दक्षिण को वामपंथी पार्टियों के गठबंधन ने हरा दिया है. उसके बाद वहां फसाद भी हुए. दूसरी ओर, स्विटजरलैंड, इटली, फिनलैंड, स्लोवाकिया, हंगरी, क्रोएशिया और चेक रिपब्लिक में राष्ट्रवादियों को जनादेश मिला है. स्वीडन की संसद में दक्षिणपंथी पार्टी दूसरी सबसे बड़ी पार्टी है. नीदरलैंड में इस्लाम-विरोधी नेता गीर्ट वाइल्डर्स चार दलों के गठबंधन के नेता हैं. इटली की जॉर्जिया मेलोनी जैसी दक्षिणपंथी नेता यूरोप में शरिया-विरोधी नैरेटिव को आगे बढ़ाते हैं. हार के बावजूद फ्रांस में ले पेन डटी हुई हैं.

मध्य युग में जो युद्ध पीछे धकेला गया था, वह वापस लौटता प्रतीत हो रहा है. शब्दों के हथियारों से लड़ने वाली सेनाओं के नये नाम इस प्रकार हैं- कॉमी, वोक, एंटी-सेमिटिक, इस्लामोफोब, नियो नाजी आदि. खैर, आप जहां भी हों, लोकतंत्र रैडिकल इस्लाम के लिए मध्यकालीन सेनाओं से बेहतर साधन साबित हो सकता है. ग्लोबल मुस्लिम ट्रैवल इंडेक्स 2024 के अनुसार, पश्चिम में ब्रिटेन मुस्लिमों के लिए सबसे अच्छा गंतव्य है. फिर भी सर्वे बताते हैं कि 40 प्रतिशत ब्रिटिश मुस्लिम शरिया को कानून बनाना चाहते हैं. फ्रांस में 'स्वतंत्रता' जेहादियों और उनके समर्थकों के लिए है, 'समता' हत्यारों के लिए है तथा 'बंधुत्व' उस धर्म के लिए है, जो चर्चों को मस्जिद बनाना चाहता है. ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जिन्हें लगता है कि उनकी सांस्कृतिक पहचान और शारीरिक सुरक्षा पर खतरा है. यूरोप में हर जगह उन्मादी हमले का जोखिम है. लोग भयभीत हैं. साल 2014 के एक सर्वे में पाया गया था कि 57 प्रतिशत जर्मन इस्लाम को खतरा मानते हैं, 61 प्रतिशत का मानना है कि इस्लाम और पश्चिम साथ नहीं चल सकते, 40 प्रतिशत लोग मानते है कि इस्लाम के चलते वे अपने ही देश में अजनबी जैसा महसूस करते हैं तथा 24 प्रतिशत मुसलमानों को जर्मनी नहीं आने देना चाहते हैं. ब्रिटेन में 2012 के एक सर्वे में पाया गया था कि 49 प्रतिशत लोग आशंकित है कि ब्रिटिश मुस्लिमों और गोरे अंग्रेजों में सभ्यतागत युद्ध होगा. ये वही लोग हैं, जिन्होंने कंजर्वेटिव पार्टी को बुरी तरह हरा दिया है.

साल 1291 में रोमन कैथोलिक चर्च के तबाह होने के साथ जेरूसलम को इस्लामी नियंत्रण से छीनने के धर्मयुद्धों का अंत हो गया था. महान इस्लामी योद्धा सलादीन को ब्रिटिश शासक रिचर्ड प्रथम ने हरा दिया था. दोनों में हुए समझौते से लेवांत क्षेत्र में ईसाइयत के अस्तित्व को एक सदी का समय और मिल गया. सलादीन उदार था, पर अब उसके कम उदार धार्मिक वंशज ब्रिटेन की मदद से ही ब्रिटेन पहुंच चुके हैं. वोट बैंक की राजनीति ने ब्रिटिश नेताओं को समझौता करने वाली की पीढ़ी में बदल दिया है. ऋषि सुनक इस कारण भी हारे कि वे प्रवासन पर स्पष्ट नहीं थे और धुर दक्षिणपंथी रिफॉर्म पार्टी ने उस खेमे के वोटों को बांट दिया.

मुस्लिम अपनी धार्मिक पहचान पर अडिग रहते हैं. मुस्लिम आबादी 2011 में 4.9 प्रतिशत थी, जो 2021 में 6.5 प्रतिशत हो गयी. मस्जिदों की संख्या एक दशक में दुगुनी हो गयी है. एक आकलन के अनुसार, लगभग 52 सौ ब्रिटिश हर साल इस्लाम को अपनाते हैं. अन्य अनुमान के अनुसार, फ्रांस में बीते 25 साल में इस्लाम में धर्मांतरण दुगुना हो गया है. यूरोपीय संघ में हर जगह ऐसी ही स्थिति है और धर्म का एक हिस्सा स्थायी जेहाद के लिए समर्पित है. इस वर्ष अप्रैल में द इकोनॉमिस्ट ने लिखा था कि यूरोपीय संघ में कोई ढाई करोड़ मुस्लिम हैं और पूरे यूरोप में इनकी संख्या पांच करोड़ है. इनमें अधिकतर काम की तलाश में आये थे और मुश्किल कामों के लिए उनकी जरूरत भी थी. अब इससे यूरोपीय समाजों के ताने-बाने को खतरा पैदा हो गया है. ऐसे में मुस्लिम-विरोधी भावनाओं को बल मिल रहा है. ले पेन जैसे नेता प्रवासन रोकने के पैरोकार हैं, पर दक्षिणपंथ अन्यों की तरह ही अदूरदर्शी और बिखरा हुआ हो सकता है. राष्ट्र लड़ाइयां जीतते हैं, पर युद्ध जीतने के लिए विवेक की आवश्यकता होती है. भारत में लगभग 500 साल तक मुस्लिम शासन रहा. यूरोपीयों और अंग्रेजों का शासन भी यहां रहा. भारत एक सफल बहुसंस्कृतिवाद के लिए सीख दे सकता है. अमेरिका में जेहादीवाद के खुले प्रदर्शन पर प्रभावी रोक लगी है, जबकि सांस्कृतिक बहुलवाद को भी सुनिश्चित किया गया है. अगर यूरोप अपने सबसे करीबी सहयोगी और पूर्व उपनिवेशों से जल्दी सीख नहीं लेगा, तो सभ्यताओं के संघर्ष में वह अपने शत्रु से हार जायेगा.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

राजनीतिक हिंसा के दुष्चक्र में फंसा अमेरिका

जैसे-जैसे चुनावी प्रतिस्पर्धा तीव्र हो रही है, अमेरिका में मौजूदा राजनीतिक ध्रुवीकरण दुनिया के लिए और अधिक चिंताजनक हो गया है. राजनीतिक ध्रुवीकरण का बढ़ना अधिक राजनीतिक हिंसा के उभार को बढ़ावा देता है, और इसमें वृद्धि से राजनीतिक ध्रुवीकरण में वृद्धि होती है. राजनीतिक हिंसा से तात्पर्य राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली हिंसा से है. चुनावी हिंसा राजनीतिक हिंसा का एक रूप है, जिसमें चुनावी प्रक्रिया या चुनाव परिणामों को प्रभावित करने के उद्देश्य से दबाव डालना, धमकी देना या शारीरिक नुकसान पहुंचाना शामिल है. इसमें मतदान को बाधित करने, चुनाव परिणामों का विरोध करने या चुनाव परिणामों के खिलाफ विरोध को दबाने की कार्रवाइयां भी शामिल हैं. राजनीतिक हिंसा और राजनीतिक ध्रुवीकरण ने एक दुष्चक्र बना लिया है, जो अमेरिका की मौजूदा राजनीतिक दुविधा और राष्ट्रीय शासन के बड़े संकट को उजागर करता है. राजनीतिक ध्रुवीकरण अमेरिका के राजनीतिक स्पेक्ट्रम पर उदारवादियों और रूढ़िवादियों के बीच मूल्यों, विश्वासों और विचारधाराओं का ध्रुवीकरण है. दोनों पक्षों का मानना है कि उनके विरोधी पक्ष की मान्यताएं उनसे बहुत अलग हैं, और वे समझौता करने को तैयार नहीं हैं. इसी ध्रुवीकरण ने अमेरिका में चुनावी राजनीति और विधायी प्रक्रिया को गहराई से प्रभावित किया है. प्रत्येक पक्ष यह मानता है कि दूसरे पक्ष की जीत से उसकी अपनी मान्यताओं, मूल्यों व व्यावहारिक हितों को खतरा होगा, और इसीलिए अपने प्रतिद्वंद्वी की जीत का विरोध करने के लिए अपनी पूरी शक्ति का उपयोग करना आवश्यक है. राजनीतिक प्रतिस्पर्धा की प्रक्रिया में, बहुसंख्यकों के सार्वजनिक हितों और राष्ट्रीय हितों का स्थान संकीर्ण पक्षपातपूर्ण हितों ने ले लिया है. यदि अमेरिका राजनीतिक ध्रुवीकरण की वर्तमान स्थिति को बदलने में असमर्थ है, तो इससे और अधिक राजनीतिक हिंसा और सामाजिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है.

GLOBAL TIMES

-वांग योंग

बोधि वृक्ष

अहंकार और असंतोष

विश्व के अधिकांश सफल लोग इस बात को दृढ़ता से मानते हैं कि 'बिना कष्ट किये फल नहीं मिलता.' अतः, जो व्यक्ति समृद्ध होना चाहता है, उसे पीड़ा सहनी ही पड़ती है. दुनिया में कोई भी ऐसा नहीं होगा जिसे दर्द का अहसास न हुआ हो. किंतु हममें से अधिकांश लोग आंतरिक दर्द और शारीरिक दर्द के बीच के अंतर से अनभिज्ञ रहते हैं. चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति के कारण आज विविध प्रकार की उपलब्ध दवाओं से शारीरिक पीड़ा से मनुष्य को मिनटों में आराम मिल जाता है, किंतु आंतरिक दर्द का क्या उपचार है? इसके पहले की हम उसके उपचार के बारे में सोचें, हमें इस रोग के कुछ प्रमुख कारणों को जानना होगा. हममें से अधिकतर लोग इस तथ्य से इनकार करते हैं कि हमारी आंतरिक पीड़ा का मुख्य कारण हमारा अपना ही अहंकार है. अहंकारवश हम इतने अंधे हो जाते हैं कि अपने मूल अस्तित्व को भूलकर अपनी अंतरात्मा से विमुख हो जाते हैं. इस अवस्था से बाहर निकलने का एकमात्र रास्ता है, 'आत्मनिरीक्षण करना.' किंतु दुर्भाग्यवश इस रास्ते पर कोई भी चलना नहीं चाहता, क्योंकि अपने भीतर जाने की विधि किसी को नहीं आती. 'असंतोष' भी अहंकार के समान आंतरिक दर्द पैदा करने वाला एक अन्य महत्वपूर्ण कारक है. हालांकि वह बड़ा ही सूक्ष्म है, परंतु हमारे मानस को अत्यधिक हानि पहुंचाता है. आज हम ऐसी प्रतिस्पर्धात्मक दुनिया में जी रहे हैं जहां हम लगातार अनेक प्रकार की जटिलताओं का सामना करते हैं. परिणामस्वरूप उत्तरजीविता एक चुनौती बन जाती है. ऐसे में हम कितना भी भौतिक प्रगति क्यों न कर लें, आंतरिक संतुष्टि की अनुभूति कर पाने में असफल ही रहते हैं. इसका मूल कारण है कि हम समझ ही नहीं पाते कि 'जो स्वयं से संतुष्ट नहीं, वह सारी दुनिया से असंतुष्ट रहेगा.' अतः मूल बात है पहले स्वयं से संतुष्ट रहना. और इसके लिए सबसे सरल उपाय है अपने भीतर छुपी आंतरिक खुशी के खजाने की ओर देखना. यहां-वहां खुशी खोजने के बजाय जो अपने अंदर छुपी खुशी है, उसे आत्मनिरीक्षण द्वारा बाहर लाना और दूसरों में बांटना.

-ब्रह्माकुमार निकुंज जी

कुछ अलग

गांव के आंगन की याद

क्षमा शर्मा
वरिष्ठ पत्रकार
kshamasharma1@gmail.com

इस वर्ष दिल्ली में रहते हुए इतनी गर्मी महसूस हुई, जितनी शायद पहले कभी नहीं. अक्सर लोगों को कहते सुना कि ऐसी गर्मी है कि सांस लेना दूभर हो रहा है. पंखे और एसी की हवा तक नहीं लग रही है. चारों तरफ से बंद अपने फ्लैट में रहते हुए लगता था कि काश एक ऐसे घर में रहते होते, जहां खुला आंगन होता. उसमें बिस्तर बिछाकर सोते. खुले में सोने का आनंद अलग ही होता. आसमान के चांद-तारों को वैसे ही निहारते, जैसे बचपन में निहारते थे. एकाएक बारिश आ जाती तो बिस्तर लेकर भागते. कई बार पूरी रात ऐसा ही होता रहता कि बारिश आ गयी तो अंदर सोये और बारिश बंद हो गयी, तो आंगन में आ गये. हालांकि यह बात कल्पना भर थी. क्योंकि नये बनते अधिकांश घरों में इन दिनों आंगन दिखाई ही नहीं देते. इसलिए बचपन में आंगन में बिताये दिन और वहां लगे नीम के पेड़ की छाया, उसकी निंबोलियां समेत न जाने कितनी बातें हैं जो हमें बचपन में, गांव में लौटा ले जाती हैं.

पिछले दिनों गांव से भतीजा आया था. गांव का घर बहुत बड़ा है. उसमें एक बड़ा आंगन भी है. पहले आंगन कच्चा था, पर अब पक्का करा दिया गया है और घर के भीतर लगे नीम और बेर के पेड़ कटवा दिये गये हैं. भतीजा बताने लगा कि इस बार गर्मी में वह बहुत कम घर से बाहर निकला. धूप शरीर में इतनी चुभती थी कि कहीं आने-जाने का मन नहीं करता था. रात में भी इतनी गर्मी थी कि ठीक से नींद नहीं आती थी. बार-बार उठकर पानी पीना पड़ता था. उसकी बात सुनकर कहा- तू तो आंगन में सोता होगा टेबल फैन चलाकर, जैसे पहले सोते थे. उसने हंसकर कहा- अरे बुआ, कौन सा आंगन और कौन से टेबल फैन. मैं तो अंदर सोता हूं. या तो कूलर चलाता हूं या एसी. तू आंगन होते हुए आंगन में नहीं सोता. और हम सोचते हैं कि काश आंगन वाला घर होता, तो आंगन में ही सोते. वह बोला- अरे, आजकल आंगन में कोई नहीं सोता है. सब को एसी, कूलर में सोने की आदत पड़ गयी है. अब कोई चबूतरों पर भी नहीं सोता. बल्कि लोगों ने चबूतरों पर भी कमरे बनवा लिये हैं और आंगन पटवा लिये हैं.

गांव बदल गये हैं. वहां हर शहरी सुविधा मौजूद है. और हो भी क्यों न. क्या सुविधाओं के उपयोग का अधिकार केवल शहर वालों को है. पर हम शहरी जब गांव की तरफ जाते हैं, तो पुराना कुछ ढूंढ़ते, अपने बचपन को याद करते. उस समय को पचास-साठ साल बीत गये होते हैं. हम बदल गये, मगर गांव को बदलते नहीं देखना चाहते.

आपके पत्र

समस्या में वित्तरहित शिक्षक व कर्मी

वित्तरहित शिक्षा नीति के तहत करीब एक लाख शिक्षक व कर्मचारी कई समस्याओं से गुजर रहे हैं. इनको समय पर वेतन नहीं मिल रहा है, जिससे वे आर्थिक संकट से जूझ रहे हैं. इनको अपना परिवार पालना भी मुश्किल हो रहा है. सरकार की नीतियों के कारण पुराने कॉलेजों को फिर से संबद्धता लेने में काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है. इन कॉलेजों से जुड़े शिक्षक व कर्मचारियों को वेतन नहीं के बराबर मिलता है. सरकार को वित्तरहित शिक्षकों की समस्याओं को दूर करने का प्रयास करना चाहिए.

प्रसिद्ध यादव, पटना

टॉकटाइम वाले रिचार्ज लाये कंपनी

सभी दूरसंचार कंपनियों ने एक साथ रिचार्ज को महंगा कर दिया, जिसका असर मध्यमवर्गीय व गरीब परिवारों पर पड़ा है. ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी ऐसे कई उपभोक्ता हैं, जो सिर्फ मोबाइल से सिर्फ बात करते हैं. उनके लिए फोर जी व फाइव जी का कोई मतलब नहीं है. इसलिए दूरसंचार कंपनियों को टॉकटाइम वाले रिचार्ज लाना चाहिए. जो लोग नेट का उपयोग नहीं करते हैं, वे सिर्फ टॉकटाइम वाले रिचार्ज करा सकें. सरकार को दूरसंचार कंपनियों पर लगाम लगाने के लिए ठोस नीति बनानी चाहिए, जिससे वे मनमानी नहीं कर सकें.

सचिन झा, समस्तीपुर

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013, ■ **मेल करें :** patna @prabhatkhabar .in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो . लिपि रोमन भी हो सकती है .

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। बुधवार, 17 जुलाई 2024

कहां गया लोकतंत्र

पाकिस्तान की शहबाज शरीफ सरकार ने संकेत दिए हैं कि पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान की पार्टी को बैन किया जा सकता है। इमरान खान पहले से ही जेल में बंद हैं। उनकी पार्टी पाकिस्तान तहरीके इंसाफ (PTI) पर भी कई तरह की बंदिशें पहले से लगी हुई हैं। इसके बावजूद अगर पाकिस्तान सरकार इस नई पहल की बात कर रही है तो इसका साफ मतलब यही है कि जेल के अंदर से भी इमरान अपने विरोधियों के लिए खतरा बने हुए हैं।

इमरान की लोकप्रियता | पाकिस्तान की फौज के साथ बढ़ते मतभेदों के बीच कुर्सी गंवाने वाले इमरान खान की पाकिस्तानी अवाम के बीच लोकप्रियता पिछले चुनावों में अच्छी तरह स्थापित हो चुकी है। खुद इमरान को चुनाव लड़ने से रोके जाने और पार्टी को प्रत्याशी तक न खड़ा करने देने के बावजूद PTI के लोग बड़ी संख्या में जीत कर नैशनल असेंबली पहुंचे।

इमरान की पार्टी बैन हो सकती है

अदालती लड़ाई | इमरान और उनकी पार्टी अदालती लड़ाई भी मजबूती से लड़ती दिखी। न केवल फॉरेन फंडिंग केस में व्यक्तिगत रूप से इमरान खान की संलिप्तता के आरोप सबूतों के अभाव में खारिज हो गए बल्कि केबल मामले में ऑफिशल सीक्रेट्स एक्ट के उल्लंघन का आरोप भी ऊपरी अदालत ने निरस्त कर दिया। यही नहीं, पिछले हफ्ते सुप्रीम कोर्ट ने PTI को नैशनल असेंबली में 20 से ज्यादा रिजर्व सीटों के लिए पात्र घोषित कर दिया, जिससे वह सबसे बड़ी पार्टी हो जाती है।

अंतरराष्ट्रीय दबाव | इस बीच संयुक्त राष्ट्र की एक एक्सपर्ट कमिटी ने भी इस महीने यह निष्कर्ष दिया कि इमरान खान की गिरफ्तारी का कोई ठोस कानूनी आधार नहीं है और ऐसा लगता है कि इसके पीछे उन्हें चुनाव लड़ने से रोकने का राजनीतिक मकसद काम कर रहा है। कमिटी ने उन्हें तत्काल रिहा करने की मांग भी की है।

सत्तारूढ़ गठबंधन में मतभेद | दिलचस्प है कि PTI को बैन करने की इस ताजा पहल को लेकर सत्तारूढ़ गठबंधन में भी दरार दिखने लगी है। पाकिस्तान पीपल्स पार्टी ने इस फैसले से खुद को अलग करते हुए कहा है कि इस बारे में उससे कोई राय-मशविरा नहीं किया गया। इसके बाद यह भी देखना होगा कि सरकार इस फैसले को लेकर किस तरह से और कितना आगे बढ़ती है।

लोकतांत्रिक चेतना पर सवाल | जिस तरह से पाकिस्तानी सत्ता तंत्र देश की एक प्रमुख राजनीतिक पार्टी को कानूनी दांव-पेच के जरिए चुनावी मुकाबले से बाहर रखने में लगातार लगा हुआ है, वह लोकतंत्र के उसके दावे के लिए एक गंभीर चुनौती है। हैरत की बात तो यह है कि इसका साधन एक ऐसी पार्टी बनी हुई है, जिसका सबसे बड़ा नेता खुद लंबे समय तक इन अलोकतांत्रिक तौर-तरीकों का शिकार बना रहा है।

ऑफबीट

घर-आंगन का किस्सा

सौरभ श्रीवास्तव

रविवार एक रिश्तेदार के घर गया। यही कोई 8 बजे का वक्त रहा होगा। पूरा परिवार आंगन में साथ बैठकर चाय पी रहा था। माता-पिता, बच्चे और दादा-दादी। यह दृश्य कितना दुर्लभ और खूबसूरत है। हालांकि कुछ साल पहले तक यह इतना सामान्य था कि हम इसे मस्तिष्क में दर्ज ही नहीं करते थे। मैं भी जिस रविवार की बात कर रहा हूं वह आज से करीब 15 साल पहले का है। अब वह रिश्तेदार अपार्टमेंट में शिफ्ट हो गए। कई बार उनके घर जा चुका हूं, पर वैसा खूबसूरत दृश्य अब नहीं नजर आता।

साथ रहकर भी एक-दूसरे के साथ वक्त न बिता पाने की बड़ी वजह मोबाइल फोन के आलावा एक और भी है, जिसकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। मकानों का भीतरी डिजाइन। पुराना वक्त याद कीजिए। घर भीतर से कैसे होते थे? सबसे पहले एक बैठका, उसके बगल से गैलरी जो कि आंगन में खुलती थी, फिर आंगन से लगे कमरे और रसोई। आंगन में बच्चे खेलते थे। बूढ़े-बुजुर्ग वहीं तख्त डाल कर बैठे रहते। जरूरत होने पर ही लोग अपने कमरों में जाते थे। बाकी समय आंगन या दालान में बीतता।

अब आजकल के फ्लैट या नए डिजाइन के मकानों की ओर ध्यान दीजिए। दरवाजा खुलते ही एक लिविंग एरिया, उससे सटी रसोई। लिविंग एरिया से सटे दो या तीन बेडरूम और हर कमरे से अटैच टॉयलेट। बच्चों का कमरा, दादा-दादी का कमरा और मां-पिता का कमरा। एक बार भीतर गए तो बाहर आने की जरूरत ही नहीं। दिन का खाना तो घर पर होता ही नहीं और शाम के वक्त सभी को 'मी टाइम' चाहिए होता है। 'मी टाइम' के लिए तो मकान का डिजाइन सही है, पर 'फैमिली टाइम' के लिए नहीं। कई बार लिविंग एरिया में लगा टीवी चलता रहता है और लोग अपने-अपने कमरों में मोबाइल में सिर दिए रहते हैं। वैसे भी टीवी सिमटकर मोबाइल फोन में समा गया। सबका अपना टीवी। मेहमान आने पर भी दुआ-सलाम करने के बाद लोग अपने कमरों में वापस चले जाते हैं। केवल वही शख्स मेहमान के साथ बैठता है जिससे वह मिलने आया होता है। बालकनी आंगन की कमी को पूरा नहीं कर सकती। डिजाइन के लिहाज से देखें तो वह किसी एक कमरे से जुड़ी होती है। घर के सारे कमरों से नहीं। लिविंग स्पेस भी आंगन नहीं हो सकते क्योंकि वहां खुली हवा या सर्दियों की धूप नहीं आती। इन्हीं चीजों का लुत्फ लेने के लिए लोग फुर्सत से कुर्सी या तख्त डाल कर बैठते थे और एक-दूसरे से बात करते थे। होटलनुमा अपार्टमेंट और नए मकानों में परिवार के बीच यह सामाजिकता कम होती जा रही है। अगली बार जब किसी आर्किटेक्ट से मकान का नक्शा बनवाइएगा तो कहिएगा की सोशल स्पेस का ध्यान रखे।

एकदा

ड्रेपर का कैमरा

John William Draper वैज्ञानिक, खगोलशास्त्री और फटोग्रफी के शुरुआती प्रयोगकर्ता थे। उन्होंने न केवल तारे की, बल्कि चिकित्सा, रसायन विज्ञान और इतिहास से जुड़े विषयों के फटोग्रफिक अध्ययन में भी योगदान दिया। ड्रेपर ने फटोग्रफी के क्षेत्र में भी कई रेनोवेशन किए। वह फटोग्रफी की शुरुआती और लोकप्रिय तकनीक Daguerreotype process में सुधार करने के लिए भी जाने जाते हैं। उन्होंने विभिन्न विषयों की तस्वीरें लीं। इंसान की फटोग्रफी की बात करें, तो पहली बार उन्होंने 1840 के दशक में अपनी बहन डोरोथी कैथरीन की एक तस्वीर खींची थी, जो विश्व में किसी महिला का पहला स्पष्ट फटोग्राफ माना जाता है। यह फोटो इतनी स्पष्ट और विस्तृत थी कि इसने उस समय की फटोग्रफी के स्टैंडर्ड को बदल दिया। उस समय उपलब्ध तकनीक बहुत ही प्रारंभिक थी और अक्सर असफल रहती थी। उनका सपना तारों की फोटो लेने का था। हार्वर्ड वेधशाला में वह इस पर प्रयोग करने लगे। इस उपलब्धि को हासिल करने के लिए ड्रेपर ने अपने वेधशाला में कई प्रयोग किए। इस दौरान उन्हें कई बार असफलताओं का सामना करना पड़ा, क्योंकि तकनीकी सीमाएं और उपकरणों की सटीकता में कमी उनके समय में एक बड़ी चुनौती थी। ड्रेपर ने दृढ़ संकल्प के साथ अपने प्रयोगों को जारी रखा और अपनी फटोग्रफिक तकनीकों में सुधार किया। आखिरकार उनकी मेहनत रंग लाई और 17 जुलाई, 1850 में उन्होंने सफलतापूर्वक वेगा तारे की फोटो कैप्चर की, जो कि खगोल विज्ञान में एक बड़ी सफलता थी। उन्होंने ही चंद्रमा की पहली फोटो ली थी।

Subrata Dhar

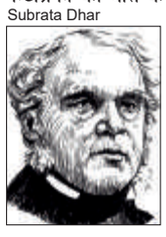

संकलन : **राहुल पांडेय**

जब पहले ही देश की अर्थव्यवस्था तेज़ी से बढ़ रही है तो बड़े बदलाव की ज़रूरत नहीं

बजट में छोटी बातों से बन जाएगी बात

स्वामीनाथन एस अंकलेसरिया अय्यर

जब सबकुछ सही चल रहा है तो उठा-पटक क्यों की जाए? 23 जुलाई को पेश होने वाले बजट की तैयारी कर रहीं वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण के सामने यही सवाल है। इस समय देश की GDP ग्रोथ 8.2% है। यह रफ्तार इसे दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्था बना देती है। ऐसे में किसी बड़े बदलाव की जरूरत है? क्यों न थोड़े-बहुत बदलावों के साथ पुराने रास्ते पर चलना ही जारी रखा जाए?

बदलाव का समय | कुछ विश्लेषकों का मानना है कि बड़े बदलाव आम चुनाव के बाद ही किए जाने चाहिए। माना जाता है कि किसी भी चुनावी कार्यकाल के अंतिम दो वर्ष आमतौर पर संभलकर कदम उठाने वाले होते हैं। ऐसे सुधारवादी परिवर्तनों से बचा जाता है, जो लोगों के बीच अलोकप्रिय साबित हो सकते हैं। चुनाव के तुरंत बाद का वक्त बड़े कदम के लिए बिल्कुल सही है। तब अगले चुनाव में पूरे पांच साल बचे होते हैं।

पॉलिसी चेंज | पीएम नरेंद्र मोदी ने 2047 तक भारत को एक उच्च आय वाला देश बनाने के लिए बड़े बदलावों के अपने संकल्प के बारे में बात की है। लेकिन उन्होंने साफ नहीं किया कि वे बदलाव क्या होंगे। एक कारण यह हो सकता है कि वह पॉलिसी चेंज के बारे में बताने से हिचक रहे। ऐसी घोषणा के लिए बजट भाषण अच्छा होता है। एक कारण यह भी हो सकता है कि सरकार के पास अभी बड़े परिवर्तन की योजना नहीं है।

पार्टी का मूड | सचाई यह है कि इस समय BJP का मूड कट्टरपंथी बदलाव के बजाय निरंतरता पर है। पार्टी के घोषणापत्र में पिछले पांच वर्षों में विभिन्न क्षेत्रों में शानदार प्रदर्शन का जिक्र किया गया था। लेकिन यह नहीं बताया गया कि किन समस्याग्रस्त क्षेत्रों में तत्काल सुधार करने की जरूरत है। घोषणापत्र का सामान्य संदेश था, 'हमने पिछले पांच बरसों में बहुत अच्छा काम किया है, जिसकी वैश्विक स्तर पर सराहना हुई है। हम वादा करते हैं कि उस अच्छे काम को जारी रखेंगे, इसलिए प्लीज 'मोदी की गारंटी' के लिए वोट दें।'

परिणाम में संकेत | BJP को उम्मीद थी कि वह आम चुनाव में बड़ी जीत हासिल करेगी। '400 से अधिक सीटें' जीतने की बात भविष्यवाणी के रूप में नहीं बल्कि प्रेरित करने के लिए कही गई थी। इस पर पार्टी के कुछ ही लोगों को भरोसा था, लेकिन आरामदायक जीत की उम्मीद अधिकांश को थी। चुनाव परिणाम इस उम्मीद के मुताबिक नहीं रहे। पार्टी पूर्ण बहुमत से बहुत पीछे, 240 सीटों तक सिमट गई। लेकिन इसे एक बड़ी असफलता मानने के बजाय पार्टी ने तीसरे टर्म के लिए चुने जाने का जश्न जोर-शोर से मनाया। इससे संकेत मिलता है कि बजट में वही पुरानी बातें होंगी।

क्षेत्रीय समाधान | BJP की आर्थिक नीतियों ने पिछले दो वर्षों में वैश्विक उथलपुथल का शानदार तरीके से सामना किया है। इस पर उसे दुनिया भर में काफी प्रशंसा मिली है। आम चुनाव में सीटों में गिरावट की वजह यूपी और राजस्थान थे। ऐसे में बजट में समाधान भी क्षेत्रीय होंगे, राष्ट्रीय नहीं।

वित्त मंत्री से उम्मीदें
- आयकर छूट की सीमा में बदलाव
- आंध्र-बिहार को मिलेगा ज्यादा पैसा
- किसान सम्मान निधि की रकम बढ़ेगी

सहयोगियों की मांग | नीतीश कुमार और चंद्रबाबू नायडू ने अपने राज्यों के लिए विशेष दर्जे की मांग की है। पहाड़ी सीमावर्ती राज्य विशेष श्रेणी में आते हैं, जिनकी समस्याएं विशेष होती हैं। बिहार और आंध्र प्रदेश इस कैटिगरी में नहीं आते। उनकी समस्याएं खुद की बनाई हुई हैं। नीतीश कुमार ने शराबबंदी लागू की, जिससे राजस्व का बड़ा जरिया खत्म हो गया। इसी तरह आंध्र की वित्तीय समस्याओं के प्रमुख कारणों में से एक है मुफ्त बिजली की योजना। इन दोनों राज्यों को बजट में कुछ अतिरिक्त मिल सकता है, लेकिन विशेष श्रेणी का दर्जा नहीं मिलेगा।

चाहिए सख्त रुख | कई क्षेत्रों को Production-Linked Incentives की लिस्ट में शामिल करने की मांग की जा रही है। निर्मला सीतारमण को ऐसी मांगों के खिलाफ सख्त रुख अपनाना चाहिए। PLI क्षेत्रों की संख्या जितनी कम होगी, इसकी सफलता की संभावना उतनी ही अधिक होगी।

वित्तीय घाटे में कमी | पिछले वित्तीय वर्ष में राजस्व में उछाल आया, जो चालू वित्तीय वर्ष की पहली तिमाही में भी जारी रहा। इसके अलावा, रिजर्व बैंक ने 2.21 लाख करोड़ रुपये का डिविडेंड घोषित किया है। यह एक ऑलटाइम रेकॉर्ड है। राजस्व में उछाल का मतलब है कि पिछले साल के लिए वित्तीय घाटा GDP का 5.6% हो सकता है, जबकि अंतरिम बजट में 5.8% का अनुमान लगाया गया था। इन सब बातों का मतलब है कि हालिया बजट के हाई capex को बनाए रखते हुए भी 2024-25 में वित्तीय घाटे को 5.1% तक कम करना संभव होगा।

ब्याज का बोझ | राज्यों का वित्तीय घाटा GDP का 2.7% है। केंद्र और राज्य का संयुक्त घाटा GDP का 7.7% होगा। IMF की प्राची मिश्रा ने गणना की है कि भारत अपने पुराने कर्ज पर ब्याज भुगतान में अपने रेवेन्यू का 40% खर्च करता है। उभरते बाजारों में यह औसतन केवल 10% है। यह संरचनात्मक रूप से ताजा पूंजीगत व्यय (केपेक्स) को सीमित करता है।

किसानों पर फोकस | ग्रामीण संकट की बहुत चर्चा थी। इसके बावजूद आम तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों ने BJP के खिलाफ मतदान नहीं किया। 5 साल पहले घोषित पीएम-किसान सम्मान निधि योजना से किसानों को प्रतिवर्ष 6000 रुपये मिले। इस रकम को आठ-नौ हजार रुपये तक बढ़ाया जा सकता है। भूमिहीन मजदूरों को भी जोड़ सकते हैं इसमें। आयकर में छूट की सीमा भी हाल में नहीं बदली गई है। इस सीमा को बस इतना बढ़ाया जा सकता है, जिससे इन्फ्लेशन अडजस्ट हो जाए। कुल मिलाकर, निर्मला सीतारमण को बहुत बड़े बदलाव करने की जरूरत नहीं है।

अमेरिका में दबदबा

अमेरिका में रहने वाले भारतीय उस मुकाम पर पहुंच चुके हैं कि अब वहां उनके बगैर किसी भी फील्ड की कल्पना नहीं की जा सकती। वहां राष्ट्रपति चुनाव को लेकर माहौल गर्म है। ऐसे में वहां रह रहे 50 लाख अमेरिकी भारतीयों पर सबकी नजरें हैं। जानते हैं इंडियन डायस्पोरा के बारे में।

लोकतंत्र गुरु

- भारतीय-अमेरिकी सीनेटर, प्रतिनिधि और मेयर हैं।
- **2013 में 60 से अधिक भारतीय प्रशासन में।**
- 2023 तक 150 से अधिक हो गए।

उपराष्ट्रपति कमला हैरिस इस पद को संभालने वाली पहली महिला हैं।

तरक्की में साथ

16 फॉर्च्यून 500 कंपनियों के सीईओ भारतीय अमेरिकी।

648 स्टार्टअप्स में भारतीय अमेरिकी 72 के सह-संस्थापक।

अमेरिकी होटलों के लगभग **60%** मालिक।

अमेरिकी आयकर का 5-6% चुकाते हैं।

11-12 M अमेरिकी नौकरियों का सृजन।

आय से लाभांश

अमेरिकी	15%
भारतीय	20%

ब्याज से कमाई

2011-12	43%
2022-23	53%

ज्ञान का संसार

- 1975 से 2019 तक अमेरिका में भारतीय पेटेंट हिस्सेदारी 2% से बढ़कर 10% हो गई।

22,000 भारतीय-अमेरिकी कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में पढ़ा रहे हैं।

अमेरिकी विश्वविद्यालयों में **2.6%** भारतीय फैकल्टी।

2023 में भारतीय मूल के वैज्ञानिकों ने 13% वैज्ञानिक प्रकाशनों में योगदान दिया।

यहां मिनी इंडिया

भारतीय अमेरिका के सभी राज्यों में हैं। अधिकतर भारतीय यहां हैं

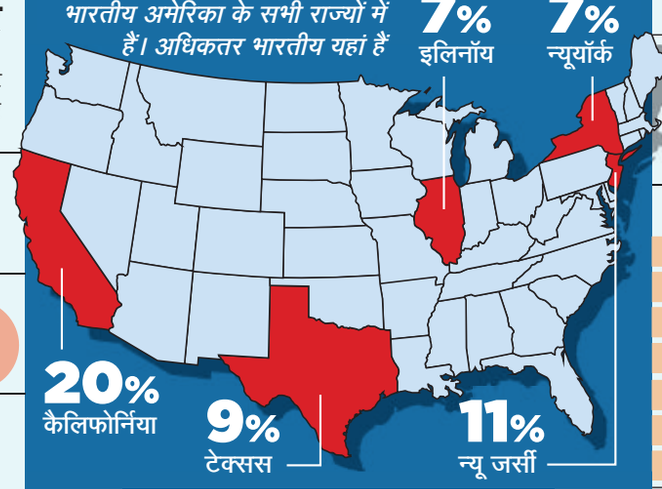

कंटेंट: **राहुल पाण्डेय**, ग्राफिक्स: **अर्जुन सिंह**

संस्कृति का आधार

- योग और आयुर्वेद अमेरिका में लोकप्रिय हैं।
- स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका में योग प्रस्तुत किया।

10% अमेरिकी योग का अभ्यास करते हैं।

36,000 लगभग योग स्टूडियो अमेरिका में

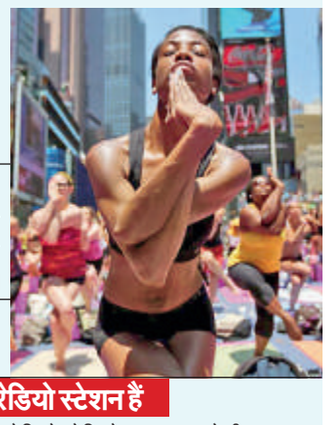

अमेरिका में कई हिंदी रेडियो स्टेशन हैं

आर.बी.सी रेडियो, इजी96 रेडियो, रेडियो हमसफर, देसी जंक्शन, रेडियो सलाम नमस्ते, फन एशिया रेडियो और संगीत।

खानपान

रॉनी मजूमदार के रेस्तरां में प्रामाणिक और अनोखे भारतीय व्यंजन परोसे जाते हैं।

शेफ विकास खन्ना व मनीत चौहान भारतीय व्यंजनों को मुख्य अमेरिकी भोजन में लाए।

दीपक चोपड़ा ने आयुर्वेदिक प्रथाओं और स्वास्थ्य सेवाओं को लोकप्रिय बनाया है।

पहनावे में जान

मेहंदी, बिंदी और लहंगा जैसे पारंपरिक तत्व मुख्यधारा बन रहे हैं।

लहंगे अब नॉर्डस्ट्रॉम जैसे उच्च-स्तरीय खुदरा विक्रेताओं पर उपलब्ध हैं।

डिजाइनर फाल्गुनी और शेन पीकॉक अब न्यूयॉर्क फैशन वीक में भी।

परोपकार

अमेरिकन इंडिया फाउंडेशन (AIF) ने 125 मिलियन डॉलर से अधिक जुटाए हैं।

देसाई फाउंडेशन ने अपने कार्यक्रमों से 1.5 मिलियन से अधिक लोगों के जीवन को प्रभावित किया है।

भारी हिस्सेदारी

- माइक्रोसॉफ्ट के **34%** कर्मी भारतीय मूल के।
- **12%** वैज्ञानिक भारतीय।
- जेरॉक्स के **13%** कर्मी भारतीय।
- NASA के **36%** वैज्ञानिक भारतीय।
- IBM के **28%** कर्मी भारतीय मूल के।
- **38%** डॉक्टर भारतीय।
- इंटेल के **17%** वैज्ञानिक भारतीय।

(स्रोत- इंडियास्पोरा इम्पैक्ट रिपोर्ट)

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
hindi.speakingtree.in

डिजिटल चैलेंज का सही जवाब है प्रकृति के पास

समाज को स्थिरता और सुरक्षा देने में सदियों से पारंपरिक मूल्यों और विश्वास का कीमती योगदान रहा है। लेकिन आज के समय में मशीनीकरण और डिजिटल जीवनशैली ने इन मूल्यों की चुनौतियां बढ़ा दी हैं। हमारे पारंपरिक मूल्य और विश्वास अब खतरे में हैं। आधुनिक तकनीक और डिजिटल साधनों के कारण लोग भ्रमित हो रहे हैं। सही मार्ग का चयन करना कठिन हो गया है। समाज में आशंकाएं बढ़ गई हैं। ऐसे में यह समय खुद को स्थिर रखने और दूसरों के लिए मददगार बनने का है।

समाज में वाहवाही बटोरने की प्रतिस्पर्धा बढ़ गई है। सनातनी जीवन मूल्यों और धारणाओं पर सवाल उठ रहे हैं। इनसे उबरना जरूरी है, लेकिन दुविधाओं और आशंकाओं से भरे माहौल में सही मार्ग का चयन करना, उस पर स्वयं चलना और दूसरों को प्रेरित करना बहुत कठिन हो गया है। इसके लिए असाधारण सदाशयता, जुगत और सूझबूझ की जरूरत है। आज ऐसे लोग चाहिए जो अविचार के भवसागर में स्वयं न बहें और दूसरों को भी थाम सकें। इसके लिए प्रकृति ने एक शानदार व्यवस्था दी है, natural discipline। हमारा मन, चित्त और शरीर तभी सुचारू रूप से कार्य करेंगे जब वे प्रकृति की तरह अनुशासन और मर्यादा में बंधे होंगे। जैसे उचित खानपान से पाचन प्रणाली ठीक रहती है और शरीर को ऊर्जा मिलती है। मन और शरीर भी स्वस्थ रहेंगे यदि उन्हें प्राकृतिक विधान के अनुसार पोषण मिलेगा। हमारे शरीर को पोषण और ऊर्जा देने के लिए शाकाहार पर्याप्त है। मांसाहार के प्रति भटकना, नशे की लत में गिरफ्त हो जाना हमारी कमजोरी है। अध्ययन बताते हैं कि मांसाहारियों को अधिक बीमारियां होती हैं, जिनमें से कुछ असाध्य हैं। मांसाहार में जो भी पोषक तत्व हैं, वे सभी शाकाहार में उपलब्ध हैं।

नशीले पदार्थों और ड्रग्स का सेवन मस्तिष्क की सामान्य कार्यप्रणाली को विकृत और अस्वस्थ करता है। इसकी शुरुआत अंतरंग साथियों के जोरदार आग्रह से होती है। पहले चरण में न चाहते हुए भी कुछ लोग साथियों का मान रखने के लिए इस आग्रह को नहीं ठुकराते। लेकिन बाद में उसकी गिरफ्त में आ जाते हैं। फिर उन्हें नशे से आनंद आने लगता है। एक समय ऐसा आता है, जब उसके बिना जीना असंभव-सा हो जाता है। लेकिन अनुशासन का कवच हो तो मन की मजबूती बढ़ जाती है।

इसलिए स्वयं पर नियंत्रण और अनुशासन जीवन की सफलता और संतुलन के मूल तत्व हैं। स्वयं पर नियंत्रण का अर्थ है अपनी भावनाओं, इच्छाओं और कार्यों पर काबू रखना। अनुशासन नियमों का पालन सुनिश्चित करता है। यह लक्ष्य प्राप्ति के लिए आवश्यक है और आत्म संयम के बिना संभव नहीं। स्वयं पर नियंत्रण और अनुशासन हमें विपरीत परिस्थितियों में भी स्थिर और संयमित बनाए रखते हैं। इससे हम अपने उद्देश्यों की ओर निरंतर अग्रसर हो सकते हैं।

मनुष्य की आध्यात्मिक समृद्धि का एक विश्वसनीय पैमाना उसका संतुलित और संयमित रहना है। नशे में अपार आनंद हो सकता है, लेकिन संगीत या कला में भी कम आनंद नहीं। सबसे दीन-हीन और दयनीय व्यक्ति वही है जिसका स्वयं पर नियंत्रण नहीं। अपने भीतर की शक्ति को जानकर प्रसन्न और संतुष्ट रहना चाहिए, क्योंकि इसी उद्देश्य से हम इस दुनिया में आए हैं।

क्लाइमेट चेंज से जंग, भारत के हाथ क्या लगा

कीर्तिवर्धन सिंह

अथर्ववेद में कहा गया है कि पृथ्वी हमारी माता हैं और हम उनके बच्चे हैं। भारतीय दर्शन और जीवन शैली हमेशा से प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व की संकल्पना के साथ जुड़ी रही है। भारत प्रकृति को पूजता भी है और इसके अनुसार उत्सव भी मनाता है।

एक पेड़ मां के नाम | पिछले दस वर्षों के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारत जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध लड़ाई में स्पष्ट रूप से विश्व का नेतृत्व करता हुआ दिखाई दे रहा है। हाल ही में पर्यावरण दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री ने 'एक पेड़ मां के नाम' अभियान की शुरुआत की। आज इस अभियान से देश का जन-जन जुड़ा हुआ महसूस कर रहा है और यह अभियान एक जनांदोलन का रूप लेता दिखाई पड़ रहा है।

सरल समाधान | हमारी सरकार देश-विदेश के सभी मंचों से पर्यावरण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दिखा चुकी है। ग्लासगो में हुए COP 26 में प्रधानमंत्री ने Lifestyle for Environment (LiFE) का अनूठा विचार प्रस्तुत किया। भारत मानता है कि जलवायु कार्रवाई व्यक्तिगत स्तर पर आरंभ होती है और प्रधानमंत्री मोदी ने जलवायु परिवर्तन की जटिल समस्या का एक सरल समाधान उपलब्ध कराया है।

वन्य जीवन | पर्यावरण से जुड़े सभी पहलुओं पर हमारी सरकार ने ध्यान केंद्रित किया है जिसका परिणाम अब दिखने लगा है। न केवल देश में वन आच्छादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है बल्कि पिछले दशक के दौरान बाघों की संख्या भी दोगुने से ज्यादा हो गई है। आज भारत में दुनिया के 75% से अधिक बाघों का वास है। अफ्रीकी चीतों को लाए जाने से भी भारत की वन्य जीवन विविधता को बढ़ावा मिला है। 2023 में 70 वर्षों के बाद यहां चीता शावक पैदा हुआ। यह प्रजाति देश में विलुप्त हो चुकी थी।

लक्ष्य पूरा | जहां एक ओर कई देश अपने जलवायु लक्ष्य को पूरा करने में विफल रहे हैं, वहीं भारत ने अंतिम समय सीमा से पहले ही अपने लक्ष्य को पूरा कर लिया है। उदाहरण के लिए, गैर फॉसिल स्रोतों से संस्थापित विद्युत क्षमता का 40% अर्जित करने का लक्ष्य समय सीमा से 9 वर्ष पहले पूरा कर लिया गया। एथनॉल मिश्रित पेट्रोल के लिए निर्धारित लक्ष्य भी समय सीमा से पांच महीने पहले ही अर्जित कर लिया गया।

AI Image

कॉमन रूम

गंगाजल की गुणवत्ता | नमामि गंगे कार्यक्रम की बदौलत इस पवित्र नदी के प्रदूषण को सफलतापूर्वक रोक दिया गया और इससे अनगिनत स्थानों पर जल की गुणवत्ता में सुधार दर्ज किया गया। यह लक्ष्य प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के हृदय के करीब रहा है जैसा कि उन्हें प्राप्त उपहारों की नीलामी से हुई समस्त आय नमामि गंगे कार्यक्रम को दान करने के उनके निर्णय से स्पष्ट होता है।

उज्ज्वला स्कीम | प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के चलते कार्बन डायॉक्साइड उत्सर्जन में भी कमी आई है और हजारों करोड़ की बचत भी हुई है। स्वच्छ एवं नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने के क्रम में भारत ने अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन के निर्माण में भी अग्रणी भूमिका निभाई है।

रैंकिंग में सुधार | इस प्रयासों का ही परिणाम है कि वैश्विक स्तर पर हमारी रैंकिंग में भारी सुधार हुआ है। अंतरराष्ट्रीय संस्था जर्मन वॉच का मानना है कि भारत की जलवायु परिवर्तन प्रदर्शन सूचकांक रैंकिंग जो 2014 में 30 थी, अब सुधरकर 2023 में 7वें स्थान पर पहुंच गई है।

एक पृथ्वी, कई प्रयास | विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण भी सरकार की नीतियों में शामिल रहा है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कहते हैं कि हमारा ग्रह एक है लेकिन हमारे प्रयास कई होने चाहिए - एक पृथ्वी, कई प्रयास। भारत बेहतर पर्यावरण और वैश्विक कल्याण के लिए होने वाले किसी भी प्रयास में सहायता करने के लिए दृढ संकल्पित है।

(लेखक केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन तथा विदेश राज्यमंत्री हैं)

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी वैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

पंजाब केसरी
संपादकीय
संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

भोजशाला और हिन्दू-मुस्लिम

भारत विभिन्न संस्कृतियों के संगम का देश है। यह ऐसा अद्भुत देश भी माना जाता है जिसमें हर मजहब के अलग- अलग फिरकों के लोग शान्ति और सौहार्द के साथ रहते आये हैं। यह ऐसा अनूठा देश भी है जिसमें विविध संस्कृतियों के लोग एक देश की पहचान बनें जबकि प्रत्येक धर्म को यहां फलने-फूलने की इजाजत भी मिली। इसकी असली वजह मूल भारतीय संस्कृति का वह स्थायी भाव है जो प्रत्येक मतावलम्बी के मत को बराबर का सम्मान देता है। इसमें एक-दूसरे से असहमत तो हुआ जा सकता है मगर आपसी अवमानना नहीं की जा सकती। मध्य प्रदेश के धार जिले में जिस भोजशाला पर विवाद पैदा हो रहा है उसे अगर हम इस नजरिये से देखें तो समस्या का हल निकाल लेना बहुत आसान हो सकता है। नाम से ही भोजशाला हिन्दू बोध कराती है। मगर इसके परिसर में एक कमाल मौला मस्जिद भी है। अत: हिन्दू व मुसलमान दोनों ही बारी-बारी से यहां पूजा-अर्चना करने आते हैं। यह सहिष्णुता ही हिन्दू धर्म की लब्ध सिंचित सम्पत्ति है। मगर कुछ हिन्दू संगठनों का कहना है कि भोजशाला उनके हवाले की जाये क्योंकि इसके विभिन्न हिस्सों में हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियों के अवशेष हैं। मुसलमानों की राय में एक पहुंचे हुए फकीर कमाल मौला के नाम से मस्जिद भी इसके परिसर में है। मुझे इस मामले में सन्त कबीर की वाणी याद आती है जिसमें वह हिन्दू-मुसलमान दोनों को ही सीख देते हैं।,

हिन्दू कहै मोहे राम पियारा तुरक कहे रहिमानी ,
आपस में दोऊ लरि-लरि मुए कोई मरम न जानि

हमने देखा कि अयोध्या में राम मन्दिर बनाने के लिए किस प्रकार देशव्यापी आन्दोलन चला था और उसमें कितनी हिंसा हुई थी। मरने वालों में हिन्दू भी थे और मुसलमान भी। अन्तत: सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर ही राम मन्दिर का निर्माण अयोध्या में हुआ। अयोध्या में पहले बाबरी मस्जिद को ढहा दिया गया और बाद में उस स्थान पर राम मन्दिर बना। यह ताजा इतिहास दर्ज हो चुका है जिसे अब कभी मिटाया नहीं जा सकता। भोजशाला के मामले में भी हिन्दू व मुस्लिम दोनों पक्षकारों की तरफ से मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय में मुकदमा चल रहा है। कुछ माह पहले उच्च न्यायालय ने ही भारतीय पुरातत्व विभाग को भोजशाला का वैज्ञानिक सर्वेक्षण करने का आदेश दिया था। इसने अपने सर्वेक्षण में पाया कि परिसर में स्थित मौजूदा धार्मिक भवनों का निर्माण मन्दिरों के प्राचीन अवशेषों से किया गया। परिसर में मस्जिद का निर्माण बहुत बाद में किया गया। जबकि भोजशाला 11वीं सदी में बनाई गई थी।

> **धर्म स्थानों का विवाद न केवल सामाजिक संरचना व इसके ताने-बाने को प्रभावित करता है बल्कि राष्ट्र को भी नुकसान पहुंचाता है। जिस तरह हिन्दू भारत के सम्मानित नागरिक हैं उसी प्रकार मुसलमान भी। अत: ऐसे विवादों को दोनों पक्षों द्वारा आपसी बातचीत करके निपटाना चाहिए। यह देश जितना हिन्दुओं का है उतना ही मुसलमानों का भी है। जरा सोचिये औरंगजेब को सबसे क्रूर व धर्मान्ध बादशाह माना जाता है मगर यह हकीकत भी है कि उसके राज में बड़ी संख्या में हिन्दू मनसबदार थे।**

पुरातत्व विभाग की लम्बी रिपोर्ट में कहा गया है कि परिसर से 94 मूर्तियां, 106 स्तम्भ, 82 भित्ती चित्र, 150 शिलालेख व 31 प्राचीन सिक्के मिले। स्तम्भों पर देवी-देवताओं की मूर्तियां उकेरी गई थीं। शिलालेखों में गणेश, ब्रह्मा व उनकी पत्नियों की छवि मौजूद है। स्तम्भों पर नृसिंह व काल भैरव की छवियां मौजूद हैं। हिन्दू भोजशाला को सरस्वती का मन्दिर मानते हैं। पुरातत्व विभाग ने लिखा है कि यह देवी सरस्वती का मन्दिर भी हो सकता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्तमान भोजशाला की संरचना में मन्दिरों के अवशेषों को पुन: इस्तेमाल करने के लिए उन पर उकेरी गई देवताओं और मानवों और पशुओं की आकृतियों को या तो काट कर निकाल लिया गया अथवा उन्हें विकृत कर दिया गया। जाहिर है कि मस्जिद में मूर्ति अवशेष नहीं लगाये जा सकते।

पुरातत्व विभाग अपने सर्वेक्षण में इस नतीजे पर पहुंचा है कि वर्तमान संरचना पहले के मन्दिरों के अवशेषों से बनाई गई है। जाहिर है कि पुरातात्विक सर्वेक्षण को हिन्दू अपने पक्ष में मानेंगे और तदनुसार ही मांग करेंगे। परन्तु यह इतिहास की गाथा है जिसमें वर्तमान पीढ़ियों की कोई भूमिका नहीं है। बेशक भारत में पांच सौ साल से अधिक समय तक सुल्तानी व मुगल साम्राज्य रहा। मगर मुस्लिम सुल्तानों से मुगल बादशाहों ने इस देश की संस्कृति को समझने में देर नहीं की और अपने दरबारों में हिन्दू मनसबदार व फौजदार से लेकर जागीरदार भी रखे। राजशाही के दौर में कुछ हिन्दू मन्दिरों का परिवर्तन हो सकता है क्योंकि वह राजशाही का दौर था और शाही फरमानों से लोगों का भविष्य तय हुआ करता था। हिन्दू मन्दिरों में उस समय अकूत सम्पत्ति हुआ करती थी जिसकी वजह से ये आक्रमण के घेरे में आ जाते थे। मन्दिर किसी राजा की शान व ऐश्वर्य के प्रतीक माने जाते थे।

प्रश्न पैदा होता है कि कब तक हम इतिहास की कब्रें खोदते रहेंगे। क्योंकि यह शाश्वत नियम है कि इतिहास की जड़ें कुरेदने से केवल पीछे की ओर ही चला जाता है। आगे बढ़ने व उज्ज्वल भविष्य के लिए कोई भी देश पुराने जख्मों को हरा नहीं करता है। बेशक इतिहास से सबक लिया जाता है न कि पुरानी पीढ़ियों के कृत्यों की लकीर पीटी जाती है। अत: यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि देश का सर्वोच्च न्यायालय भी भोजशाला मुकदमे को सुनेगा। हमें याद रखना चाहिए कि हिन्दू पक्ष मथुरा के श्रीकृष्ण जन्म स्थान व काशी की ज्ञानवापी मस्जिद को भी उसे सौंपे जाने की मांग कर रहा है। धर्म स्थानों का विवाद न केवल सामाजिक संरचना व इसके ताने-बाने को प्रभावित करता है बल्कि राष्ट्र को भी नुकसान पहुंचाता है। जिस तरह हिन्दू भारत के सम्मानित नागरिक हैं उसी प्रकार मुसलमान भी। अत: ऐसे विवादों को दोनों पक्षों द्वारा आपसी बातचीत करके निपटाना चाहिए। यह देश जितना हिन्दुओं का है उतना ही मुसलमानों का भी है। जरा सोचिये औरंगजेब को सबसे क्रूर व धर्मान्ध बादशाह माना जाता है मगर यह हकीकत भी है कि उसके राज में बड़ी संख्या में हिन्दू मनसबदार थे। यह भी सच है कि उसने कई हिन्दू मन्दिरों का विध्वंस किया। इसके लिए वर्तमान पीढ़ियों को दोषी ठहराना पूरी तरह गलत है क्योंकि जब भारत में बौद्ध धर्म का प्रभावी उदय हुआ था तो बौद्ध धर्मावलम्बियों ने भी हिन्दू मन्दिरों पर आक्रमण किये थे। अत: पूरे मामले को हमें साम्प्रदायिक रंग देने से बचना होगा। इसमें राजनीति को लाना भी अनुचित होगा क्योंकि लोकतान्त्रिक देश भारत में सभी धर्मों का बराबर सम्मान होता है।

आदित्य नारायण चोपड़ा
Adityachopra@punjabkesari.com

मणिपुर का सवाल है

गीता पाढा

"यह आजादी का कैसा अमृतकाल है,
जिसमें एक राज्य की कानून व्यवस्था बुरी तरह बेहाल है,,
ये उस जलते राज्य मणिपुर का सवाल है,
आखिर कब होगी हमारे राज्य में शांति बहाल है...।।"

आरएसएस-भाजपा रिश्तों में दूरियां नहीं !

फिरोज बख्त अहमद

संघ-भाजपा विचारक व प्रचारक, सुनील अंबेकर ने अपनी पुस्तक, "राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ": स्वर्णिम भारत के दिशा सूत्र में जो विचार रखे हैं, उनसे प्रकट होता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ व भाजपा एक जान दो जिस्म हैं, जिस में किसी शक की कोई गुंजाइश नहीं है। संघ एक विचारधारा है और भाजपा एक्शन, अर्थात् इस विचारधारा का व्यावहारिक व राजनीतिक निचोड़। किसी भी विचारधारा पर आधारित इस प्रकार की सक्षम व प्रथम जोड़ी विश्व में कहीं भी देखने को नहीं मिलती। इस विलक्षण लव-कुश जैसी जोड़ी की दिल से प्रशंसा इसलिए बनती है कि ये दोनों धड़े, अपनी विचारधारा से टस से मस नहीं होते। यही कारण है कि सौ वर्ष के अनथक परिश्रम के पश्चात् आज हम देखते हैं कि कांग्रेस जैसे मज़बूत संगठन की कमियों को जनता के समक्ष रख ये सनातनी उसका विश्वास जीतने और तीसरी बार अपनी सत्ता बनाने में कामयाब रहे। मगर अब ऐसा प्रतीत होता है कि इस ताकतवर जहाज की पेंदी में कहीं सुराख बनने शुरू हो गए हैं, जिनको समय पर भरा नहीं गया तो "टाइटैनिक" की भांति इतनी मेहनत से बनाया यह जहाज डूब सकता है, जिसकी दिली मनोकामना इंडी गठबंधन की है।

वास्तव में लव-कुश की इस जोड़ी में वह पहले जैसा वात्सल्य बना नहीं दिख रहा है। आरएसएस-भाजपा के रिश्ते पहले जैसे दूध और शकर जैसे, नहीं दिखाई पड़ते। वास्तविकता में तो ये ऐसे ही जुड़े हैं, जैसे शरीर में गोश्त से नाखून। कहीं भाजपा के वरिष्ठ नेता, जगत प्रकाश नड्डा, यह कहकर आरएसएस का वजन हल्का करने का प्रयास करते हैं कि भाजपा को या सरकार को अब संघ की आवश्यकता नहीं।

उधर संघ के सुतून और कद्दावर नेता, इंद्रेश कुमारजी भी दर्द-ए-दिल आख़िरकार छलक ही जाता है, जब वे एक चैनल पर भाजपा सरकार को अहंकार से बचने के लिए नेकी का सबक देते हैं। सच्चाई तो यह है कि एक घर में जब बहुत से बर्तन होते हैं, तो कभी-कभी आपस में खड़क ही जाते हैं। जब भी इस प्रकार से संघ में, भाजपा में या दोनों के बीच कोई समस्या आती है, या चकल्लिश हो जाती है तो इस ज्वाला पर पानी डालने का काम सरसंघचालक, डा. मोहन भागवत ही करते हैं। यही नहीं, आए दिन, हिंदू-मुस्लिम रटाखों, पटाखों की ज्वाला पर

भी वे पानी डाल ठंडक का वातावरण बनाते हैं। किसी स्थान पर व्याख्यान देते हुए उनकी भी दर्द की टीस निकली थी कि आज आरएसएस वह नहीं, जो हेडगेवार, गोलवलकर, श्यामा प्रसाद मुखर्जी, दीन दयाल उपाध्याय, वीर सावरकर, दत्तोपंत ठेंगड़ी और केदारनाथ साहनी के समय हुआ करती थी। अल्लाह जाने, उनका इशारा किस जानिब था। यह तो संगठन वाले ही जानते होंगे। जिस समय राम मंदिर की स्थापना हो रही थी, आरएसएस विश्व हिंदू परिषद की राम मंदिर स्थापना कमेटी के सर्वे सर्वा चंपत राय से खुश नहीं थी कि किस प्रकार से उसके लिए जमीन की व्यवस्था की गई, क्योंकि आरएसएस एक ऐसा संगठन है, जो ठेठ ईमानदार और इंसाफ परस्त है और इसके कार्यकर्ताओं में न तो लालच होता है, न अहं व घमंड और सबसे महत्वपूर्ण, महत्वाकांक्षा से ये कोसों दूर रहते हैं। एक सामान्य आरएसएस कार्यकर्ता अपनी जात को समाप्त कर संगठन व समाज के लिए अपने को समर्पित कर देता है, जब दिल्ली में भीम राव अंबेडकर सभागार में सावरकर पर एक संगोष्ठी पर पूछा गया कि वे पूर्ण रूप से सावरकर को समर्पित हैं तो किसी अच्छे पद पर क्यों नहीं आसीन होते, तो इस पर उन्होंने हाथ जोड़ते हुए कहा कि हेडगेवारजी ने इस प्रकार की मानसिकता से सदा दूर रहने का सबक़ दिया है। उर्दू का वह मुहावरा याद आ गया कि रंग लाती है हिना, पत्थर से पिस जाने के बाद। वैसे भी आरएसएस अपने कर्मठ कार्यकर्ताओं को संगठन से भाजपा पार्टी में समय-समय किसी पद पर भेजती रहती है।

27 सितंबर, 1925 को जब विजय दशमी के पावन दिवस पर समाज को सशक्त बनाने के उद्देश्य से डॉक्टर जी, अर्थात् हेडगेवार साहब ने समाज को सशक्त बनाने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की थी तो उनकी आयु 36 वर्ष थी और उनके मन में राजनेता बनने की कोई महत्वकांक्षा हर्गिज नहीं थी, क्योंकि यदि वे राजनेता बनना चाहते तो बजाय संघ के एक पार्टी की स्थापना करते, मुख्यमंत्री, मंत्री आदि बनते, मगर उनका यह लक्ष्य था ही नहीं।

उन्होंने भारत की स्वाधीनता के लिए भी अपने को समर्पित किया हुआ था। स्वयंसेवकों के साथ स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने पर उन्हें अंग्रेज सरकार ने एक साल तक जेल में बंद रखा था खेद का विषय यह है कि डॉक्टर जी के अद्वितीय व्यक्तित्व, यथार्थवादिता और दूरदर्शिता की खूबियों के अतिरिक्त जो और उनमें अनगिनत गुण थे, आज उनके पद चिन्हों पर चलने वाले स्वयंसेवकों और भाजपाई कार्यकर्ताओं में ऐसा नहीं देखा जा रहा।

विकलांगता के चित्रण पर सुप्रीम कोर्ट की सराहनीय पहल

राजेश माहेश्वरी

बीते दिनों विकलांग व्यक्तियों के अपमानजनक चित्रण के लिए फिल्म 'आंख मिचोली' पर प्रतिबंध लगाने की याचिका पर सुनवाई करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसले में फिल्मों और वृत्तचित्रों सहित दृश्य मीडिया में विकलांग व्यक्तियों के प्रति रूढ़िबद्धता और भेदभाव को रोकने के लिए व्यापक दिशा-निर्देश निर्धारित किए। दरअसल, 2023 में रिलीज हुई फिल्म में अल्जाइमर पीड़ित एक पिता के लिए भुलक्कड़ बाप, मूक-बधिर के लिए साउंड प्रूफ सिस्टम, हकलाने वाले शख्स के लिए अटकी हुई कैसेट जैसे शब्दों का इस्तेमाल किया गया है। इसको आधार बनाकर दिव्यांग वकील निपुण मल्होत्रा ने पहले दिल्ली हाई कोर्ट में याचिका दाखिल कर इस फिल्म की निर्माता कंपनी सोनी पिक्चर को निर्देश देने की मांग की थी कि वह दिव्यांग लोगों द्वारा झेली जाने वाली परेशानियों के बारे में लोगों को जागरूक करने के लिए शार्ट मूवी बनाएं न कि उनका मजाक बनाने वाली फिल्में बनाएं। दिल्ली हाई कोर्ट ने मल्होत्रा की याचिका खारिज कर दी थी। हाई कोर्ट से खारिज होने के बाद सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की गई थी।

वर्ष 2011 की जनगणना के मुताबिक भारत की कुल जनसंख्या में 2.21 प्रतिशत की हिस्सेदारी रखने वाले दिव्यांगजनों की समाज में सम्पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने पर बल देने वाले कानूनों की उपस्थिति के बावजूद सरकारों ने इस ओर कम ही ध्यान दिया है। विदित हो कि सरकार द्वारा दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 पारित किया जा चुका है ऐसे में सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देशों का पालन अपरिहार्य हो जाता है।

विकलांगता को हमेशा हमारे समाज में हाशिये पर रखा गया है। यही वजह है कि विकलांगता को परिभाषित करते हुए विकलांग लोगों को कमतर या अलग आंका जाता है। विकलांग लोगों को इसी सोच की वजह से शिक्षा, रोजगार, घर-परिवार और सार्वजनिक जगहों पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है। विकलांगता के प्रति पूर्वाग्रह इतने गहरे हैं कि इसे हीनता, पाप, कर्मों का फल और बेचारगी के तौर पर समझा जाता है। समाज में विकलांगता को लेकर जागरूकता कम होने की वजह से संवेदनशीलता की भारी कमी है। यह धारणा समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगों में है। मीडिया के अलग-अलग माध्यमों की भी इसमें बड़ी भूमिका है। सिनेमा, टीवी या विज्ञापन हर जगह विकलांगता को लेकर उस संवेदनशीलता और जानकारी का अभाव नजर आता है जिसकी आवश्यकता है।

सुप्रीम कोर्ट ने फिल्मों में दिव्यांगजनों को दिखाए जाने को लेकर भी गाइडलाइन भी जारी की है। कोर्ट ने कहा कि दिव्यांगजनों की चुनौतियां, उपलब्धियां और समाज में उनके

योगदान को भी ध्यान में रखना चाहिए। फिल्म का संदेश क्या है, ये भी फिल्मकार या सीन क्रिएट करने वाले को ध्यान में रखना चाहिए। दिव्यांगों को लेकर सुप्रीम कोर्ट ने ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए गाइडलाइन जारी की है। सुप्रीम कोर्ट ने पहली बार फिल्म, डॉक्यूमेंट्री और विजुअल मीडिया के लिए दिव्यांगजनों के हित में गाइडलाइन जारी की है।

यह विडंबना ही है कि प्राकृतिक कारणों या किसी दुर्घटना के चलते शारीरिक अपूर्णता के शिकार लोगों के प्रति भारतीय समाज में कमोबेश सम्मानजनक व्यवहार नहीं किया जाता रहा है। हालांकि, अब स्थितियों में बदलाव आया है। अब उन्हें एक सम्मानजनक नाम दिव्यांग देने का प्रयास किया गया है लेकिन परंपरागत समाज में उनके उपहास व उपेक्षा का भाव अब भी किसी न किसी रूप में सामने आ जाता है। यही वजह है कि इस दिशा में देश की शीर्ष अदालत को सार्थक पहल करनी पड़ी है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि शारीरिक अपूर्णता वाले दिव्यांगों को अपंग व ऐसे अन्य अपमानजक शब्दों से आहत करने की इजाजत किसी को नहीं दी सकती है। दरअसल, उनको लेकर समाज में व्याप्त रूढ़िवादी सोच को बदलने की जरूरत है। अब फिल्म निर्माताओं का भी दायित्व है कि फिल्मों का निर्माण करते वक्त ऐसे हास्यबोध वाले चित्रण से गंभीरता के साथ परहेज किया जाए। कैमरे के जरिये उनका ऐसा चित्रण होना चाहिए जिससे समाज में उनके प्रति संवेदनशील, समावेशी सोच और यथार्थवादी रवैया अपनाया जाए।

फिल्म, टेलीविजन, विज्ञापन सूचनाओं के वे माध्यम है जिनकी पहुंच बड़ी संख्या में लोगों तक है। लेकिन बात जब प्रतिनिधित्व की आती है तो ये केवल एक बड़े वर्ग को ही अपनी टॉर्गेट ऑडियंस मानते हैं। यह समझना बहुत जरूरी है कि विकलांग लोगों को मुख्यधारा के समाज में लाने के लिए उन जगहों पर अपना स्पेस क्लेम करना होगा जो अन्य लोगों के लिए हैं। सिनेमा में अक्सर विकलांगता को लेकर एक नकारात्मक विचारों का ज्यादा बोलबाला रहा है। फिल्म और टेलीविजन के जरिये विकलांगता के प्रति पूर्वाग्रहों को स्थापित करने का काम किया गया है। फिल्म, टीवी, विज्ञापनों में हर जगह बड़े पैमाने पर ग्लैमरस व्यक्तियों, नॉन डिसएब्लड का इस्तेमाल करता है। इतना ही नहीं विकलांग लोगों से जुड़े अभियान या आवश्यकता को भी ऐसे ही लोगों के द्वारा संचालित करते हुए देखा जाता है। यह चलन विकलांग लोगों को अलग-थलग करने और बॉडी शेमिंग जैसी व्यवहारों को बढ़ावा देते हैं।

भारतीय सिनेमा जगत में तो निर्देशकों ने विकलांगता को बहुत ही अनुचित तरीके से पेश किया है। केवल कुछ गिने-चुने निर्देशक है जिन्होंने विकलांग लोगों के नजरिये से फिल्में बनाकर विकलांगता के बारे में जागरूकता फैलाने का काम किया है। विकलांग लोगों के जीवन के पहलुओं को संवेदनशीलता और समावेशी सोच के तहत सामने रखा है। उनकी सीमाओं, क्षमताओं और इच्छाओं पर बात की है। हिंदी कमर्शियल या मुख्यधारा के सिनेमा से विकलांगता को लेकर स्टीरियोटाइप को बढ़ावा देने का काम किया गया है। भारतीय फिल्मों, वेब सीरीज और विज्ञापनों में विकलांगता का गलत चित्रण की वजह से समाज में नकारात्मक सोच बनी हुई है।।

शहरी गरीबों के लिए बेहतर काम करने पर छत्तीसगढ़ को मिले 5 नेशनल अवार्ड

रायपुर, आशीष शर्मा/पंजाब केसरी। विकास और कामकाज के मामले में छत्तीसगढ़ में एक बार फिर परचम लहराया है। छत्तीसगढ़ को इस बार फिर 5 नेशनल अवार्ड मिले हैं। राष्ट्रीय आजीविका मिशन के तहत शहरी गरीब परिवारों को आजीविका के साथ आर्थिक संकट से उबारने के मामले में छत्तीसगढ़ को पुरस्कार से नवाजा गया है।

उसमें नगरीय निकाय को चार और सुडा को एक पुरस्कार मिले हैं। इधर मुख्यमंत्री विष्णु देव साय ने नेशनल अवार्ड मिलने पर बधाई दी है। उन्होंने कहा कि यह विष्णु के सुशासन में शहरी गरीब परिवारों को मजबूत बनाने और आजीविका के अवसर बढ़ाने के लिए राज्य को राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि छत्तीसगढ़ को दीनदयाल अंत्योदय योजना, शहरी आजीविका मिशन में उत्कृष्ट कार्यों के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार दिए जा रहे हैं।

इधर डिप्टी सीएम अरुण साव ने कहा कि यह राज्य के सम्मान का विषय है। उन्होंने केंद्र सरकार को धन्यवाद भी दिया। इन पुरस्कारों में छत्तीसगढ़ के बिलासपुर, चापा, रायगढ़ और भाटापारा का चयन स्पार्क 2023-24 पुरस्कारों के लिए किया

गया है। हालांकि छत्तीसगढ़ के सबसे बड़े नगर निगम राजधानी रायपुर का कहीं जिक्र नहीं है। यह अवार्ड केंद्रीय आवासान और शहरी कार्य मंत्रालय देगा।

इसके लिए दिल्ली में एक समारोह में केंद्रीय शहरी कार्य मंत्री मनोहर लाल खट्टर और राज्य मंत्री तोखन साहू यह पुरस्कार देंगे। दरअसल, छत्तीसगढ़ में 2653 महिला समूहों का गठन किया गया है। इनमें 1532 समूहों को एक करोड़ 53 लाख 20 हजार के फंड दिए गए हैं। ताकि वे आत्मनिर्भर होकर व्यवसाय कर सकें। इसी तरह स्वरोजगार कार्यक्रम के तहत भी 3000 से ज्यादा लोगों को 31 करोड़ से अधिक रुपए का पर्सनल लोन दिया गया है। वही छत्तीसगढ़ के 340 समूह के 1352 सदस्यों को ग्रुप लोन के जरिए 7 करोड़ 73 लाख से अधिक की राशि का ऋण दिया गया है।

हनीट्रैप में फंसाकर युवक को मारी थी 40 गोलियां

हिसार, (पंजाब केसरी) : हरियाणा का कुख्यात गैंगस्टर काला खैरमपुरिया इस समय स्पेशल टास्क फोर्स की रिमांड पर है। काला खैरमपुरिया थाईलैंड में छिपा हुआ था। एसटीएफ ने

उसे वहीं से पकड़ा था। रिमांड के दौरान 15 से ज्यादा वारदातों के बारे में कई राज उगलने में जुटा है। पुलिस सूत्रों के मुताबिक, काला खैरमपुरिया ने दिल्ली के राजौरी गार्डन स्थित बर्गर किंग आउटलेट पर अमन जून नाम के शख्स की हत्या का भी खुलासा किया है। हनीट्रैप में फंसाकर युवक को मारी 40 गोलियां मारी थी। लड़की काला खैरमपुरिया के संपर्क में थी। स्पेशल टास्क फोर्स काला खैरमपुरिया द्वारा किए गए खुलासों की बारीकी से जांच कर रही है। सूत्रों के अनुसार, पूछताछ में उसने उस लड़की के नाम को भी उजागर किया, जो वारदात के वक्त अमन जून के साथ आउटलेट पर मौजूद थी। इस लड़की का नाम मीनू बताया गया है। जो काला खैरमपुरिया के संपर्क में थी। झज्जर के रहने वाले अमन जून की 18 जून को राजौरी गार्डन में गोलियां मारकर हत्या कर दी थी।

स्वदेश में ही बनाए जाएंगे 1,048 करोड़ रुपये के रक्षा उपकरण

नई दिल्ली, (पजाब केसरी): विदेश से आयात किए जाने वाले करीब 1,048 करोड़ रुपये मूल्य के रक्षा उपकरणों को भारत में ही बनाया जाएगा। इसके लिए रक्षा मंत्रालय के रक्षा उत्पादन विभाग (डीडीपी) ने 346 वस्तुओं वाली एक सूची को अधिसूचित किया है। रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए यह पांचवीं सकारात्मक स्वदेशीकरण सूची (पीआईएल) है।

रक्षा उत्पादन विभाग (डीडीपी) ने 346 वस्तुओं वाली एक सूची को अधिसूचित किया

इससे पहले, रक्षा उत्पादन विभाग (डीडीपी) द्वारा 4,666 वस्तुओं की चार सूचियां अधिसूचित की गई थी, जिनका आयात प्रतिस्थापन मूल्य 3,400 करोड़ रुपये है। इन वस्तुओं व उपकरणों का पहले ही स्वदेशीकरण किया जा चुका है। डीपीएसयू के लिए ये पांच सूचियां सैन्य मामलों के विभाग (डीएमए) द्वारा अधिसूचित 509 वस्तुओं की पांच सकारात्मक स्वदेशीकरण सूचियों के अतिरिक्त हैं। इन सूचियों में अत्यधिक जटिल प्रणालियां, सेंसर, हथियार और गोला-बारूद शामिल हैं।जून 2024 तक, डीपीएसयू और एसएचक्यू द्वारा स्वदेशीकरण के लिए उद्योग को 36,000 से अधिक रक्षा वस्तुओं की पेशकश की गई थी। उनमें से पिछले तीन वर्षों में 12,300 से अधिक वस्तुओं का स्वदेशीकरण किया गया है। परिणामस्वरूप, डीपीएसयू ने घरेलू विक्रेताओं को 7,572 करोड़ रुपये के ऑर्डर दिए हैं।रक्षा मंत्रालय के मुताबिक इनमें रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण लाइन रिप्लेसमेंट यूनिट/सिस्टम/सब-सिस्टम/असेंबली/सब-असेंबली/स्पेयर और कंपोनेंट तथा कच्चा माल शामिल है। इनका आयात प्रतिस्थापन मूल्य 1,048 करोड़ रुपये है। रक्षा मंत्रालय ने 2020 में एक 'सृजन पोर्टल' लॉन्च किया था।

अखाड़ा परिषद ने 13 महामंडलेश्वरों को किया निष्कासित, 112 संतों को थमाया नोटिस

प्रयागराज (उप्र), (पंजाब केसरी): साधुओं के लिए बनाए गए नियमों का उल्लंघन करने के आरोप के बाद अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद (एबीएपी) ने 13 महामंडलेश्वरों और संतों को निष्कासित कर दिया है। उन पर पैसे बनाने और धार्मिक कार्यों की अवहेलना करने का आरोप है। वहीं, 112 संतों को नोटिस जारी कर उनसे स्पष्टीकरण मांगा गया है। अगर वो जवाब नहीं देते हैं तो उन्हें भी निष्कासित कर दिया जाएगा।

एबीएपी की आंतरिक जांच में खरा न उतरने पर निकाले गए महामंडलेश्वर और संत अब महाकुंभ में भी भाग नहीं ले सकेंगे। उधर, 112 संतों को 30 सितंबर तक नोटिस का जवाब देने को कहा गया है। संतोषजनक जवाब न मिलने पर उन पर भी गाज गिरेगी। ऐसे संतों को भी कुंभ मेले में नहीं जाने दिया जाएगा। यह जांच अप्रैल माह में शुरू हुई थी और अभी भी जारी है। अब तक जूना

- **अब तक जूना अखाड़े ने 54, श्री निरंजनी अखाड़े ने 24 और निर्मोही अनी अखाड़े ने 34 संतों को नोटिस दिया**

अखाड़े ने 54, श्री निरंजनी अखाड़े ने 24 और निर्मोही अनी अखाड़े ने 34 संतों को नोटिस दिया है। इसमें 13 महामंडलेश्वर, 24 मंडलेश्वर और महंत शामिल हैं। निर्मोही अनी अखाड़े के अध्यक्ष और अखाड़ा परिषद (महानिर्वाणी समूह) के महामंत्री श्रीमहंत राजेंद्र दास ने आधा दर्जन संतों को अखाड़े से निष्कासित कर दिया है।इनमें नासिक के महामंडलेश्वर जयेंद्रानंद दास, चेन्नई के महामंडलेश्वर हरेंद्रानंद, अहमदाबाद के महंत रामदास, उदयपुर के महंत अवधूतानंद और कोलकाता के महंत विजयेश्वर दास शामिल हैं। इनके अलावा नासिक के आठ, उज्जैन के सात, हरिद्वार के छह, द्वारका के दस और रांची के एक संत को नोटिस जारी कर जवाब मांगा गया है।वहीं श्री निरंजनी अखाड़े ने महामंडलेश्वर मंदाकिनी पुरी को निष्कासित कर उनके खिलाफ पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराई है। इनके अलावा सात संतों को निष्कासित किया गया है।एबीएपी और श्री निरंजनी अखाड़े के अध्यक्ष श्रीमहंत रवींद्र पुरी ने कहा, 'छह संतों की आंतरिक जांच में कई महामंडलेश्वर और संत खरे नहीं उतर पाए।

निरंजनी अखाड़े की महामंडलेश्वर मंदाकिनी पुरी को निष्कासित कर पुलिस कार्रवाई की गई है। जो भी गलत होगा उसके खिलाफ आगे भी कार्रवाई की जाएगी। अखाड़े से निष्कासित लोगों को महाकुंभ-2025 में प्रवेश नहीं दिया जाएगा'

नकली सोने की मूर्तियां बेचने वाले के घर में मिली सुरंग

कोलकाता, (पंजाब केसरी): पश्चिम बंगाल के दक्षिण 24 परगना जिले में पुलिस ने कथित रूप से नकली सोने की मूर्तियां बेचने वाले व्यक्ति के घर के नीचे एक सुरंग का पता लगाया जो पास की एक नहर से जुड़ती है। यह नहर मतला नदी में मिलती है। आरोपी की पहचान सद्दाम सरदार के रूप में हुई है और संदेह है कि उसने सोमवार को पुलिस की छापेमारी के दौरान भाग निकलने के लिए इस सुरंग का इस्तेमाल किया था। अधिकारी ने बताया कि शिकायत मिली थी कि सरदार ने सोशल मीडिया पर नकली सोने की मूर्तियां बेचकर कई लोगों को ठगा और कई लोगों से जिस सामान के लिए पैसे लिए उन्हें वह नहीं दिया।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com
स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • बुधवार • 17 जुलाई • 2024
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

जहां तक स्वार्थ का संबंध है, मनुष्य पशु ही तो है। अगर पशु कहना कुछ कड़ा मालूम होता हो तो उसे 'बड़ा पशु' कहिए। पशु का स्वार्थ छोटा होता है और मनुष्य का बड़ा।

-आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

थोक महंगाई में बढ़त

खुदरा महंगाई के बाद अब थोक महंगाई ने भी आम लोगों को तगड़ा झटका दिया है। जून महीने में खुदरा महंगाई दर बढ़कर 5.08 फीसद पर पहुंच गई थी जो चार महीने का उच्चतम स्तर है। अब थोक महंगाई ने भी लगातार चौथे महीने बढ़त दिखाई है। वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय ने सोमवार को कहा कि थोक महंगाई बढ़ने की मुख्य वजह खाद्य पदार्थों, कच्चे तेल तथा प्राकृतिक गैस, खनिज तेल तथा अन्य विर्निमित वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि रही। गौरतलब है कि थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यूपीआई) आधारित महंगाई मई में 2.61 फीसद के स्तर पर थी। जून, 2023 में यह शून्य से 4.18 फीसद नीचे रही थी। फरवरी, 2023 में यह 3.85 फीसद थी। खाद्य वस्तुओं की

महंगाई दर जून में 10.86 फीसद बढ़ी जबकि मई माह में यह 9.82 फीसद थी। सब्जियों की महंगाई दर जून में 38.76 फीसद रही जो मई माह में 32.42 फीसद थी। प्याज की महंगाई दर 66.37 फीसद रही जबकि आलू की महंगाई दर 66.37 फीसद रही। दालों में भी 21.64 फीसद की बढ़त दर्ज की गई। फलों, अनाज, दूध आदि अन्य खाद्य पदार्थों के दामों में भी बढ़त का रुझान रहा। दरअसल, जून माह में थोक दामों में बढ़ोतरी व्यापक रही। ईंधन और बिजली को छोड़कर सभी प्रमुख क्षेत्रों में दाम बढ़े। बेशक, जुलाई माह में कुछ राहत मिलने के अनुमान है। अनुकूल तुलनात्मक आधार के साथ-साथ वैश्विक जिंस कीमतों में कुछ नरमी के कारण जुलाई माह में थोक महंगाई में दो फीसद तक नरमी आने की उम्मीद अर्थशास्त्री जतला रहे हैं। अलबत्ता, नरमी की संभावना को कच्चे तेल के दामों में अस्थिरता से झटका लग सकता है। जुलाई माह में कच्चे तेल के दामों में अस्थिरता के चलते मांग-आपूर्ति के मद्देनजर मासिक आधार पर कच्चे तेल में वृद्धि का रुझान देखने को मिला तो थोक महंगाई पर दबाव बढ़ सकता है। बेशक, थोक महंगाई में बढ़त का रुझान केंद्रीय बैंक को उतना चिंता में नहीं डालता जितना खुदरा महंगाई का रुझान। भारतीय रिजर्व बैंक मौद्रिक नीति तैयार करते समय मुख्य रूप से खुदरा मुद्रास्फीति को ध्यान में रखता है। लेकिन यह भी सच है कि थोक दामों का असर भी खुदरा महंगाई पर कुछ समय बाद दिखलाई पड़ने लगता है। फिर, धारणा से भी निश्चित ही आर्थिक गतिविधियां प्रभावित होती हैं, जिससे इनकार नहीं किया जा सकता। बहरहाल, कर संग्रह आदि आर्थिक संकेतक मजबूत हैं, जिससे दामों के सीजनल दबावों से पार पाने में मदद मिलेगी।

अंतहीन सत्ता संघर्ष

नेपाल में खड़ग प्रसाद शर्मा ओली के नेतृत्व में नई गठबंधन सरकार का गठन हो गया है। सोमवार को ओली ने चौथी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। पिछले दिनों नेपाली कांग्रेस के अध्यक्ष शेरबहादुर देउबा और सीपीएन (यूएमएल) के अध्यक्ष ओली के बीच नई गठबंधन सरकार बनाने के लिए समझौता हुआ था। समझौते के बाद पुष्प कमल दहल 'प्रचंड' की सरकार का जाना सुनिश्चित था। नेपाल पिछले कई वर्षों से राजनीतिक अस्थिरता का सामना कर रहा है। वास्तव में वह संसदीय लोकतंत्र की एक विडंबना का भी सामना कर रहा है कि संसद में हासिल प्रचंड बहुमत कभी-कभी राजनीतिक स्थिरता की बजाय अस्थिरता पैदा करता है। दिसम्बर, 2017 के संसदीय चुनाव में सीपीएन (यूएमएल) और माओवादी सेंटर, दोनों

ने मिल कर चुनाव लड़ा था और 275 सदस्यीय सदन में 174 सीटें जीतने में सफल हुए थे लेकिन आगे चलकर इस सरकार का भी पतन हो गया। अक्सर राजनीतिक नेताओं की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं के कारण ऐसा होता है। आम धारणा के विपरीत विचारधारा या कैडर आधारित पार्टियां भी लोकतंत्र की इस बीमारी से मुक्त नहीं हैं। हालांकि कम्युनिस्ट पार्टियां उदारवादी लोकतंत्र को 'बुर्जुवा लोकतंत्र' कहती हैं। यह भी कम हास्यास्पद नहीं है कि वर्ग संघर्ष में विश्वास करने वाली राजनीतिक पार्टियां नेपाल में सत्ता-संघर्ष में उलझ गई हैं। दो दिग्गज कम्युनिस्ट नेताओं ओली और प्रचंड की लड़ाई राजनीतिक अस्थिरता का कारण बन रही है। नई सरकार के सामने देश में राजनीतिक स्थिरता बनाए रखने की कठिन चुनौती है। राजनीतिक अस्थिरता देश के आर्थिक संकट को बढ़ा सकती है। विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी वैश्विक संस्थाओं ने चेतावनी दी है कि अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए सुधारवादी कदम नहीं उठाए गए तो नेपाल आर्थिक संकट के भंवर में फंस सकता है। ओली चीन समर्थक माने जाते हैं। उनके पिछले शासन के दिनों में भारत के संबंध नेपाल के साथ कटु हो गए थे। प्रधानमंत्री मोदी ने नये नेपाली प्रधानमंत्री ओली को बधाई दी है। वस्तुतः भारत और चीन, दोनों पड़ोसी देश नेपाल में अपने अनुकूल सरकार चाहते हैं। लेकिन नेपाल के वर्तमान राजनीतिक अस्थिरता के दौर को हल करने में इन दोनों की भूमिका निर्णायक साबित नहीं हो सकती। देश में राजनीतिक स्थिरता के लिए वहां के शीर्ष नेताओं को ही आगे आना होगा।

चर्चा/रुपेश राय

मां के नाम पेड़ और उजड़ते पहाड़

एक तरफ देश भर में इस समय हर आम और खास अपनी मां के नाम पर पेड़ लगाने की होड़ में है। मुकाबला इस बात का भी है कि कैसे वे पेड़ लगाते हुए अपने फोटो एवं सेल्फियों को सोशल मीडिया पर वायरल करें। हमें प्रकृति का संरक्षण करने की जिम्मेदारी संभालनी चाहिए, क्योंकि प्रकृति हमारी मां की तरह हमेशा हमें संभालती है, हमें पोषित करती है, हमें सुरक्षित रखती है।

पेड़ों और पहाड़ों का महत्त्व समझने के लिए हमें समय-समय पर पेड़-पौधे लगाना, उनकी सुरक्षा करना, पहाड़ों की सुरक्षा करना, प्राकृतिक संसाधनों का सही इस्तेमाल, प्रदुषण कम करने के प्रयास और प्रकृति की सुरक्षा में हमारी सहायता करने के लिए मिल कर काम करना चाहिए। दिखावे के लिए ही सही पर इस तरह के अभियानों से किसी को विरोध नहीं करना चाहिए। जहां तक हो सके पेड़ लगाने के लिए सहयोग करना चाहिए। लेकिन यह भी दिखता है कि 'भारत का मुकुट' कहा जाने वाला हिमालय लगातार उजड़ रहा है। इसका कारण है पेड़ों की अनवरत कटाई और वहां विकास का पर्याय बन चुका पर्यटन। पहाड़ों की प्राकृतिक सुषमा निहारने के लिए आने वालों से लेकर पर्वत श्रृंखला में बने आस्था के केंद्रों में माथा नवाने के लिए लाखों की संख्या में आने वाले श्रद्धालु पर्वतों को बर्बाद करने में बराबर योगदान दे रहे हैं। कुछ समय से पूरी हिमालय पर्वत श्रृंखला में आने वालों की तादाद में अप्रत्याशित रूप से बढ़ोतरी हुई है। उत्तराखंड एवं हिमाचल प्रदेश में सर्वाधिक पयर्टक पहुंच रहे हैं। यहीं सबसे ज्यादा तबाही भी देखने को मिल रही है। हर वर्ष पर्यटकों के नाम से प्रकृति को तबाह करने वालों के झुंड आ रहे हैं, और साल-दर-साल उनकी संख्या में इजाफा हो रहा है। समस्या के समाधान के लिए हमें प्रकृति के संरक्षण के प्रति सचेत और संवेदनशील होना होगा। पेड़-पौधों को बढ़ावा देना, प्राकृतिक संसाधनों का सही तरीके से उपयोग, प्रदूषण कम करने और प्रकृति की सुरक्षा करने के लिए हमें मिल-जुल कर काम करना होगा। समस्या के मूल कारणों को समझना होगा, उन्हें हल करने के लिए संवेदनशीलता के साथ काम करना होगा और प्रकृति के संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध रहना होगा।

आंदोलन नहीं चुनाव हारे

अयोध्या

अवधेश कुमार

राहुल गांधी द्वारा हाल में लोक सभा के अंदर और बाहर दिए जा रहे कुछ वक्तव्यों का गहराई से विश्लेषण करने की आवश्यकता है। लोक सभा में उन्होंने भाजपा पर हमला करते हुए हिन्दू शब्द की अपने अनुसार व्याख्या की तो गुजरात के राजकोट में कहा कि आडवाणी जी ने जो अयोध्या आंदोलन आरंभ किया उसे आईएनडीआईए ने हरा दिया है। लोक सभा में उन्होंने कहा कि जो लोग हिन्दू-हिन्दू करते हैं, वो 24 घंटे हिंसा-हिंसा, नफरत-नफरत करते हैं। बाद में उन्होंने कहा कि नरेन्द्र मोदी पूरा हिन्दू समाज नहीं हैं, भाजपा पूरा हिन्दू समाज नहीं है, संघ पूरा हिन्दू समाज नहीं है।

राजकोट और लोक सभा के दोनों बयान अलग-अलग दिखाई दे सकते हैं, पर हैं दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए और कई मायनों में उससे ज्यादा डरावने जितना हमने पहली दृष्टि में महसूस किया। राहुल गांधी के रणनीतिकार और सलाहकार उन्हें समझा रहे हैं कि संघ, भाजपा और मोदी के वैचारिक व निजी विरोध के तीखे तेवर और हमलावर वक्तव्यों से कांग्रेस को चुनाव में लाभ मिला है, इसलिए आगे और तीखा व हमलावर बनना है। किंतु हिन्दू, हिन्दुत्व और राम जन्मभूमि आंदोलन न दलीय राजनीति का विषय है, और न केवल भाजपा का। क्या फैजाबाद संसदीय क्षेत्र से भाजपा उम्मीदवार की पराजय अयोध्या आंदोलन की पराजय है?

राहुल के सलाहकारों, रणनीतिकारों को या तो अयोध्या आंदोलन और उसके महत्त्व का ज्ञान और अहसास नहीं है, या वो राजनीतिक लाभ के लिए इसे अत्यंत छोटा और भाजपा तक सीमित करने की कुत्सित रणनीति पर चल रहे हैं। न अयोध्या आंदोलन लालकृष्ण आडवाणी ने आरंभ किया और न ही उनके बैठ जाने से यह समाप्त हुआ। सही है कि राजनीति में भाजपा ने ही अयोध्या आंदोलन में एक समय पूरी शक्ति लगाई। 6 दिसम्बर, 1992 के बाद उसकी तीन राज्य सरकारें बर्खास्त हो गईं। भाजपा ने 1988 के पालमपुर अधिवेशन में अयोध्या आंदोलन को प्रस्ताव में शामिल किया। उच्चतम न्यायालय के फैसले में भी स्पष्ट है कि यह आंदोलन अंग्रेजों के समय और उसके पहले भी था तथा आजादी के बाद न्यायिक सहित कई स्तरों पर लड़ाई चलती रही। भाजपा ने तय किया कि आंदोलन को धार देने के लिए हमें प्रमुख कार्यक्रमों में इसे शामिल करना चाहिए और इसी कारण सोमनाथ से अयोध्या तक आडवाणी जी की रथ यात्रा निश्चित हुई। आडवाणी जी ने 6 दिसम्बर, 1992 के बाबरी विध्वंस के बाद इंडियन एक्सप्रेस में लिखे अपने लेख में इसे जीवन का सबसे दुखद दिन कहा था। उसके बाद वे आंदोलन में सक्रिय नहीं दिखे। क्या इससे बाबरी मस्जिद की जगह श्रीराम मंदिर निर्माण का आंदोलन खत्म हो गया?

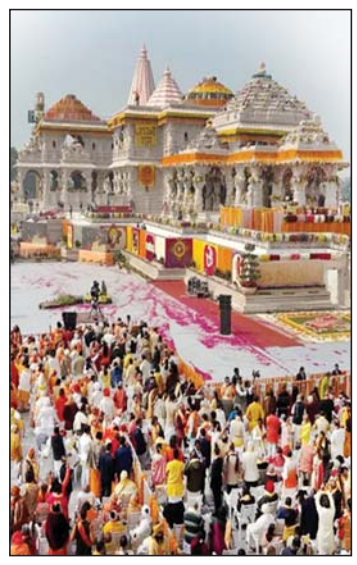

विपक्ष की रणनीति अयोध्या पर भाजपा के विचार और व्यवहार को परास्त साबित करने की है। फैजाबाद से जीते सपा सांसद अवधेश प्रसाद को लोक सभा में आगे बिठाकर विपक्ष भाजपा के अंदर सतत पराजय का भाव स्थापित करने के साथ आम लोगों के जेहन में भी इसे बनाए रखने की रणनीति अपना रहा है। अयोध्या आंदोलन केवल मंदिर निर्माण का आंदोलन नहीं था। भारत सहित संपूर्ण विश्व के हिन्दू समाज को सांस्कृतिक रूप से पुनर्जागृत करने, प्रखर करने और भविष्य में मानवता का नेतृत्व करने की दृष्टि से उसके मानसिक निर्माण का आंदोलन था। यह प्रक्रिया अभी पूरी नहीं हुई है। बावजूद हम देख सकते हैं कि पिछले कुछ वर्षों में संपूर्ण विश्व का हिन्दू अपने धर्म-सभ्यता-संस्कृति, आचार-विचार को लेकर पहले से ज्यादा मुखर और आवश्यकता पड़ने पर आक्रामक हुआ है। इसका असर भारत के साथ उन सारे देशों में है, जहां-जहां हिन्दुओं की ठीकठाक संख्या है। इसके विरोधियों की कोशिश है कि उनके अंदर किसी तरह हीन ग्रंथि पैदा करो। अंग्रेजों ने इतिहास, समाजशास्त्र तथा सभ्यता की व्याख्याओं से हिन्दू समाज के अंदर यही हीन ग्रंथि पैदा की थी जो अभी तक खत्म नहीं हुई है।

राहुल की संसद में कही गई बात या अयोध्या आंदोलन को हराने का वक्तव्य पूरे समाज को फिर से हीन ग्रंथि का शिकार बनाने की कोशिश है। वैसे राहुल और उनके रणनीतिकारों की समझ अयोध्या आंदोलन के बारे में अत्यंत सतही है। 1528 ईस्वीं में मीर बाकी द्वारा श्रीराम मंदिर को तोड़ने के साथ ही देश, काल और परिस्थिति के अनुरूप विरोध और संघर्ष आरंभ हो गया था जो अंग्रेजों के शासनकाल में और आजादी के बाद भी जारी रहा। मंदिर मुक्ति का संघर्ष अत्यंत लंबा है जिसमें सिखों का भी योगदान है। बैरागियों, रामानंदी संप्रदाय से लेकर वैष्णव पंथ के अनेक संतों ने इस आंदोलन में भाग लिया। 1857 की क्रांति के समय बैरागियों और साधु-संतों ने मस्जिद की दीवार पर श्रीराम, सीताराम लिखा और बगल में चबूतरा बना कर उस पर पूजा तक आरंभ की।

प्रश्न है कि क्या आईएनडीआईए ने एक संसदीय चुनाव में विजय प्राप्त कर पूरे आंदोलन को परास्त कर दिया? वैसे अयोध्या नाम का लोक सभा क्षेत्र नहीं है। फैजाबाद लोक सभा क्षेत्र है जहां भाजपा के उम्मीदवार को करीब 4 लाख 99 हजार 522 एवं सपा को 5 लाख 54 हजार 289 वोट मिले। 54 हजार 567 मतों की विजय को क्या पूरे आंदोलन की पराजय मान लिया जाए? दूसरे, अयोध्या में मंदिर निर्माण का आंदोलन अयोध्या तक सीमित नहीं था। पूरे देश में आंदोलन चला। यह एक जिले का सीमित आंदोलन नहीं था। व्यापक लक्ष्यों वाला भौगोलिक दृष्टि से भी व्यापक क्षेत्रों तक विस्तारित आंदोलन था। सच है कि हिन्दुओं का समर्थन भाजपा को अयोध्या के कारण बढ़ना आरंभ हुआ पर 6 दिसम्बर, 1992 के बाद लंबे समय तक भाजपा द्वारा इसके पक्ष में बड़ा आंदोलन न किए जाने तथा अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार बनने के बाद राम मंदिर पर कोई ठोस पहल न होने से उनकी अपनी ही पार्टी नहीं, संगठन परिवार और देश भर के समर्थकों के अंदर नाराजगी पैदा हुई। वाजपेयी सरकार की 2004 में पराजय के पीछे यह बड़ा कारण था। उस समय भी फैजाबाद से भाजपा के उम्मीदवार पराजित हो गए थे तो क्या उससे अयोध्या आंदोलन ही परास्त हो गया? चुनाव में हार-जीत से किसी आंदोलन के समर्थन या विरोध का मूल्यांकन अपने आप में दोषपूर्ण है। जिस खतरनाक नरेटिव को राहुल गांधी, आईएनडीआईए देश-विदेश के उनके समर्थक बढ़ा रहे हैं, उनको ठीक से समझना और उनका सही विचारों और तथ्यों के साथ प्रतिवाद करना समय की मांग है।

> अयोध्या नाम का लोक सभा क्षेत्र नहीं है। फैजाबाद लोक सभा क्षेत्र है जहां भाजपा उम्मीदवार को 4 लाख 99 हजार 522 एवं सपा को 5 लाख 54 हजार 289 वोट मिले। 54 हजार 567 मतों की विजय को क्या पूरे मंदिर आंदोलन की पराजय मान लिया जाए? दूसरे, अयोध्या में मंदिर निर्माण का आंदोलन अयोध्या तक सीमित नहीं था। एक जिले का सीमित आंदोलन नहीं था। व्यापक लक्ष्यों वाला भौगोलिक दृष्टि से भी व्यापक क्षेत्रों तक विस्तारित आंदोलन था

देश के आधे से ज्यादा बुजुर्ग आर्थिक तंगी में

- भारत के शहरी क्षेत्रों में 50 फीसद से ज्यादा और ग्रामीण इलाकों में 62 फीसद बुजुर्ग आर्थिक तंगी और परिवहन संबंधी दिक्कतों के चलते नियमित रूप से चिकित्सकों के पास नहीं जा पाते
- एनजीओ एजवेल द्वारा किए गए एक अध्ययन के मुताबिक, अध्ययन का नमूना आकार 10 हजार था। सर्वेक्षण में शामिल 24 फीसद उत्तरदाता अकेले रहते हैं

(स्रोत : मीडिया इन्पुट्स)

1950 में शीतयुद्ध के दौर में दो बड़ी ताकतें माओ के बरक्स नेहरू का ज्यादा बड़े विश्व नेता के रूप में सम्मान करती थीं। खुश्चेव ने तो 1956 में स्वेज नहर संकट के समय नेहरू के साथ बाकायदा सलाह-मशविरा किया था।

एम.के. वेणु, पत्रकार
@mkvenu1

लापरवाही बरतने से बचे सरकार

वायरस प्रकोप **अजय प्रताप तिवारी**

भारत में हीटवेव और प्रचंड गर्मी से थोड़ी राहत मिली नहीं कि वायरसों ने कहर बरपाना शुरू कर दिया है। कई राज्य वायरस की गिरफ्त में हैं। महाराष्ट्र में जीका वायरस, केरल में दिमाग को खाने वाले अमीबा बुखार, कर्नाटक में डेंगू आफत बन चुका है। बढ़ते जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से दुनिया में समय-समय पर विभिन्न प्रकार के वायरस पनप रहे हैं, जो मनुष्यों के जीवन के लिए घातक सिद्ध हुए हैं। ये वायरस इतने खतरनाक होते हैं कि पल भर में मनुष्यों के जीवन को लील देते हैं।

जीका वायरस का सबसे ज्यादा खतरा गर्भवती महिलाओं को है, क्योंकि इससे नवजात शिशुओं में माइक्रोसेफैली होने का खतरा होता है, जिससे शिशुओं के मस्तिष्क का विकास नहीं हो पाता। जीका वायरस का वाहक एडिज मच्छर है। यह वायरस इंसानों से पहले रीसस बंदरों में देखा गया था जो अफ्रीकी देश युगांडा के जीका जगलों में पाया गया था। इसका प्रकोप इंसानों पर 2007 से तेज हुआ है। जीका वायरस ने 2015 में पूरे विश्व में तबाही मचाई जिसमें लाखों लोगों की जान चली गईं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इसे 2016 में वैश्विक आपदा घोषित किया। भारत में पहली बार जीका वायरस का मामला 2016-17 में गुजरात में प्रकाश में आया था। मानव के मस्तिष्क के तंतुओं को नष्ट कर देने वाला अमीबा बुखार मानव जीवन के लिए बड़ी चुनौती है। इस बुखार का पहला मामला 2016 में केरल में सामने आया था। तब से अब तक यहां आठ मरीज मिले हैं, और सभी की मौत हुई। केंद्र सरकार के एकीकृत रोग निगरानी कार्यक्रम की रिपोर्ट के अनुसार अब तक केरल से हरियाणा और चंडीगढ़ तक 22 लोगों की मौत हुई है, जिनमें से छह मौत 2021 के बाद दर्ज की गईं। नई दिल्ली स्थित भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान संस्थान के अनुसार, 2019 तक देश में इस बीमारी के 17 मामले सामने आए लेकिन कोविड-19 महामारी के बाद तमाम तरह के नये संक्रमणों में उछाल देखने को मिला है।

पिछले कुछ वर्षों में मंकीपॉक्स, इबोला, निपाह वायरस, कोविड-19, जीका वायरस लगातार पैर पसार रहे हैं। ये संक्रमण इतनी तेजी से फैलते हैं कि देखते ही देखते पूरे शहर को संक्रमित कर देते हैं। जीका वायरस एडीज मच्छर से फैलने वाला घातक वायरस है। एडिज एजिप्टी डेंगू और चिकनगुनिया का वाहक भी है। जीका वायरस यौन संबंध से भी फैलता है, मां से भ्रूण में प्रवेश कर जाता है जो पेट में पल

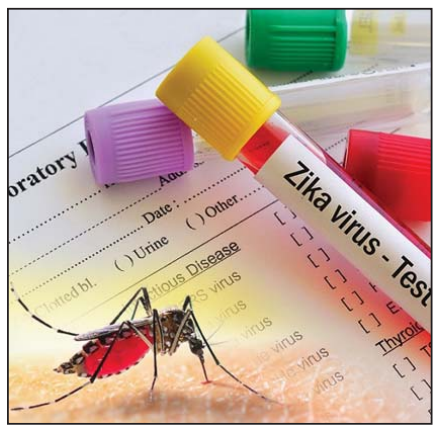

रहे बच्चे के तंत्रिका तंत्र को प्रभावित कर देता है। जीका वायरस भविष्य में कोविड-19 से भी भयानक रूप ले सकता है। यह मनुष्यों के लिए ही घातक नहीं है, बल्कि भावी नस्ल को भी मानसिक रूप से कमजोर करेगा। विभिन्न प्रकार के संक्रमण इंसानों को आर्थिक एवं सामाजिक रूप से कमजोर बनाते हैं। देश में तेजी से फैलता संक्रमण न केवल स्वास्थ्य चिंता का विषय है, बल्कि अर्थव्यवस्था को भी पटरी से उतार देता है। पर्यटन एवं उद्योग के साथ ही स्थानीय अर्थव्यवस्था को काफी हद तक प्रभावित करता है, आयात-निर्यात पर भी गहरा प्रभाव डालता है। संक्रमण के चलते लंबे समय तक स्वास्थ्य समस्याएं बनी रहने से कार्यबल में गिरावट आती है जिसका प्रभाव उत्पादन क्षमता पर पड़ता है, काम का दबाव बढ़ता है। सामाजिक दूरियां बढ़ती हैं, जिसका असर कोविड-19 के समय भी देखने को मिला था। संक्रमण समय से नहीं रोका नहीं गया तो मानव सभ्यता को नष्ट कर डालेगा। जलवायु परिवर्तन और प्रकृति में मानवीय हस्तक्षेप से संक्रमण का प्रभाव पशु-पक्षियों में भी देखने को मिल रहा है।

भारत में इस वक्त में बारिश का मौसम है। इसलिए सबसे ज्यादा खतरे की बात है। जगह-जगह जल-भराव की समस्या से एडिज मच्छर पनपते हैं। गांवों के तालाबों, नालियों और गड्ढों में तब्दील जमीनों में साफ पानी का भराव होता है जिससे एडिज मच्छर पनपने की गुंजाइश बनती है, इससे गांवों में जीका वायरस फैलने का खतरा है। भारत में जीका वायरस या नये वायरसों के निदान की कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं है, यदि है भी तो बहुत सीमित। बढ़ता संक्रमण रोकने के लिए राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सहयोग और प्रभावी नीति-निर्माण आवश्यक है। जीका वायरस के निदान हेतु बाहर से आने वाले यात्रियों की गहन जांच की जाए और उनका डाटा तैयार किया जाना चाहिए ताकि शहर या गांव में किसी भी प्रकार के वायरस का पता लगने पर उन व्यक्तियों पर ध्यान केंद्रित किया जा सके जो बाहर से आए हैं। राज्य, जिला और ब्लॉक स्तर पर संक्रमण निवारण केंद्र बनाने की जरूरत है। त्वरित जांच टीम बनाना जरूरी है। जागरूकता अभियान और शिक्षा के माध्यम से शहरों और गांवों में लोगों को इसके बारे में जानकारी देनी चाहिए। गांव, कस्बों में स्वास्थ्य मित्र नियुक्त करके महीने में स्वास्थ्य शिविर आयोजित करते रहना चाहिए, बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में मच्छरदानी वितरण और दवा का छिड़काव समय-समय पर किया जाना चाहिए ताकि मच्छरों का प्रकोप बढ़ न पाए। मच्छरों का प्रकोप कम करने के लिए जीएम मच्छरों को तैयार करना चाहिए। इंसानों के साथ ही पशु-पक्षियों में पनप रहे संक्रमण को रोकने का भी उपाय करना चाहिए।

कुंडलिनी **सद्गुरु**

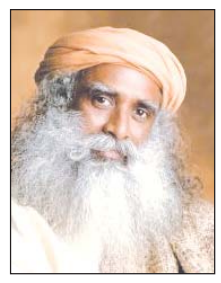

जब आप वानर थे, तो आपने मनुष्य बनने की इच्छा नहीं की थी। प्रकृति बस आपको आगे धक्का देती रही। लेकिन एक बार मनुष्य बनने के बाद, कोई भी विकास अनजाने में नहीं होता। अगर आप सचेत नहीं हैं, अचेतन हैं, तो निरर्थक चीजों का वही अंतहीन चक्र चलता रहेगा। अगर आप सचेतन होकर अपना विकास चाहेंगे, तो वह होगा। अब अगर आप जागरूक या सचेत हो गए, तो विकास या कोई भी बदलाव जरूरी ऊर्जा के बिना नहीं हो सकता। इसे संभव बनाने के लिए, यानी आपके विकास के लिए ऐसी व्यवस्था की गई है कि बहुत सारी ऊर्जा को बिना इस्तेमाल किए छोड़ दिया गया है, ताकि चैतन्य होने पर, आप उसका लाभ उठाते हुए कोई शानदार काम कर सकें। यह एक खजाना है, जिस पर आप बैठे हुए हैं। अगर आप गलत दिशा में देखेंगे, तो कभी नहीं जान पाएंगे कि वहां एक खजाना है। एक भिखारी एक पेड़ के नीचे बैठ कर भीख मांगता था। आते-जाते लोग वहां कुछ सिक्के फेंक देते थे, जिनसे वह अपना काम चलाता था। एक दिन उसकी मृत्यु हो गई और उसका शव उसी तरह वहां पड़ा हुआ था। कोई दोस्त और रिश्तेदार नहीं, कोई उसे कहीं ले जाकर दफनाना नहीं चाहता था। इसलिए लोगों ने उसे उसी पेड़ के नीचे दफनाने का फैसला किया। लोगों ने खुदाई शुरू की और उन्हें वहां एक बड़ा खजाना गड़ा हुआ मिला। बस कुछ फीट नीचे एक बड़ा खजाना गड़ा हुआ था, सोने से भरा हुआ पूरा बरतन था और वह मूर्ख वहीं बैठकर पूरी जिंदगी भीख मांगता रहा। अगर वह नीचे सिर्फ खोद लेता तो वह बहुत अमीर आदमी होता। लेकिन वह पर पूरी जिंदगी एक भिखारी की तरह वहां बैठा रहा। यही हाल कुंडलिनी का है। वह ठीक वहीं पर है। हर कोई एक जैकपॉट पर बैठा हुआ है, लेकिन सब गलत दिशा में देख रहे हैं। खजाने की ओर नहीं देख रहे। इसलिए उन्हें पता ही नहीं चलता कि ऐसा कुछ वहां है। कुंडलिनी आपके भीतर वह खजाना है, जिसका इस्तेमाल नहीं हुआ है, अब तक लाभ नहीं उठाया गया है। आप उस ऊर्जा का इस्तेमाल करके उसे बिल्कुल अलग आयाम में रूपांतरित कर सकते हैं, ऐसे आयाम में जिसकी कल्पना नहीं कर सकते।

रीडर्स मेल

ट्रंप पर जानलेवा हमला

डोनाल्ड ट्रंप पर हमले ने अमेरिका के राजनीतिक हिंसा के इतिहास के काले अध्याय को दोबारा खोल दिया है। इस से पहले भी अतीत में चार राष्ट्रपतियों और एक राष्ट्रपति उम्मीदवार की हत्या हो चुकी हैं, और 7 अन्य राष्ट्रपति और उम्मीदवारों पर जानलेवा हमले हुए हैं, ट्रंप इस फेहरिस्त में आठवें बन गए हैं। एक दिन पहले तक चर्चा हो रही थी क्या जो बाइडेन अपना कार्यकाल पूरा कर पाएंगे या नहीं या उनको दोबारा उम्मीदवार बनाया जाना चाहिए या नहीं लेकिन इस हमले के बाद परिदृश्य पूरी तरह बदल जाएगा। सीक्रेट सर्विस, जिस पर सुरक्षा की जिम्मेदारी थी, की कार्यप्रणाली में भारी चूक हुई है, और दुखद यह है कि एफबीआई और सीक्रेट सर्विस ने एक दूसरे पर उंगली उठाना शुरू कर दिया है जैसा कि 9/11 के बाद हुआ था। लेकिन सबसे गंभीर पहलू, जिस पर गंभीर चर्चा और बहस शुरू होगी, है शस्त्रों के नियंत्रण का मामला, डेमोक्रेट्स और रिपब्लिकंस के बीच इस मुद्दे पर गहरे मतभेद हैं, और रिपब्लिकंस विशेषकर ट्रंप स्वयं इसके पक्षधर हैं, तो कैसे अब इस हमले के बाद गन रखने को सही ठहरा पाएंगे? अमेरिका के 50 में से 9 राज्यों ने शस्त्रों पर प्रतिबंध लगा दिया है। आशा करेंगे कि बाकी 41 राज्य भी शीघ्र ऐसा करेंगे। हमने देखा है कि लगभग 50,000 लोगों ने शस्त्रों की हिंसा में अपनी जान से हाथ धोए हैं।

बाल गोविंद, नोएडा

मासिकधर्म अवकाश जरूरी

पीरियड्स महिलाओं में होने वाली प्राकृतिक और जरूरी प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया महिलाओं के जीवन में अहम होती है, जिससे एक महिला हर महीने गुजरती है। हालांकि इस दौरान महिलाओं को तमाम परेशानियों का सामना करना पड़ता है, इन मुश्किल दिनों में कामकाजी महिलाओं को आराम की जरूरत होती है, इसलिए देश में लंबे समय से पिरियड लीव की मांग की जा रही है। इसे लेकर अभी भी विचार-विमर्श का दौर जारी है। पीरियड लीव मासिक धर्म चक्र के दौरान उनकी स्वास्थ्य आवश्यकताओं को स्वीकार और मान्य करती है। मासिक धर्म की वजह से दर्द, थकान, मूड स्विंग्स और अन्य शारीरिक और भावनात्मक दिक्कतें काम पर बेहतर प्रदर्शन करने की क्षमता पर असर डालती हैं। ऐसे में पीरियड्स लीव उन्हें अपने स्वास्थ्य को प्राथमिकता देने और इस दौरान आराम करने की छूट देती है, जिससे उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

संदीप कुमार, मधुपुर, झारखंड

कौशलयुक्त तो युवा सक्षम

युवाओं को कौशल एवं तकनीकी दृष्टिकोण से सक्षम बनाने के उद्देश्य से प्रति वर्ष 15 जुलाई को विश्व युवा कौशल दिवस मनाया जाता है। भारत युवाओं का देश है, लेकिन दुर्भाग्यवश यूनिसेफ की एक रिपोर्ट के अनुसार 2030 में भारत के 47 प्रतिशत युवाओं के पास आवश्यक शिक्षा और कौशल नहीं होगा। शिक्षा रोजगारोन्मुख होनी चाहिए ताकि शिक्षा समाप्ति के पश्चात सभी को रोजगार मिल सके। आज पूरी दुनिया में कुशल युवाओं की जरूरत है। युवाओं को कौशल विकास योजनाओं के तहत प्रशिक्षण देकर बाजार के अनुरूप तैयार करना चाहिए। बैंक को भी युवाओं को शिक्षा और व्यवसाय के लिए आसानी से कम ब्याज पर कर्ज उपलब्ध कराना चाहिए। युवा शक्ति के सही उपयोग से भारत विकसित राष्ट्र बन सकता है।

हिमांशु शेखर, गया

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित।
। समूह संपादक - डॉ. विजय राय। स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750
वर्ष-33, अंक 333
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 130

निजी भागीदारी में हो इजाफा

बीते तकरीबन पांच साल में देश की रक्षा खरीद नीति में 'स्वदेशीकरण' का बड़ा लक्ष्य तय किया गया। भारत समेत किसी भी देश में ऐसे प्रयास करने के लिए पर्याप्त वजह होती हैं। यह महत्त्वपूर्ण है, खासकर एक बढ़ती असुरक्षा वाले विश्व में जरूरी हथियारों और उन्हें चलाने वाले प्लेटफॉर्मों पर अधिकतम नियंत्रण आवश्यक है। हथियारों पर विदेशी मुद्रा खर्च करने में कमी लाना एक और वांछित परिणाम है। इस बात की भी पर्याप्त वजह हैं कि यह माना जाए कि घरेलू रक्षा क्षेत्र उन बेहतरीन क्षेत्रों में से एक है जो सरकार को घरेलू अर्थव्यवस्था में नवाचार बढ़ाने के लिए उत्साहित कर सकते हैं। इसके बावजूद रक्षा खरीद के स्वदेशीकरण को समय के साथ टिकाऊ बनाने के लिए निजी क्षेत्र को सही ढंग से साथ में जोड़ना होगा। रक्षा मंत्रालय की ओर से हाल के दिनों में जारी आंकड़ों से यही संकेत मिलता है कि यह उस हद तक नहीं हो रहा है जिस हद तक वांछित है।

रक्षा मंत्रालय के मुताबिक देश का घरेलू रक्षा उत्पाद पिछले दो वित्त वर्षों से एक लाख करोड़ रुपये से अधिक है लेकिन निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी बमुश्किल एक चौथाई है और यह 2017-18 के स्तर के आसपास ही था। कई लोगों ने ध्यान दिया है कि लार्सन ऐंड टुब्रो जैसी कंपनियों ने हाल के समय में अपना रक्षा कारोबार बढ़ाया है लेकिन आंकड़े बताते हैं कि निजी क्षेत्र की ओर से ऐसा विस्तार देश के रक्षा उत्पादन में उसकी हिस्सेदारी बरकरार रख पाने भर के लायक है। रक्षा उत्पादन का अधिकांश हिस्सा रक्षा क्षेत्र के सार्वजनिक उपक्रमों से ही आ रहा है। यह निश्चित नहीं है कि उनमें भारत को इस क्षेत्र की मूल्य श्रृंखला में ऊपर ले जाने की क्षमता है अथवा नहीं या फिर क्या वे ऐसा आंतरिक स्तर पर नवाचार कर सकते हैं कि जो न केवल सुरक्षा के क्षेत्र में बढ़त दे बल्कि अन्य औद्योगिक क्षेत्रों में भी इसके प्रभाव को बढ़ाए। स्पष्ट है कि 'मेक इन इंडिया' की आकांक्षा है लेकिन हकीकत 'मेक इन पब्लिक सेक्टर' ही है।

यदि स्वदेशीकरण के माध्यम से निजी क्षेत्र को सही मायने में मजबूत बनाना है तो उन क्षेत्रों को चिह्नित करना होगा जहां सरकार को बदलाव करने की आवश्यकता है। एक जरूरत यह है कि रक्षा कारोबार में भारतीय कंपनियों को निवेश का सुरक्षित माहौल मुहैया कराया जाए।

ऐसा तब हो सकता है जबकि सरकार इसके लिए जरूरी दिशानिर्देश जारी करे, ये दिशानिर्देश उचित और तार्किक हों और उनके साथ खरीद की प्रतिबद्धता भी जुड़ी हो। दूसरे देशों में निजी कंपनियां बड़ा निवेश करके प्रसन्न हैं क्योंकि वहां उन्हें आश्वस्ति है कि उनका निवेश बरबाद नहीं होगा। परंतु भारत में ऐसे भरोसे का अभाव है। एक बड़े ग्राहक वाले कारोबार में ग्राहक को विश्वसनीय खरीदार के रूप में देखे जाने के लिए अतिरिक्त प्रयास करना होता है ताकि निवेश को गति मिले। देश में रक्षा निजी क्षेत्र के कुछ पहलुओं को अक्सर सफल बताया जाता है। इनमें छोटे और मझोले उपक्रमों की बढ़ती उपस्थिति एक है। इसमें स्टार्टअप भी शामिल हैं। बड़े निजी निवेश के लिए स्पष्ट खाके के अभाव में ऐसी स्टार्टअप भी उचित जगह नहीं बना पाएंगी या उन्हें समुचित प्रोत्साहन नहीं मिल सकेगा। भारत को इस क्षेत्र में विदेशी निवेश से जुड़े दिशानिर्देश को भी शिथिल करने की जरूरत होगी। गत वर्ष 100 फीसदी विदेशी स्वामित्व वाली एक परियोजना को मंजूरी दी गई - स्वीडिश कार्ल-गुस्ताव राइफल, परंतु प्रौद्योगिकी स्थानांतरण की चिंताओं के कारण अन्य मामलों में हम पिछड़े हुए हैं। ऐसी चिंताओं के कारण निवेश में देरी नहीं होने दी जा सकती है। इस क्षेत्र में निजी निवेश का दायरा बढ़ाने का काम काफी समय से लंबित है।

बिनय सिन्हा

जीएसटी कैसे बनेगा अच्छा और सरल कर

जीएसटी से लाभ मिला है लेकिन उसके विस्तार और उसे सुव्यवस्थित बनाने के लिए उसमें नए सुधारों की आवश्यकता है, बता रहे हैं एम गोविंद राव

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) जिसने केंद्र और राज्यों के 14 अप्रत्यक्ष करों का स्थान लिया था, वह यकीनन एक ऐतिहासिक सुधार था। इससे राजस्व में भी सतत वृद्धि देखने को मिली थी और अप्रैल 2024 में इससे 2.1 लाख करोड़ रुपये की राशि मिली। यह राशि पिछले साल से 15.5 फीसदी अधिक थी।

इस वित्त वर्ष की पहली तिमाही में 5.57 लाख करोड़ रुपये की राशि जुटाई गई जो पिछले वर्ष की समान अवधि के 5.05 लाख करोड़ रुपये से अधिक थी। यह वृद्धि 10.2 फीसदी थी जो सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की अनुमानित नॉमिनल वृद्धि से अधिक है। ऐसा न केवल अर्थव्यवस्था के बेहतर प्रदर्शन की वजह से है बल्कि कर प्रशासन में सुधार के बाद अनुपालन में भी बेहतरी आई, खासतौर पर तकनीकी प्लेटफॉर्म में मजबूती आने से ऐसा हुआ। मध्यम अवधि में निरंतर उच्च वृद्धि के अनुमान तथा बेहतर प्रशासन एवं कर प्रवर्तन के साथ जीएसटी संग्रह के बेहतर बने रहने की उम्मीद है।

लाभ के बावजूद कर ढांचा अभी भी वांछित स्तर से नीचे है और उल्लेखनीय अतिरिक्त सुधार उपायों की आवश्यकता है ताकि विसंगति को कम किया जा सके, अनुपालन लागत घटाई जा सके और अधिक से अधिक कर जुटाया जा सके। अभी इसे सरल, किफायती और अंतरराष्ट्रीय व्यवहार के अनुरूप बनाने के लिए काफी कुछ किया जाना है और सुधारों के अगले चरण में ऐसा ही होना चाहिए।

आधार को बढ़ाने के लिए कर मामलों में दूसरे चरण के सुधार आवश्यक हैं। दर ढांचे को सरल करना और राजस्व में इजाफा करना इसका लक्ष्य होना चाहिए। 2047 तक विकसित देश बनने का लक्ष्य तभी हासिल किया जा सकता है जबकि हमारे यहां कर ढांचा प्रतिस्पर्धी हो तथा विसंगतियां और अनुपालन लागत कम हो। अब तक जीएसटी परिषद मामूली रद्दोबदल करने में लगी थी जबकि अब वक्त आ गया है कि कर ढांचे और प्रशासन में बुनियादी सुधार किए जाएं। बुनियादी कर सुधार तब सफल होते हैं जब उन्हें तेज आर्थिक सुधारों के दौर में अंजाम दिया जाता है ताकि सुधार राजस्व पर बुरा असर न डालें।

यह सही है कि जीएसटी के ढांचे और परिचालन ब्योरों में ऐसा सिद्धांत नहीं हो सकता है जो सब पर सटीक बैठे लेकिन कुछ बुनियादी बातों का ध्यान रखना होगा। यह भी सब जानते हैं कि एक बार सुधार को स्वीकार्य बनाने के लिए गलत तत्त्वों को शामिल कर लिया जाए तो उन्हें हटाना बहुत मुश्किल होता है। न्यूनतम रियायत वाली एक व्यापक कर व्यवस्था न केवल राजस्व के कारण अहम है बल्कि एक व्यापक मूल्यवर्धित कर श्रृंखला के लिए भी वह आवश्यक है। जल्दी खराब होने वाले और प्रसंस्करण रहित खाद्य पदार्थों के लिए रियायतों को खत्म नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसमें प्रशासनिक दिक्कतें हैं लेकिन अन्य सभी वस्तुओं को कर दायरे में शामिल करना जरूरी है। वर्गीकरण की कमियों, इनवर्टेड शुल्क ढांचे और इनसे उत्पन्न होने वाले वादों से बचने के लिए कम विभाजित दरें रखना जरूरी है। इसके अलावा अधिकांश मूल्यवर्धित कर प्रशासनों को सक्षम तकनीकी समूह का समर्थन हासिल होता है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ शामिल होते हैं और जो निरंतर ज्ञान का नवीनीकरण और शोध करते रहते हैं। इनमें प्रशासन, कराधान, अंकेक्षण, अर्थशास्त्र, कानून और भारी आंकड़ों का विश्लेषण आदि शामिल हैं।

उपरोक्त नजरिये से भारत में जीएसटी सुधारों की तत्काल आवश्यकता है। इस कर में स्थिरता आने के बाद अब अवसर है कि इस कर आधार को बढ़ाया जाए। भारत के जीएसटी में एक कमी है पेट्रोलियम उत्पादों, बिजली और अचल संपत्ति को इससे बाहर रखना। पेट्रोलियम उत्पादों को राजस्व के कारण इससे बाहर रखा गया है क्योंकि इन उत्पादों पर लगने वाले उत्पाद शुल्क और बिक्री कर से केंद्र और राज्यों के कर संग्रह में 40 फीसदी से अधिक आंतरिक अप्रत्यक्ष कर आता है। बहरहाल, इसका असर भारतीय विनिर्माताओं की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता पर पड़ता है क्योंकि परिवहन की लागत बढ़ती है।

बिजली पर लगने वाले शुल्क को बाहर करने और उसे जीएसटी में लाने के लिए राज्य सूची में भी संशोधन करना जरूरी है। ऐसे उपाय व्यवस्था को बहुत अधिक व्यापक बनाएंगे और इसे औपचारिक बनाने में मदद करेंगे। अगर पेट्रोलियम उत्पादों को जीएसटी में शामिल करने में राजस्व का बिंदु आड़े आ रहा है तो जीएसटी परिषद को एक अलग हरित शुल्क लगाने पर विचार करना चाहिए। इसे जीएसटी आधार में शामिल करने के अलावा इसे जलवायु संबंधी कदमों में प्रयोग किया जा सकता है। ढांचे को तैयार करते समय उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में शामिल करीब 50 फीसदी वस्तुओं को कर से बाहर रखा गया ताकि कीमतों पर जीएसटी के प्रभाव को न्यूनतम किया जा सके। यह बड़ी रियायत मूल्यवर्धित कर के सिद्धांत के खिलाफ जाती है। वांछित यही है कि इस रियायत को अप्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों और जल्दी खराब होने वाली खाद्य वस्तुओं तक सीमित रखा जाए तथा अन्य वस्तुओं पर 8 फीसदी की निचली दर से कर लगाया जाए। कर्नाटक के 2023-24 के आंकड़े दिखाते हैं कि 50 लाख रुपये से कम के टर्नओवर वाले जीएसटी डीलर करदाताओं में 93 फीसदी हैं लेकिन कुल टर्नओवर में उनकी हिस्सेदारी केवल 6.5 फीसदी है और कुल चुकता कर में वे 12 फीसदी की हिस्सेदारी है। बड़ी कंपनियों के बजाय छोटी कंपनियों पर ध्यान केंद्रित करने से बेहतर अनुपालन और बेहतर कर प्राप्ति संभव होंगे।

अन्य महत्त्वपूर्ण सुधारों में से एक है दरों को युक्तिसंगत बनाना। आदर्श स्थिति में एकल दर पर जीएसटी लगाना और रियायतों की न्यूनतम सूची को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। परंतु वह शायद अभी राजनीतिक रूप से स्वीकार्य न हो और कोशिश यह होनी चाहिए कि दरों को कम करके दो किया जाए और फिर एक दर की दिशा में बढ़ा जाए। कर्नाटक में दरों की श्रेणी के हिसाब से जुटाए गए राजस्व की बात करें तो 2021-22 में 75 फीसदी कर 12 और 18 फीसदी दरों की श्रेणी में जुटाया गया। अगर इन्हें 16 फीसदी की एक दर में बदल दिया जाता तो यह राजस्व निरपेक्ष दर होती। इस समय 5 फीसदी की दर से कर वसूली वाली वस्तुएं 6.2 फीसदी राजस्व जुटाती हैं। इसे बढ़ाकर 8 फीसदी किया जा सकता है। 28 फीसदी की दर को केवल अयोग्य वस्तुओं तथा निर्माण सामग्री एवं यात्री कारों जैसी श्रेणियों में रखा जाना चाहिए। विनिर्माण श्रम आधारित गतिविधि है और यात्री कारों का क्षेत्र भी श्रम गहन सेवा क्षेत्र है। 2026 के बाद जब उपकर लगने बंद हो जाएंगे तब कर ढांचा अधिक सरल होगा। केवल दो दरों के साथ यह सरल और अच्छा कर होगा।

(लेखक एनआईपीएफपी के पूर्व निदेशक और 14वें वित्त आयोग के सदस्य हैं। वह ब्रिकवर्क रेटिंग्स में मुख्य आर्थिक सलाहकार भी हैं। लेख में निजी विचार हैं)

करगिल युद्ध के 25 वर्ष और कुछ सबक

मई-जुलाई 1999 को चौथाई सदी बीत चुकी है। वह समय था जब भारत और पाकिस्तान के बीच नियंत्रण रेखा पर करगिल क्षेत्र में 74 दिन तक एक छोटा युद्ध चला था। तथाकथित करगिल संघर्ष में दोनों पक्षों के 500 से अधिक सैनिकों की जान चली गई और यह दक्षिण एशिया में भू-राजनीतिक रूप से तनाव के दौर का नतीजा था। यह उचित वक्त है कि हम उस संघर्ष से निकले सामरिक, कूटनीतिक और अन्य सबकों से दोबारा गुजरें। करगिल युद्ध से हमारा सामना उस समय हुआ जब भारत इतिहास के उथलपुथल भरे दौर से गुजर रहा था। तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाला भारत का उच्च कमांड सेंटर जिसे मुख्य सचिव ब्रजेश मिश्रा मशविरा दिया करते थे और जिसमें जॉर्ज फर्नांडिस, जसवंत सिंह और यशवंत सिन्हा जैसे सदस्य शामिल थे, वह शक्ति प्रदर्शन करने और श्रीलंका में तमिल टाइगर्स जैसी क्षेत्रीय समस्याओं के हल के लिए अभियान चलाने का समर्थक था।

उन हालात में भारतीय सेना पहले ही तमाम संघर्षों से दो-चार थी। 1992 तक पंजाब में पाकिस्तान समर्थित एक दशक पुराना सिख आतंकवाद खात्मे की ओर था। इससे जुड़े लोगों को अहसास हो गया था कि उन्हें पंजाब का जनसमर्थन नहीं मिल रहा है।

इससे पहले भारतीय सेना ने 1987-1990 में श्रीलंका में कार्रवाई की थी और भारतीय शांति सेना (आईपीकेएफ) को तमिल टाइगर्स से शक्ति की सीमा के बारे में सबक मिला था। असम में यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम यानी उल्फा की वजह से अशांति थी। जिस समय आईपीकेएफ की श्रीलंका से वापसी हो रही थी उस समय यानी 1989-90 में जम्मू कश्मीर झुलसने लगा था। हजारों कश्मीरी युवा पाकिस्तान द्वारा चलाए जा रहे शिविरों में हथियार चलाने का प्रशिक्षण लेने के लिए पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर जा रहे थे। केंद्र सरकार का रक्षा बजट जीडीपी के करीब 4 फीसदी के साथ उच्चतम स्तर पर पहुंच गया था।

देश में भारतीय जनता पार्टी के पहले प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के दबाव में होने के बीच भारत ने 11 मई और 13 मई, 1998 को पांच परमाणु परीक्षण किए। पाकिस्तान ने ऐसा नहीं करने के तमाम अंतरराष्ट्रीय दबाव के बावजूद उसी महीने छह परमाणु परीक्षण किए। दुनिया में दो नए परमाणु हथियार संपन्न देशों की अंतरराष्ट्रीय आलोचना से बेपरवाह वाजेपयी ने लाहौर की ऐतिहासिक बस यात्रा की तैयारी शुरू की। इस बीच परदे के पीछे पाकिस्तान की सेना के एक छोटे से समूह ने करगिल में नियंत्रण रेखा के पार से घुसपैठियों को भेजना शुरू किया। ये घुसपैठिये तमाम हथियारों, गोला-बारूद, खानेपीने की चीजें थीं ताकि वे ठंड का मौसम आसानी से काटा जा सके। पाकिस्तान की योजना थी कि घुसपैठिये अपने हथियारों और गोला-बारूद की मदद से श्रीनगर-करगिल-लेह मार्ग को निशाना बनाएंगे ताकि करगिल और सियाचिन ग्लेशियर तक भारत की आपूर्ति बंद की जा सके। यह एक रणनीतिक योजना थी ताकि पाकिस्तान की परमाणु प्रतिरोधक क्षमता को प्रदर्शित किया जाए कि गंभीर से गंभीर भड़काने वाली कार्रवाई के बावजूद पाकिस्तान के परमाणु हथियार भारत के प्रतिरोध को रोकने में सक्षम हैं। कूटनीतिक हलकों में पाकिस्तान के योजनाकार आश्वस्त थे कि भारत के राजनयिक वैश्विक मंचों पर पाकिस्तान के लिए अस्वीकार्य स्तर का दबाव नहीं पैदा कर पाएंगे। अंततः सैन्य स्तर पर पीछे हटने, रणनीतिक रूप से पीछे होने और कूटनीतिक स्तर पर मात खाने के बाद भारत करगिल की नई यथास्थिति को स्वीकार कर लेगा। हालांकि ऐसा नहीं हुआ। तमाम चुनौतियों के बावजूद भारत ने पीछे हटने से इनकार कर दिया।

दोधारी तलवार

अजय शुक्ला

भारत की पहली चुनौती थी यह दिखाना कि पाकिस्तान ने एक अंतरराष्ट्रीय संधि का उल्लंघन किया है। 1972 के शिमला समझौते में दोनों पक्ष नियंत्रण रेखा पर यथास्थिति बनाए रखने पर सहमत हुए थे। करगिल में केवल घुसपैठिये ही नहीं बल्कि पाकिस्तानी सैनिकों ने भी नियंत्रण रेखा पार की थी। पाकिस्तान के इसमें आधिकारिक रूप से शामिल होने की खबर खुफिया जानकारी से सामने आई जब भारत की टेलीफोन निगरानी करने वाली संस्थाओं ने पाकिस्तानी सेना के ताकतवर चीफ ऑफ जनरल स्टाफ लेफ्टिनेंट जनरल मोहम्मद अजीज खान और उनके बॉस तथा तत्कालीन सेना प्रमुख परवेज मुशर्रफ के बीच दो बातचीत सुनीं। उस समय मुशर्रफ चीन से समर्थन जुटाने पेइचिंग गए हुए थे।

भारत के खुफिया विभाग ने जो बातचीत रिकॉर्ड की थी उसमें दोनों सैन्य अधिकारी बात कर रहे थे कि करगिल के घुसपैठिये पूरी तरह उनके नियंत्रण में थे। भारत सरकार ने इस बातचीत को पाकिस्तान की गैर जिम्मेदारी के ठोस सबूत के रूप में पेश किया जो दोनों देशों के बीच परमाणु युद्ध की वजह बन सकता था।

इससे बचने के लिए भारत ने सैन्य बलों का सोचा समझा प्रयोग किया। चरणबद्ध प्रतिक्रिया में पहले तोपखाने का इस्तेमाल किया गया और बाद में हेलीकॉप्टरों और बमों की मदद से सैनिकों पर हमला बोला गया। भारत के इस सुनियोजित जवाब ने दिखाया कि वह कैसे तीनों सेनाओं के तालमेल वाले ऑपरेशन संचालित कर सकता है और ऐसा तीनों सेनाओं के लिए कोई उच्च कमांड ढांचा या समन्वय हुए बिना भी किया जा सकता है। भारतीय वायु सेना ने पाकिस्तान के अग्रिम ठिकानों पर गोलीबारी की, मुंथो ढालो में उसके लॉजिस्टिक ठिकाने को ध्वस्त किया जिससे घुसपैठियों के पास हथियारों की कमी होनी शुरू हुई।

भारत की सेना की गतिविधियों को देखते हुए तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ को 4 जुलाई, 1999 को अमेरिका बुला कर समझाइश दी। पाकिस्तान अमेरिका का समर्थन खो चुका था। जब शरीफ ने कहा कि भारत ने सियाचिन ग्लेशियर पर कब्जा करके पहले ही शिमला समझौते का उल्लंघन किया था तो क्लिंटन ने उन्हें तीखे स्वरों में याद दिलाया कि नए सिरे से देशों के नक्शे बनाने का समय जा चुका है और पाकिस्तानी सैनिकों को वापस लौट जाना चाहिए। जुलाई के अंत तक वहां यथास्थिति कायम हो गई। इस युद्ध के बाद करगिल समीक्षा समिति के नाम से एक उच्चस्तरीय समिति बनाई गई जो स्वतंत्र भारत में सीमाओं की रक्षा के लिए सैनिकों की जरूरत आंकने का पहला गंभीर प्रयास था। इसकी रिपोर्ट में देश के सुरक्षा प्रबंधन में कई कमियों को रेखांकित किया गया। उसमें यह तथ्य भी शामिल किया गया कि देश के सुरक्षा प्रबंधन के लिए लॉर्ड इस्मे द्वारा तैयार और लॉर्ड माउंटबेटन द्वारा अनुशंसित ढांचे को ऐसे राजनीतिक नेतृत्व ने स्वीकार किया था जो सुरक्षा तंत्र की जटिलताओं को अच्छी तरह नहीं समझता था।

समिति के निष्कर्षों और अनुशंसाओं को 2000 में मंत्रियों के एक समूह ने भी दोहराया और यह भी कहा कि जम्मू कश्मीर के विशाल भूभाग के तीनों हिस्सों की रक्षा भारतीय सेना के दो कोर द्वारा की जाती थी। इनमें से 15 कोर कश्मीर और लद्दाख की प्रभारी थीं जबकि 16 कोर जम्मू की। यह तय किया गया कि मौजूदा 15 कोर जोन से एक अलग 14 कोर बनेगी और उसे लद्दाख का प्रभार सौंपा जाएगा। इस पर अमल हो चुका है लेकिन यह 14 कोर करगिल और सियाचिन (दोनों पर पाकिस्तान दावा करता है) के साथ पूर्वी लद्दाख के लिए भी जिम्मेदार है जिस पर पाकिस्तान दावा करता है। यह दोहरापन कमांड के सहज सुचारु कामकाज को प्रभावित करता है।

आपका पक्ष

जनसंख्या वृद्धि के अनुरूप हों योजनाएं

लेख 'सीमित संभावनाएं' विश्व और विशेषकर भारत में जनसंख्या वृद्धि को लेकर भविष्य की संभावनाओं पर गंभीर चिंतन करता है। आज जैसी परिस्थितियां और विमर्श हैं, वे बड़ी ईमानदारी से जनसंख्या वृद्धि को विस्फोटक बना रही हैं। अगर जनसंख्या में अगले तीन दशकों में 25-30 प्रतिशत की वृद्धि होगी तो देश को अक्षुण्ण रखना कठिन हो जाएगा। ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग व्यापार, इन्फ्रास्ट्रक्चर और विकास की चर्चा परमावश्यक है। क्या सरकारें अपनी आधी से अधिक बूढ़ी आबादी को फ्री राशन, बिजली, पानी, स्वास्थ्य की सुविधाएं देने में समर्थ होंगी? इससे बेहतर है कि उद्योग व्यापार स्थापित किए जाएं और जनता अपने श्रम से जीवन यापन करे। मुफ्त की बिजली पानी और राशन में खर्च को इन्फ्रास्ट्रक्चर, शिक्षा और स्वास्थ्य में लगाया जाए।

विनोद जौहरी, दिल्ली

भारत जनसंख्या के मामले में चीन को पछाड़ कर विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला देश बन चुका है

मध्यम वर्ग को मिले राहत

सरकार को बजट में गरीब एवं मध्यम वर्ग की ओर ध्यान देना चाहिए क्योंकि महंगाई के कारण इस वर्ग की रसोई का बजट काफी अधिक बिगड़ा हुआ है। दाल, चावल, आटा और सब्जियां काफी महंगी बिक रही है। बजट में मोदी सरकार को अब उनकी पूंजीपतियों वाली सरकार का ठप्पा अपने ऊपर से अवश्य हटाना चाहिए। इनके बजाय गरीबों की हितकारी सरकार का ठप्पा लगना अब एक बेहतर बात होगी।

मनमोहन राजावत, शाजापुर

सार्वजनिक परिवहन को दिया जाए बढ़ावा

आम बजट से आम जनता को महंगाई से राहत और करों में छूट की उम्मीद है। रेलवे में लोकल ट्रेनों की भारी कमी होने से छोटे कस्बों के लोगों को सार्वजनिक परिवहन की भारी कमी से जूझना पड़ता है। हर ट्रेन में 50 फीसदी सामान्य डिब्बे और लोकल ट्रेनों की संख्या में पर्याप्त संख्या में इजाफा करने की जरूरत है।

सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम

रोजगार व निर्यात बढ़ाने वाला हो बजट

बजट से सबसे बड़ी राहत की आस यही होगी कि वह खाद्य महंगाई को काबू में लाए। सरकार पक्की भर्तियां करें ताकि लोगों का जीवन स्तर ऊपर उठे। इससे लोगों के पास पैसा होने से बाजार में मांग बढ़ने के कारण अर्थव्यवस्था को भी लाभ होगा। एमएसएमई को बढ़ावा देकर बड़े स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराने और निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए भी बजट में प्रावधान होने चाहिए। आयकर में भी राहत देने का ऐलान बजट में हो।

मुनीश कुमार, रेवाड़ी

सभी वर्गों को मिले राहत

जनसंख्या में वृद्धि से संसाधनों की कमी होने से मांग और पूर्ति में असंतुलन बिगड़ने के कारण बेरोजगारी और महंगाई बढ़ रही है। जिससे हर वर्ग परेशान है। इसलिए बजट में खाद्यान्न और अन्य उपयोगी वस्तुओं की उत्पादन लागत में कमी के लिए आवश्यक प्रावधान होने चाहिए। बचत में वृद्धि के लिए आयकर में छूट की सीमा बढ़नी चाहिए।

बी एल शर्मा, उज्जैन

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने मंगलवार को पोर्ट लुई में मॉरीशस के प्रधानमंत्री प्रविंद जगन्नाथ के साथ द्विपक्षीय वार्ता की। इस दौरान भारत द्वारा वित्तपोषित 12 उच्च प्रभाव सामुदायिक विकास परियोजनाओं का उद्घाटन, शिक्षा, संस्कृति, आव्रजन अभिलेखागार के डिजिटलीकरण पर समझौता ज्ञापनों का आदान-प्रदान और इसरो तथा एमआरआईसी के बीच परियोजना दस्तावेजों का आदान-प्रदान हुआ। भारत ने भारत-मॉरीशस संयुक्त हाइड्रोग्राफिक सेवा द्वारा निर्मित मॉरीशस समुद्री चार्ट की बिक्री से अर्जित राजस्व के लिए 13 लाख एमयूआर की रॉयल्टी भी दी।

केन्द्रीय बजट

अनेक उम्मीदें

केन्द्रीय बजट से अनेक उम्मीदें हैं जिनमें ढांचागत विकास, रोजगार सृजन व स्वच्छ ऊर्जा पहलें शामिल हैं। 2024 का केन्द्रीय बजट लोकसभा में 23 जुलाई को पेश किया जाएगा। यह राजग-3 का पहला बजट होगा जिसमें पुरानी नीतियां जारी रहने की उम्मीद है। लेकिन इनमें कुछ परिवर्तन भी हो सकते हैं और केन्द्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण बजट में कुछ 'लोकरंजक' कदम उठा सकती हैं। केन्द्रीय बजट 2024-25 के समय भारतीय अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ी है जिसमें तेज वृद्धि की संभावनाओं के साथ ही कुछ चुनौतियां भी बनी हुई हैं। जीडीपी वृद्धि पूर्वानुमान आशाजनक बने हुए हैं जिसका कारण विभिन्न क्षेत्रों में तेजी से हुआ सुधार है। इनमें खासकर विनिर्माण, सेवायें व तकनीकी क्षेत्र शामिल हैं। लेकिन मुद्रास्फीति का दबाव, उच्च राजकोषीय घाटा तथा वैश्विक आर्थिक अनिश्चिततायें बड़ी चुनौतियां पेश करती हैं। सरकार ने अतीत में ढांचागत संरचना बढ़ाने, डिजिटलीकरण करने तथा स्वच्छ ऊर्जा पहलों के मामलों में सुनियोजित प्रयास किए हैं जिनसे टिकाऊ विकास के प्रति उसकी प्रतिबद्धता प्रकट होती है। लेकिन इस प्रगति के बावजूद बेरोजगारी, आय असमानता तथा ग्रामीण क्षेत्रों में परेशानियां बनी हुई हैं जिनके कारण लक्षित राजकोषीय उपायों की आवश्यकता है। उम्मीद है कि आगामी बजट इन चुनौतियों का सामना करते हुए आर्थिक मजबूती को बढ़ावा देगा, निवेश प्रोत्साहित करेगा तथा पूरे देश में समावेशी प्रगति सुनिश्चित करेगा। यह अर्थव्यवस्था को सुसंगत बनाने तथा बीमार क्षेत्रों को ठीक करने का एक अवसर है। लोगों की प्रमुख चिन्ता मुद्रास्फीति बनी हुई है जिसे कठोर

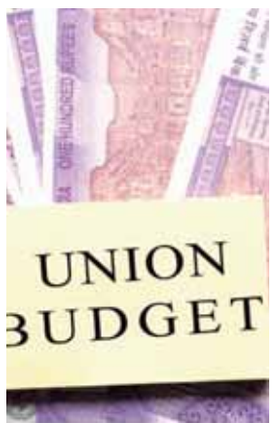

राजकोषीय नियोजन से नियंत्रण में रखा जा सकता है। राजग-3 के केन्द्रीय बजट को ढांचागत विकास तथा रोजगार सृजन को प्राथमिकता देते हुए सार्वजनिक-निजी सहयोग के माध्यम से विनिर्माण क्षेत्र को गति देने वाला होना चाहिए। व्यक्तिगत करों तथा पेंशन योजनाओं में भी बदलाव की उम्मीदें हैं जिनमें दीर्घकालीन टिकाऊपन तथा मध्य वर्ग को राहत को केन्द्र में रखा जा सकता है।

उद्योग जगत को सुधारों और प्रोत्साहनों से काफी उम्मीदें हैं ताकि वह फिर पटरी पर आ सकें। आर्थिक वृद्धि का एक प्रमुख कारक रियल इस्टेट क्षेत्र रोजगार प्रदान करने वाला प्रमुख क्षेत्र भी है। इसे तत्काल उद्योग का दर्जा दिया जाना चाहिए ताकि कम खर्च पर फाइनेंसिंग व कर लाभों तक उसकी पहुंच बन सके। सीमेंट और स्टील जैसी जरूरी सामग्रियों पर ज्यादा टैक्स तथा खासकर सीमेंट पर 28 प्रतिशत जीएसटी पर विचार किया जाना चाहिए। भारत का बिजली वाहन-ईवी क्षेत्र महत्वपूर्ण मोड़ पर है जिसे आगामी बजट से बहुत उम्मीदें हैं। सरकार को फर्मों को अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचने के लिए ईवी के प्रयोग को प्रोत्साहन देना चाहिए। नवीकरणीय ऊर्जा के विभिन्न आयामों पर वर्तमान 18 प्रतिशत जीएसटी के बजाय 5 प्रतिशत करने से 'हरित ऊर्जा' परियोजनाओं का खर्च घटेगा तथा देश भर में इनको तेजी से लागू करने को प्रोत्साहन मिलेगा। आगामी बजट से कर्मचारी कल्याण, औपचारिक रोजगार सृजन, क्रियान्वयन में जटिलता घटाने तथा कौशल की कमी को संबोधित करने की उम्मीद है। रोजगार सृजन तथा लोगों को खासकर तकनीक के क्षेत्र में आवश्यक कौशल को केन्द्र में रखा जाना चाहिए। बजट को तकनीकी ढांचे व संसाधनों पर ज्यादा धन लगाना चाहिए ताकि छात्रों को तकनीक-संचालित रोजगार बाजार के लिए तैयार किया जा सके। बजट को भारत के आर्थिक एजेंडे की दिशा सुनिश्चित करनी चाहिए जिसमें ढांचागत संरचना, रोजगार सृजन, स्वच्छ ऊर्जा व समग्र क्षेत्रीय सुधारों पर ध्यान दिया गया हो।

वृद्धि व क्षेत्रीय विकास को प्राथमिकता

हालांकि, अपने दम पर बहुमत न मिलने से भाजपा दबाव में है, पर यदि कांग्रेस नीत 'इंडिया' सरकार बनाने में सफल होता तो भारत को भयानक आर्थिक विभीषिका का सामना करना पड़ता।

ए.एस. मित्तल
(लेखक, उद्योग जगत से संबद्ध हैं)

चार जून को लोकसभा चुनाव, 2024 परिणाम आने के बाद केन्द्र 'राजकोषीय विभीषिका' की स्थिति से बचने में सफल हुआ है। हालांकि प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में भाजपा अपने दम पर पूर्ण बहुमत प्राप्त करने में विफल रही, पर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन-राजग के 53 सांसदों के साथ 293 सांसद जुटा कर वह बहुमत पाने में सफल हुई तथा सरकार बनाई। दूसरी ओर देश की सबसे पुरानी पार्टी कांग्रेस के नेतृत्व में विपक्षी गठबंधन 'इंडिया' कुल 234 सांसदों का समर्थन ही प्राप्त कर सकी। यदि 'राजग' के केवल 38 सांसद 'इंडिया' समूह में चले जाते तो वह सत्ता तक पहुंच जाती। इस परिदृश्य में कांग्रेस को अप्रैल, 2024 में जारी अपने चुनाव घोषणापत्र-'न्याय पत्र' में किए गए वादे-गारंटियां पूरी करनी पड़तीं। इनका राजकोष पर भारी बोझ पड़ता।

'महालक्ष्मी' योजना के अंतर्गत प्रत्येक गरीब भारतीय परिवार को हर साल 100,000 रुपये अनुदान की बात पर गौर करें। यह बिना शर्त के आर्थिक सहायता सीधे परिवार की सबसे वृद्ध महिला के खाते में जानी थी। यदि परिवार में महिला न होती तो इस धनराशि को परिवार के सबसे वृद्ध व्यक्ति के खाते में जाना था। एक चुनावी रैली में राहुल गांधी ने घोषणा की थी, 'शुरुआत में हम आपको 100,000 रुपये वार्षिक देंगे, जबकि बाद में हम यह राशि बढ़ा कर 2,00,000 भी कर सकते हैं।' भारत में लगभग 400 मिलियन परिवार हैं। यदि हम इन परिवारों में केवल 10 प्रतिशत को ही गरीब मानें तो उनकी संख्या 40 मिलियन होती है। इस प्रकार इस योजना से सरकारी खजाने पर हर साल 400,000 करोड़ रुपये का बोझ पड़ता। यदि यह अनुदान बढ़ा कर 200,000 कर दिया जाता तो यह खर्च बढ़ कर हर साल 800,000 करोड़ हो जातज्ञ।

बजट पर इसके कारण पड़ने वाले भारी प्रभाव को देखते हुए घोषणापत्र में योजना के साथ दो शर्तें लगाई गई थीं। पहला, 'गरीब की पहचान आय पिरामिड के सबसे नीचे वाले परिवारों के आधार पर होगी।' दूसरा, 'इस योजना को चरणों में लागू किया जाएगा तथा हर साल लाभार्थी परिवारों की समीक्षा की जाएगी तथा गरीबी उन्मूलन पर इसके प्रभाव का आंकलन होगा।' ये शर्तें इस आधार पर परिभाषित की गई थीं कि शुरुआत में सभी 40 मिलियन परिवारों को इसमें शामिल नहीं किया जाता। इसके साथ ही पार्टी बोझ को देखते हुए कुछ लाभार्थियों को छोड़ सकती थी। लेकिन योजना के अंतर्गत मिलने वाली भारी धनराशि को देखते हुए एक भी गरीब परिवार एक बार लाभार्थी परिवार के दायरे में शामिल होने के बाद किसी प्रकार उससे बाहर न जाना चाहता।

ऐसा करने का कोई भी प्रयास भारी सामाजिक-आर्थिक तनाव का कारण बनता तथा लाभार्थियों व उनसे वंचित लोगों के बीच टकराव होता। इस कारण सभी 40 मिलियन गरीब परिवारों को हर साल 200,000 लाख रुपये न मिलते।

कांग्रेस की अन्य गारंटियों में 'युवा अप्रेंटिसशिप योजना'-वाईएएस शामिल थी जिसके अंतर्गत प्रत्येक डिप्लोमाधारक बेरोजगार नौजवान को हर साल 100,000 रुपये मिलने थे। वर्तमान समय में 15-29 वर्ष आयुवर्ग के कुल 260 मिलियन युवा हैं और बेरोजगारी दर 10 प्रतिशत है। यदि सभी 26 मिलियन बेरोजगार युवाओं को 100,000 रुपये सालाना दिए जाते तो इससे खजाने पर हर साल 260,000 करोड़ का बोझ पड़ता। 'अप्रेंटिसशिप' एक प्रकार की व्यवस्था है जिसके अंतर्गत किसी युवा को एक समय तक नया कौशल सिखाया जाता है ताकि वह एक उपयुक्त रोजगार या नौकरी प्राप्त कर सके। इस कालखंड में उसे स्टाइपेंड के रूप में एक निश्चित धनराशि मिलती है। तार्किक रूप से इस व्यवस्था में प्रशिक्षण काल समाप्त होने के बाद स्टाइपेंड की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। लेकिन कांग्रेस ने इसकी कोई रूपरेखा नहीं दी थी कि प्रशिक्षण और उसके बाद अप्रेटिंसशिप पूरी कर चुके युवाओं को किन बिजनेसों में स्थान मिलेगा।

ऐसे परिदृश्य में हर साल 100,000 रुपये प्राप्त करने वाला नौजवान हमेशा वैसा ही बना रहता। इसके परिणामस्वरूप केन्द्र को लगातार हर साल 260,000 करोड़ रुपये का बोझ उठाना पड़ता।कांग्रेस ने न्यूनतम समर्थन मूल्य-एमएसपी की कानूनी गारंटी का वादा किया था। किसन इसे उन सभी 26 फसलों के लिए चाहते थे जिन पर वर्तमान समय में एमएसपी दिया जाता है। अंततः यह सभी फसलों, यानी सभी कृषि उत्पादों पर लागू होता। सरकार निजी क्षेत्र को एमएसपी पर खरीद के लिए बाध्य नहीं कर सकती, इसलिए उसे सारी फसलें खरीदनी पड़तीं। इससे हर साल खजाने पर 33,00,000 करोड़ रुपये का बोझ पड़ता। कांग्रेस ने 3 मिलियन सरकारी नौकरियों का वादा किया था। यदि औसत वेतन हर महीने 50,000 रुपये मान लिया जाए तो इसे खजाने पर 180,000 करोड़ का बोझ हर साल पड़ता।

यदि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून-मनरेगा के अंतर्गत मजदूरी बढ़ा कर 400 रुपये प्रति दिन कर दी जाए तो इससे लगभग 80,000 करोड़ रुपये का बोझ पड़ेगा। कांग्रेस ने छात्रों को एक बार कर्ज माफी का वादा भी किया था जिससे लगभग 120,000 करोड़ का बोझ पड़ता। इस प्रकार यदि कुल मिला कर देखा जाए तो कांग्रेस की 'गारंटी योजनाओं' से केन्द्र सरकार पर हर साल 47,40,000 करोड़ रुपये का असाधारण बोझ पड़ता। यदि एक बार छात्रों को माफ किए जाने वाले कर्ज का बोझ छोड़ दिया जाए तो इससे हर साल खजाने पर 46,20,000 करोड़ का बोझ पड़ता।

यह धनराशि 2024-25 के अंतरिम केन्द्रीय बजट में प्रस्तावित 47,66,000 करोड़ रुपये के लगभग बराबर है। इसके साथ ही यह 11,00,000 करोड़ रुपये के पूंजीगत खर्च से चार गुना अधिक है। 2024-25 में केन्द्र सरकार की कर्ज के अलावा कुल प्राप्तियां लगभग 30,80,000 करोड़ थीं। इनमें करों से होने वाली प्राप्तियां 26,02,000 करोड़ हैं। इस प्रकार केवल बहु-प्रचारित 'महालक्ष्मी' योजना पर होने वाला खर्च सारी प्राप्तियों तथा लगभग एक तिहाई कर प्राप्तियों को अपने भीतर समेट लेता। वर्तमान समय में राजकोषीय घाटा 2024-25 में सकल घरेलू उत्पाद-जीडीपी का 5.1 प्रतिशत है। यदि इसमें 'कांग्रेसी गारंटियों' का अतिरिक्त खर्च जोड़ लिया जाए तो यह जीडीपी का 19.1 प्रतिशत हो जाएगा। यह 2020-21 में हुए 9.2 प्रतिशत घाटे से दूना है, जब अर्थव्यवस्था विनाशकारी कोरोनावायरस वैश्विक महामारी के दुष्प्रभाव से पंगु हो गई थी।

यह सोच कर ही भय पैदा हो जाता है कि कांग्रेस की सभी 'गारंटियां' लागू होने के बाद केन्द्र का खर्च लगभग 187,35,000 करोड़ हो जाता। वर्तमान समय में केन्द्र का कर्ज जीडीपी का 57 प्रतिशत है।

राजकोषीय दायित्व एवं बजट प्रबंधन कानून-एफआरबीएम में संशोधन के बाद इसे 2024-25 में घटा कर 40 प्रतिशत किया जाना है। इसके बजाय हम 100 प्रतिशत से अधिक की ओर बढ़ रहे हैं। भारत के मजबूत आर्थिक आधारों, जीवन्त वृद्धि गतिशीलता तथा राजकोषीय मजबूती पर ध्यान देने से वैश्विक रेटिंग एजेंसियों, जैसे एसएंडपी ने हमारी सावरेन रेटिंग बढ़ाई है। इससे देश लगभग डेढ़ शताब्दी बाद 'स्थिर' से 'सकारात्मक' श्रेणी में आने में सफल हुआ है। यदि दुर्भाग्य से 'कांग्रेसी गारंटियां' लागू हो जातीं तो 'राजकोषीय व्यावहारिकता' मिट्टी में मिल जाती। ऐसी स्थिति में राजकोषीय विभीषिका पैदा होती, कर्ज बेलगाम हो जाता, ब्याज की दरें आसमान छूने लगतीं, मुद्रास्फीति बहुत बढ़ जाती, निवेश घट जाता तथा आर्थिक गतिविधियां कम हो जातीं।

'कांग्रेसी गारंटियों' यज्ञ 'खैरातों' के कारण करोड़ों लोगो को कमाने की जरूरत न रहती और वे अपनी सभी जरूरतें पूरी करने के लिए सरकारी खैरातों की ओर देखते रहते। संक्षेप में इससे भारत 'आर्थिक विनाश' की ओर आगे बढ़ता। हालांकि, अपने दम पर पूर्ण बहुमत न मिलने से भाजपा दबाव में है, पर यदि कांग्रेस नीत 'इंडिया' समूह को सत्ता मिल जाती तो भारत निश्चित रूप से आर्थिक विनाश का शिकार बन जाता।

वैश्विक राजनीति में सिनेमा की भूमिका

चैतन्य के प्रसाद
(लेखक, डीएफएफ के पूर्व एडीजी हैं)

फिल्में सिर्फ मनोरंजन से कहीं आगे निकल गई हैं; वे अब वैश्विक राजनीति और सांस्कृतिक संबंधों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। रचनात्मक अभिव्यक्तियों के माध्यम से, फ़िल्में सॉफ्ट पावर डायनेमिक्स और भू-राजनीतिक समीकरणों को पोषित करने और विकसित करने के लिए प्रमुख हितधारकों से युक्त पारिस्थितिकी तंत्र का उपयोग करती हैं। भू-राजनीति के क्षेत्र में, फ़िल्में कला से कहीं ज़्यादा हैं; वे देशों द्वारा अपनी सॉफ्ट पावर दिखाने और दुनिया भर में अपने प्रभाव का विस्तार करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले शक्तिशाली उपकरण हैं। अपने फ़िल्म उद्योगों के माध्यम से, राष्ट्र ऐसी कहानियाँ साझा करते हैं जो वैश्विक रूप से गूंजती हैं, उनकी पहचान को दर्शाती हैं और कूटनीतिक साधनों के रूप में काम करती हैं। फ़िल्में विभिन्न देशों की सामाजिक गतिशीलता में गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो अंतरराष्ट्रीय संबंधों को गहराई से प्रभावित करती हैं। आज, हम एक बहुध्रुवीय दुनिया में रहते हैं जहां सत्ता की गतिशीलता अस्थिर है, और विभिन्न हितधारक, धारणाएं, विचारधाराएं, रणनीतियां, नेटवर्क, इंटरफ़ेस और अंत:क्रियाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

आज हम जिस चुनौती का सामना कर रहे हैं, वह एक जटिल पहेली को जोड़ना है, जहां इस पहेली के हर टुकड़े की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। भौगोलिक सीमाएं तेज़ी से धुंधली हो गई हैं, वैश्वीकरण, संचार को बढ़ाने और एक नए युग की शुरुआत करने के लिए धन्यवाद, जहां प्रौद्योगिकी इन अंत:क्रियाओं को आकार देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नए खिलाड़ियों के उभरने का श्रेय सॉफ्ट पावर डायनेमिक्स की अवधारणा को दिया जा सकता है। जोसेफ एस. नाई द्वारा गढ़ा गया यह विचार संस्कृति, राजनीतिक आदर्शों और नीतियों के माध्यम से आकर्षित करने और मनाने की क्षमता का वर्णन करता है। इस संदर्भ में, सिनेमा सॉफ्ट पावर का एक अनिवार्य घटक बन गया है। एक माध्यम और मंच के रूप में सिनेमा, वैश्विक स्तर पर धारणाओं, दृष्टिकोणों और भू-राजनीतिक रुख को डिकोड करते हुए सॉफ्ट पावर डायनेमिक्स को स्थापित करने

के लिए उत्प्रेरक का काम करता है। बड़े पर्दे पर चित्रण नीतिगत बहस की गतिशीलता, वैश्विक मुद्दों और बहुध्रुवीयता और त्वरित संचार से बंधे वैश्विक ढांचे में विचारों के प्रबंधन में नई सोच को शामिल करता है। अतीत में कई फिल्मों ने बहुआयामी गतिशीलता और विभिन्न पारिस्थितिकी प्रणालियों, राष्ट्रों और व्यक्तियों पर प्रभाव को दर्शाया है। सिनेमा और विदेश नीति का इंटरफेस किसी अवधारणा या विचार की वैश्विक अपील को मजबूत करता है, जिससे सांस्कृतिक कूटनीति के लिए एक गतिशील रूपरेखा तैयार होती है। एक माध्यम के रूप में सिनेमा ने द्विपक्षीयता की गतिशीलता में एक नया उपकरण जोड़ा है, बेहतर सांस्कृतिक समझ के साथ-साथ एक नए दृष्टिकोण, विचारधारा और हस्तक्षेप के चित्रण में रचनात्मक उपकरणों का उपयोग। सिनेमा सहयोग, सहकारिता, सामंजस्य, समन्वय और अभिसरण के एक वाहन के रूप में उभरा है - सिनेमा के 5 पहलू वैश्विक मोर्चे पर, सिनेमा बाधाओं को तोड़ता है, बाधाओं को पार करता है, और पुराने और नए दोनों खिलाड़ियों की रचनात्मकता पर पनपता है। यह अब केवल पश्चिमी या यूरोसेंट्रिक आख्यानों को पूरा नहीं करता है, बल्कि एक विविध वैश्विक परिप्रेक्ष्य को अपनाता है, जो सिनेमा की धारणाओं को आकार देने और वैश्विक शक्ति गतिशीलता में एक नरम स्पर्श जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हाल के वर्षों में भू-राजनीति में सिनेमा का महत्व काफी बढ़ गया है, सरकारें तेजी से ऐसी फिल्म परियोजनाओं को वित्तपोषित कर रही हैं जो उनके राष्ट्रीय हितों और सांस्कृतिक विरासत को दर्शाती हैं। कई देश अपने फिल्म उद्योगों को अपनी वैश्विक छाप को आकार देने के लिए सॉफ्ट पावर के एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उपयोग करते हैं। फिल्मों का प्रभाव उनकी वैश्विक उपस्थिति से बहुत बढ़ जाता है, स्ट्रीमिंग सेवाओं के उदय के कारण जिसने फिल्म वितरण में क्रांति ला दी है, जिससे छोटे बाजारों की फिल्मों के लिए दुनिया भर के दर्शकों तक पहुंचना आसान हो गया है। नेटफ्लिक्स, अमेज़ॅन प्राइम और हुलु जैसे प्लेटफ़ॉर्म ने विभिन्न देशों की फिल्मों तक पहुँच को लोकतांत्रिक बना दिया है, जिससे दुनिया भर के फिल्म निर्माताओं को पारंपरिक वितरण पर निर्भर हुए बिना अपनी सांस्कृतिक कहानियों को प्रदर्शित करने की अनुमति मिलती है।

सिनेमा अपने आकर्षक आख्यानों के माध्यम से जनमत को प्रभावित करके और अंतर्राष्ट्रीय नीतियों को आकार देकर सत्ता संरचनाओं को पार कर जाता है। फिल्में चर्चाओं और राजनीतिक विश्लेषण के लिए मंच के रूप में काम करती हैं, जिससे बातचीत शुरू होती है जो सामाजिक परिवर्तन को प्रेरित कर सकती है। फिल्म निर्माता और अभिनेता सांस्कृतिक आदान-प्रदान और अंतर्राष्ट्रीय बातचीत को सुविधाजनक बनाने के लिए अपने काम का उपयोग करके महत्वपूर्ण प्रभाव वाले राजदूत के रूप में कार्य करते हैं। सिनेमा नए विचारों और अवधारणाओं के लिए एक मंच बन गया है, जो अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोहों के माध्यम से एकीकरण को बढ़ावा देता है। आज की दुनिया में सिनेमा की भूमिका अविश्वसनीय रूप से महत्वपूर्ण है। यह कहानी कहने के माध्यम से विचारों को संप्रेषित करने और अंतरराष्ट्रीय संबंधों को प्रभावित करने के लिए एक कूटनीतिक उपकरण और एक सम्मोहक माध्यम के रूप में कार्य करता है। अपने दर्शकों से परे, सिनेमा का दुनिया भर के वैश्विक नेताओं, नीति निर्माताओं और समुदायों पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है। यह एक दूत के रूप में कार्य करता है, जो मानव जीवन की जटिलताओं को प्रतिबिंबित करने वाली आकर्षक कहानियों के माध्यम से शांति, सहानुभूति और एकजुटता के संदेश फैलाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सिनेमा अब समकालीन समाज में मनोरंजन से आगे निकल गया है। राष्ट्र विश्व मंच पर अपने एजेंडे और दृष्टिकोण को बढ़ावा देने के लिए सिनेमा की शक्ति को एक उपकरण के रूप में पहचान रहे हैं, जो कूटनीति में इसके महत्व को रेखांकित करता है।

आप की बात

वृक्षारोपण अभियान

महामारी के बाद इस वर्ष गरमी ने आम आदमी को वनों की महत्ता समझाई है। भट्टी की तरह तपते घरों में कूलर और एसी भी ठंडी हवा नहीं दे पाए। अन्य सालों के मुकाबले इस वर्ष 1.5 डिग्री गरमी में बढोत्तरी हुई है जो चिंता जनक है। मुसीबत यह है कि स्वस्थ पर्यावरण तो हर आदमी चाहता है मगर उसके संरक्षण के लिए वह कतई जागरूक नहीं है और इसमें अपनी समुचित भूमिका नहीं निभाता है। मकानों, मॉलों और शानोशौकत वाली सुविधाओं के निर्माण के नाम पर आम मानवजाति वृक्ष और प्रकृति की सुंदरता के विनाश के लिए उतारू है। लगातार घटते वन क्षेत्र से धरती भट्टी की तरह तप रही है। ऐसे में इंदौर में 51 लाख पौधों का रोपण एक मिसाल बन सकता है बशर्ते पूरे पौधे वृक्ष बनने तक संरक्षित हो। इसके लिए सरकार से ज्यादा आम आदमी की जवाबदारी बनती है। अगर एक साल पौधों का समय-समय पर रखरखाव हो गया तो यह तय है कि ऐसे पौधों से सालों साल खुशहाली मिलती रहेगी। खुशी की बात है कि अब कार्पोरेट ने भी वृक्षारोपण का महत्व समझा है और एक बड़ा उद्योग घराना वृक्षारोपण के लिए लाखों पौधे देने जा रहा है। कार्पोरेट सोशल रिस्पांसिबिलिटी के अंतर्गत अन्य उद्योगपतियों को भी इस दिशा में अवश्य ही समय रहते कदम उठाने चाहिए।

– **अमृतलाल मारू,** इंदौर

लोकतंत्र की स्थिति

लोकतंत्र की स्थिति पर दुनिया भर के विद्वान विचार-विमर्श करते रहते हैं। लगभग 195 देशों वाली इस दुनिया में सिर्फ 30 देश ऐसे हैं जहाँ पूर्णत: लोकतंत्र काम कर रहा है। यहां शासकों के बजाय लोगों की राय को महत्व मिलता है। उनमे से भी 10 देश ऐसे हैं जहाँ की नागरिकता पाने के लिए हर कोई लालायित रहता है। स्वयं को लोकतंत्र बताने वाले अनेक देश आज तानाशाही में बदल गए हैं। पडोसी पाकिस्तान की सरकार ने तहरीके इंसाफ़ पर प्रतिबंध लगाने और उसके नेताओं इमरान ख़ान, आरिफ़ अल्वी और कासिम सूरी के खिलाफ कार्रवाई के लिए सुप्रीम कोर्ट का दरवाज़ा खटखटाया है जिससे उनको देशद्रोही घोषित किया जा सकता है। पाकिस्तानी अदालतों ने इमरान खान को अनेक आरोपों में बरी कर दिया है और उनको जनता का समर्थन भी प्राप्त है, लेकिन सेना उनको आजाद नहीं छोड़ना चाहती है। पाकिस्तान में लोकतंत्र के साथ यह खिलवाड़ नया नहीं है क्योंकि अपने गठन के बाद से वह अधिकांश समय परोक्ष या परोक्ष रूप से फौजी शासन में रहा है। लोकतंत्र के साथ छेड़छाड़ न केवल उस देश की जनता को अधिकारों से वंचित करती है, बल्कि कभी-कभी विश्व शांति के लिए खतरा भी पैदा करती है।

– **जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर

गेमिंग की लत

बच्चों में गेमिंग की लत एक गंभीर समस्या के रूप में सामने आई है। युवाओं में ऑनलाइन गेमिंग की बढ़ती लत से चिंतित केंद्र सरकार ने मार्च में इसे बेहतर ढंग से समझने, आवेगपूर्ण व्यवहार पर अंकुश लगाने और स्वस्थ डिजिटल आदतों को बढ़ावा देने के लिए एक अध्ययन का फैसला किया था। विशेषज्ञों का कहना है कि हाल में यह प्रवृत्ति बहुत व्यापक हो गई है। अब तक सरकारी अध्ययन के बारे में और कोई जानकारी सामने नहीं आई है, लेकिन गेमिंग की बढ़ती लत से नौजवानों और बच्चों का जीवन और भविष्य तेजी से बरबाद हो रहा है। अत: समस्या से निपटने के कदम तत्काल उठाए जाने चाहिए। एक रास्ता सभी प्रकार के वीडियो गेम्स, ऑनलाइन सट्टे वाले गेम्स और अश्लील सामग्री पर तुरंत सख्त पाबंदी लगा दी जाए। चीन में गेम खेलने का समय नियंत्रित किया जा रहा है। लेकिन हमारे यहां इसे रोकने का व्यापक तंत्र नहीं है। विडंबना है कि ऐसे गेमों के विज्ञापन को आजादी मिली है जिसमें अनेक सेलेब्रिटी भी शामिल हो जाते हैं। गेम्स के विज्ञापनों पर तत्काल प्रतिबंध जरूरी है। इसके साथ ही छात्रों, शिक्षकों व बच्चों के माता-पिता में गेम्स के खिलाफ एक जागरूकता अभियान चलाने के तरीके खोजने चाहिए।

सुभाष बुडावन वाला, रतलाम

सीढ़ियों का महत्व

लिफ्ट के युग में सीढ़ियों से चढ़कर जाना बुजुर्ग क्या युवा भी पसंद नहीं करते हैं। लिफ्ट का ही दूसरा रूप एसकेलेटर है। जो कि सीढ़ियों की तरह ही बिना श्रम किए आपको ऊपर नीचे लाती ले जाती है। लेकिन इसके नकारात्मक असर भी होते हैं। आरामतलबी की वजह से अनेक किशोरों और युवाओं में मोटापे की समस्या घर कर रही है। इसके बावजूद सभी को लिफ्ट ही चाहिए। वैसे सीढ़ियों पर चढ़ना और उतरना केवल भौतिक क्रिया के बजाय साहित्य, कल्पना और दर्शन का विषय भी रहा है। सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते पता नहीं कब जीवन की शाम आ जाती है। अनेक लोगों को वैभव व समृद्धि के शिखर पर पहुंचने पर चढ़ने का परिश्रम व्यर्थ होता नजर आता है, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। अत: जीवन की सीढ़ियों पर भी हमें अपने लक्ष्य तक पहुंचने के बाद वह जमीन भी देखनी चाहिए जहां से शुरुआत हुई थी। खुद प्रगति और समृद्धि की सीढ़ियों पर चढ़ने में सफलता के बाद हमें दूसरों को भी उन पर चढ़ने में सहायता करनी चाहिए। इससे ही पूरा देश और समाज भी प्रगति और जीवन का आनन्द उठाने में सफल होंगे।

– **विभूति बुपक्या,** खाचरोद

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

प्रेरणा

हर महान काम के पीछे सिर्फ एक प्रेरणा होती है और वो है जुनून। -हेगेल, जर्मन दार्शनिक

संपादकीय

सरकार का बाजार में हस्तक्षेप कितना प्रभावी

आम आदमी की रोजमर्रा की सबसे बड़ी जरूरत है तीन सब्जियां- आलू, प्याज और टमाटर। इनके अंग्रेजी नामों के प्रथम अक्षर को जोड़कर 2018 में एक लुभावनी योजना शुरू की गई, जिसका नाम था- 'टॉप'। उद्देश्य था, इनके रखरखाव का समुचित प्रबंधन कर दामों को नियंत्रित रखना, ताकि किसान मजबूरी में इन्हें न तो माटी मोल बेचें, ना ही इनके दाम आसमानी होकर गरीब और मध्यम वर्गों को हर साल संकट में डालें। कालांतर में इस स्कीम को विस्तार देकर 'टोटल' नाम दिया गया था, और 22 आइटम्स जोड़े गए। नई स्कीम तो पुरानी से भी लुभावनी थी। लेकिन भंडारण क्षमता 350 लाख टन से बढ़ाकर मात्र 395 लाख टन हुई, जो कुल फल-सब्जी उत्पादन का मात्र 9.5% है। नतीजतन खुदरा महंगाई रोकने में सरकार फेल रही। आलू, प्याज, टमाटर के दाम डेढ़ से दो गुना हो गए हैं। सीआईआई की रिपोर्ट के अनुसार 30-40% फल-सब्जियां बर्बाद होती हैं हालांकि सरकारी तंत्र केवल 5-16% मानता है। याद करें, पिछले साल इन्हीं दिनों टमाटर 250-300 रुपए किलो तक बिका था। समस्या की जड़ में जाना होगा। अगर आगरा-फर्रुखाबाद का किसान दो साल पहले आलू की फसल खेत में दबा देता है, लासलगांव के इलाके का किसान प्याज और कर्नाटक का किसान टमाटर सड़कों पर फेंक देता है तो यह समस्या का दूसरा पहलू है। क्या इन योजनाओं- जिन्हें एक वैल्यू-चेन स्थापित करने के लिए लाया गया था- के तहत मंडियों को आज तक एकीकृत किया जा सका है? ये तीनों उत्पाद उचित भंडारण चाहते हैं ताकि कीमतें न ज्यादा गिरें, न ज्यादा आसमानी हों। लेकिन आज भी जो टमाटर कर्नाटक का किसान 10 रुपए किलो बेचता है, दिल्ली में 150 रुपए कैसे हो जाता है? सरकार का मार्केट इंटरवेंशन (बाजार में हस्तक्षेप) प्रभावी है?

दूरदृष्टि • गरीबों पर ध्यान केंद्रित करके नीतियां बनाएं, जिनके कुछ लाभ ऊपर तक पहुंचने दें...

आम बजट से हमें क्या उम्मीदें करनी चाहिए?

इकोनॉमी

कौशिक बसु
विश्व बैंक के पूर्व चीफ इकोनॉमिस्ट

सभी की नजरें अब 2024 के केंद्रीय बजट पर टिकी हैं, जो 23 जुलाई को संसद में पेश किया जाएगा। वाकई, भारत की अर्थव्यवस्था के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण बजटों में से एक होने वाला है। कोविड-19 महामारी के बाद भारत की अर्थव्यवस्था के फिर से पटरी पर लौट आने की अच्छी संभावना है। साथ ही, कुछ कमजोरियां भी हैं, जो विकास की गति को धीमा कर सकती हैं। यह संभव है कि ऐसी नीति बनाई जाए, जो अर्थव्यवस्था को बढ़ने में मदद करे और समाज के सभी वर्गों को विकास का लाभ महसूस हो।

मुझे लगता है कि आम बजट का एक मुख्य फोकस होना चाहिए : नौकरियां। पिछले दो सालों में भारत की जीडीपी वृद्धि अच्छी रही है। हालांकि, असमानता बढ़ रही है, नौकरियों की कमी है और युवाओं में बेरोजगारी उच्च स्तर पर है। यह साफ है कि जीडीपी-वृद्धि का ज्यादातर हिस्सा अमीरों के हाथों में जा रहा है।

इस समस्या का समाधान करने के लिए यह समझना महत्वपूर्ण है कि एआई और डिजिटल तकनीक के आगमन के साथ दुनिया भर में रूटीन काम कम हो रहा है, खासकर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में जहां वेतन बहुत ऊंचे हैं। इसलिए यह आंशिक रूप से एक वैश्विक समस्या है। लेकिन एक मध्यम-आय वाले देश के रूप में, भारत को अब तक के मुकाबले बेहतर प्रदर्शन करने में सक्षम होना चाहिए, क्योंकि यहां के वेतन उच्च-आय वाले देशों की तुलना में काफी कम हैं। एक पारंपरिक बजट की अपेक्षा में, जहां ध्यान मैक्रो-इकोनॉमिक पैरामीटर्स पर होता है, जैसे कि राजकोषीय घाटे और विभिन्न अर्थव्यवस्था-व्यापी सूचकांकों पर, इस बार बजट का उपयोग करके कुछ सूक्ष्म आर्थिक (माइक्रो-इकोनॉमिक) विकास के प्रेरकों और आय के बेहतर वितरण पर ध्यान देना चाहिए।

कुछ लोग सोच सकते हैं कि मैं नौकरियों और रोजगार पर क्यों ध्यान दे रहा हूं, जबकि इस हफ्ते ही हमें आरबीआई के केएलईएमएस डेटा से पता चला है कि 2023-24 में रोजगार वृद्धि दर 6% तक बढ़ गई है और बेरोजगारी दर 7% तक गिर गई है, जो कि पिछले 20 महीनों में सबसे कम है। ऐसे में महत्वपूर्ण यह समझना है कि रोजगार होना और नौकरी होना एक ही बात नहीं है। वह आदमी जो सड़क किनारे बैठकर छोटे-मोटे सामान बेचने की कोशिश करता है और मामूली कमाई करता है, उसके पास नौकरी नहीं है, लेकिन वह रोजगार कर रहा है। सभी सबूत यह दर्शाते हैं कि इस तरह का अस्थायी रोजगार भारत में बढ़ गया है।

अधिकतर जीडीपी-वृद्धि का लाभ उच्च वर्ग को मिलने और महामारी के वर्षों की कठिनाइयों के कारण आम लोगों के पास कोई विकल्प नहीं बचता। उन्हें जो भी काम मिले, उसे करना ही होता है और स्थायी व्यवसाय नहीं प्राप्त होता। यह बेरोजगारी के कम होने के रूप में दिखाई देता है, लेकिन वास्तव में यह आम लोगों की बढ़ती कठिनाइयों को दर्शाता है। कृषि क्षेत्र में श्रम-बल की हिस्सेदारी में वृद्धि हुई है। चूंकि कृषि सेक्टर में उत्पादकता अन्य क्षेत्रों की तुलना में बहुत कम है, इसलिए जब मजदूर इस क्षेत्र में जाते हैं, तो यह दर्शाता है कि अन्य जगहों पर अवसरों की कमी है। यही वह स्थिति है, जिसे अर्थशास्त्री छद्म बेरोजगारी कहते थे।

समाज के सबसे गरीब 40% हिस्से पर फोकस करें...

विश्व बैंक ने 'साझा समृद्धि' के मानदंड की वकालत की है। यह एक गांधीवादी विचार है, जिसका मतलब है कि राष्ट्रों की तुलना करते समय हमें पूरे देश की जीडीपी को नहीं, बल्कि समाज के सबसे गरीब 40% हिस्से को देखना चाहिए।

तो बजट को क्या करना चाहिए? मेरा सुझाव है कि राजकोषीय घाटे को लेकर बहुत सख्त न हों। भारत एक या दो वर्षों के लिए सामान्य से अधिक फिस्कल डेफिसिट झेल सकता है ताकि नौकरियों के सृजन को बढ़ावा मिल सके, और फिर दो वर्षों में घाटे को कम करने की योजना बनाई जा सकती है। इसके बजाय हमें मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र के विस्तार और अधिक काम के सृजन के लिए प्रोत्साहन तैयार करने की आवश्यकता है। इसके लिए भारत के श्रम कानूनों में संशोधन की आवश्यकता होगी, लेकिन यह बजट से परे है। हालांकि जब तक हम इसके लिए इंतजार कर रहे हैं, मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म प्रोत्साहन तैयार किए जा सकते हैं।

अगर यह बहुत महंगा हो जाता है और हमें घाटे के अधिक बढ़ने की चिंता है, तो हमें अमीरों पर कर बढ़ाने में हिचकिचाना नहीं चाहिए। सितंबर 2019 में, कॉर्पोरेट टैक्स में तेज कटौती की गई थी, जो 30% से घटाकर 22% कर दी गई थी। इससे 2019 और 2020 में सरकार को 1.84 लाख करोड़ रुपए का राजस्व नुकसान हुआ। अगर इस दर कटौती का आधा हिस्सा बहाल कर दिया जाए और दर को 26% कर दिया जाए, तो हमें छोटी मैन्युफैक्चरिंग इकाइयों को विस्तार और अधिक लोगों को रोजगार देने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए पर्याप्त धन जुटाने में सक्षम होना चाहिए, जिसका बड़ी फर्मों के व्यवहार पर बहुत कम प्रभाव पड़ेगा।

विश्व बैंक ने 'साझा समृद्धि' (शेयर्ड प्रॉस्पेरिटी) के मानदंड की वकालत की है। यह एक गांधीवादी विचार है, जिसका मतलब है कि राष्ट्रों की तुलना करते समय हमें पूरे देश की जीडीपी को नहीं, बल्कि समाज के सबसे गरीब 40% हिस्से को देखना चाहिए। उस पर ध्यान केंद्रित करने से हमें ऐसी नीतियां बनाने में मदद मिलेगी, जो यह सुनिश्चित करें कि विकास का लाभ आय वितरण के निचले सिरे तक पहुंचे।

पुराने समय में कुछ अर्थशास्त्री यह तर्क देते थे कि शीर्ष पर विकास होना चाहिए और फिर इसके लाभ नीचे तक पहुंचने चाहिए।

मैं जो सुझाव दे रहा हूं, वो यह है कि हमें गरीबों पर ध्यान केंद्रित करके नीति बनानी चाहिए और फिर इसके कुछ लाभ ऊपर तक पहुंचने दें!

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
ptvijayshankarmehta.com

बाहरी माहौल के दुष्प्रभाव से बच्चों को बचाना होगा

जिन माता-पिता को अपने बच्चों की चिंता हो, उन्हें अब यह बात बहुत अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि शराब व मोबाइल बच्चों के सबसे बड़े दुश्मन बन चुके हैं। एक के बाद एक घटी घटनाओं ने न सिर्फ हमें लज्जा में डाला बल्कि घिन पैदा कर दी है। बारह-तेरह साल के बच्चे आठ साल की बच्ची के साथ दुष्कर्म कर जाते हैं। विचार करिए, ऐसा आत्मा को आहत करने वाला दृश्य अचानक नहीं घटा। एक और दृश्य विचार करने पर मजबूर करता है कि पांच-दस रिक्त स्थानों के लिए डेढ़-दो हजार युवक इकट्ठे होते हैं। युवा तन को काम नहीं है, तो युवा मन और भटकेगा। बेरोजगारी, विलासिता, उच्छृंखलता ये सब जीवन शैली में उतर गए हैं। बेशक, बच्चे अपराध न करें, पर एक ऐसी दुनिया में प्रवेश कर गए हैं, जहां अपराध में उनकी रुचि जाग रही है। इसलिए मां-बाप अपने बच्चों के साथ समय जरूर गुजारें, खासतौर पर सोलह वर्ष की कम उम्र के बच्चों के साथ। मां या पिता में से कोई एक रात को उनके साथ सोएं और कोई ऐसा वार्तालाप या गतिविधि करें, जो नींद में उसके व्यक्तित्व को रचनात्मक बनाए। उठते समय भी बच्चों के साथ उठें। ये दो प्रयोग बाहर के वातावरण के दुष्प्रभाव से बच्चों को बचाएंगे।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

डिफ्रेंट एंगल • एआई मॉडल के प्रशिक्षण में इस्तेमाल डेटा पर अंग्रेजी और अमेरिकी दृष्टिकोण ही हावी है

पूर्वाग्रहों से भरी एआई भारत के लिए चुनौती-अवसर दोनों

टेक्नोलॉजी

अविजित घोष
नॉर्थईस्टर्न यूनिवर्सिटी के पूर्व लेक्चरर
avijitg22@gmail.com

एक शाम मैंने एलेक्सा (वॉइस असिस्टेंट) से कहा, 'श्रेया घोषाल की आवाज में धूम ताना गाना प्ले करो।' हालांकि मैंने ये अनुरोध अंग्रेजी भाषा में किया था, लेकिन मेरे बंगाली लहजे से एलेक्सा गफलत में पड़ गई और कई कोशिशों के बाद भी गाना प्ले नहीं कर पाई। पर जब मेरे पार्टनर ने अपने अमेरिकी लहजे में गलत-सही उच्चारण से वही गाना प्ले करने को कहा, तो एलेक्सा तपाक से समझ गई। भारतीय यूजर्स को पूरी तरह पहचानने या उन्हें समझने में नाकाम एआई सिस्टम से जुड़े इस घटनाक्रम से मैं सकते में आ गया। और मुझे लगता है कि एआई क्रांति के दौर में ऐसा सोचने वाला इकलौता मैं ही नहीं हूं।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) एक टेक्नोलॉजी है, जिसमें मशीन डेटा से सीखती और निर्णय लेती है। हालांकि कई बार एआई सिस्टम पक्षपातपूर्ण निर्णय लेते हैं और अपने पूर्वाग्रहों के साथ समस्याएं खड़ी कर सकते हैं। वहीं, एआई एथिक्स का उद्देश्य निष्पक्ष, सुरक्षित और लोगों के अधिकारों का सम्मान करने वाली टेक्नोलॉजी का निर्माण है। लेकिन जब एआई सबके लिए समान रूप से काम नहीं करती तो समस्याएं खड़ी कर सकती है, खासतौर पर भारत जैसे विविधतापूर्ण देश के सामने। अपने इस आलेख की तैयारी के लिए जब मैंने 'स्टेबल डिफ्यूजन एक्सएल' (शब्दों से तस्वीर तैयार करने वाला एआई मॉडल) से कुछ तस्वीरें तैयार कीं, तो भारतीय संदर्भ में इसने साफ-साफ भेदभाव का उदाहरण सामने पेश कर दिया। उच्च शिक्षित लोगों या ज्यादा वेतन पाने वालों के प्रस्तुतिकरण में इसने बमुश्किल ही महिलाओं को चित्रित किया, साथ ही अशिक्षित और दिहाड़ी मजदूरी करने वालों को एआई मॉडल ने बहुत सांवला दिखाया।

इस तरह के पूर्वाग्रहों के मूल में दरअसल एआई मॉडल के प्रशिक्षण में इस्तेमाल हुआ डेटा है, जो कि ज्यादातर अंग्रेजी में है और इंटरनेट पर मौजूद सामग्री से लिया गया है, जहां अमेरिकी दृष्टिकोण ही हावी है। एआई मॉडल्स, डेटा पर निर्भर है, इसलिए उच्च गुणवत्तापूर्ण डेटा का सावधानी से इस्तेमाल जरूरी है। पश्चिमी देशों में तैयार किए गए एआई मॉडल्स अक्सर भारतीय संस्कृति, भाषाई और सामाजिक आर्थिक विविधता के लिए जिम्मेदार नहीं होते हैं, जिससे उनकी प्रभावशीलता भी कम होती है। यूनिवर्सिटी ऑफ कोपेनहेगन के हालिया शोध में सामने आया कि चैटजीपीटी से जब अन्य देशों और संस्कृतियों के बारे में पूछा जाता है, तब भी वह मुख्य रूप से अमेरिकी मानदंडों व मूल्यों को दर्शाने के साथ उसे बढ़ावा देता है।

भारत में सबको साथ में लेकर चलने वाली समावेशी एआई तैयार करना इसलिए भी कठिन है क्योंकि देश का राजनीतिक और सांस्कृतिक दायरा बहुत जटिल है, जिसमें 22 आधिकारिक भाषाएं और 1652 से ज्यादा बोलियां हैं। एक आर्टिकल में सामने आया है कि चैटजीपीटी जैसी कुछ टेक कंपनियां विवादों के डर से भारत में एआई टेक्नोलॉजी अपनाने में हिचक रही हैं। इसके कारण देश में इनोवेशन और लाभकारी एआई टेक्नोलॉजी को अपनाने की गति धीमी पड़ सकती है। वहीं, जब बात ग्रामीण भारत में इसे अपनाने की हो तो एआई आधारित अनुवाद प्रणाली अंग्रेजी-केंद्रित डेटा पर प्रशिक्षित होने के कारण प्रासंगिक और बोलचाल के अनुवादों के साथ जूझती है। हालांकि इससे एआई मॉडल्स को अपनाने की गति में फर्क नहीं पड़ा है। आईबीएम की 2024 में आई रिपोर्ट के मुताबिक 59 प्रतिशत भारतीय कंपनियों ने पहले ही एआई को तैनात कर दिया है।

पश्चिमी मॉडल जिन जटिल समस्याओं की पहचान करने में विफल रहा है, उसके चलते हमें देखना चाहिए कि क्या एआई के लाभ सभी भारतीयों को समान रूप से मिल पा रहे हैं। एआई के सही मायनों में लोकतांत्रिक इस्तेमाल के लिए समुदायों को सशक्त करने की जरूरत है ताकि वे समझें कि उन्हें प्रभावित करने वाले एआई टूल्स कैसे काम करते हैं। एआई डिजाइन में मानव केंद्रित रणनीति के लिए साथ मिलकर काम करना होगा, जिसमें टेक्नोलॉजी जानकारों के साथ, डोमेन विशेषज्ञ, समुदाय के लोग भी हों। 'एआईफॉरभारत', 'कलेक्टिव इंटेलिजेंस प्रोजेक्ट' जैसी पहल उदाहरण हैं। जहां 'एआईफॉरभारत' भारतीय भाषाओं के लिए डेटासेट व भाषा मॉडल विकसित करती है, वहीं कलेक्टिव इंटेलिजेंस लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के माध्यम से एआई में सामुदायिक लक्ष्यों को शामिल करती है। इन चुनौतियों पर सक्रियता से काम किया जाए तो भारत भी एआई सिस्टम तैयार कर सकता है। इसके लिए इनोवेशन, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशीलता और एथिक्स की जरूरत है। अपने सांस्कृतिक ताने-बाने को संरक्षित करते हुए एआई की क्षमता का उपयोग करने का भारतीय दृष्टिकोण अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिए मॉडल बन सकता है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

आपकी राय

योगेश गोयल, पत्रकार व लेखक

वायु प्रदूषण को लेकर दुनिया संजीदा नहीं है

वायु प्रदूषण के दुष्प्रभावों को लेकर हम अब भी संजीदा नहीं हुए हैं, जबकि दुनियाभर में लाखों लोग हर साल असमय ही काल के ग्रास बन रहे हैं। यूनिसेफ और 'हेल्थ इफेक्ट्स इंस्टीट्यूट' की ताजा रिपोर्ट 'स्टेट ऑफ द ग्लोबल एयर-2024' में बताया गया है कि पूरी दुनिया में 2021 में वायु प्रदूषण के कारण कुल 81 लाख लोगों की मौत हुई, मरने वालों में 7.09 लाख बच्चे 5 वर्ष से भी कम आयु के थे। विश्लेषण से पता चलता है कि वायु प्रदूषण से दुनिया में हर घंटे 80 से भी ज्यादा बच्चों की मौत हो रही है। भारत में ही 2021 में वायु प्रदूषण 1,69,400 बच्चों की मौत का कारण बना। वायु प्रदूषण से बच्चों के मस्तिष्क और दूसरे अंगों पर भी प्रभाव पड़ता है। यूनिसेफ की ही एक रिपोर्ट में बताया जा चुका है कि भारत में लगभग सभी स्थानों पर वायु प्रदूषण निर्धारित सीमा से अधिक है, जिससे बच्चे सांस, दमा तथा फेफड़ों से संबंधित बीमारियों और अल्प विकसित मस्तिष्क के शिकार हो रहे हैं। विभिन्न अध्ययनों में यह तथ्य भी सामने आया है कि घरों के भीतर का प्रदूषण भी बच्चों के स्वास्थ्य को बुरी तरह से प्रभावित कर रहा है। कुछ रिपोर्टों के मुताबिक वायु प्रदूषण से नवजातों की मौतों में से दो तिहाई मौतों का कारण घरों के अंदर का प्रदूषण ही है। बहरहाल, मानसून के इस समय में पौधारोपण करके हम अपने-अपने हिस्से की जिम्मेदारी निभा सकते हैं।

आप अपनी टिप्पणी editpage@dbcorp.in पर भेज सकते हैं।

पुरस्कृत तस्वीरः जब एक बच्चे के लिए भिड़े दो देश

कम्युनिस्ट देश क्यूबा से भागकर अमेरिका आ रहीं एक महिला की लाश फ्लोरिडा के तट पर मिली थी, उनका 5 साल का बेटा एलियान गोंज़ालेज़ इसमें बच गया। फिर क्यूबा और अमेरिका के बीच उसकी कस्टडी का मुद्दा छिड़ गया। मियामी के कम्युनिस्ट विरोधी नेता चाहते थे कि एलियान मियामी में रिश्तेदारों के साथ रहे। पिता चाहते थे कि उसे क्यूबा लाया जाए। कानून क्यूबा के पक्ष में था। इसलिए नन्हे एलियान को लेने के लिए जब अमेरिकी सेना पहुंची तो विवाद खड़ा हो गया। इस तस्वीर को 2001 में पुलित्जर पुरस्कार मिला था।। **तस्वीर साभार : Alan Diaz**

मुद्दा • मोदी इसके लिए एक उपयुक्त नेता हैं

पर्यावरण के लिए भारत ही दुनिया के नेतृत्व में सक्षम

क्लाइमेट

प्रो. चेतन सिंह सोलंकी
आईआईटी बॉम्बे में प्रोफेसर
chetanss@gamil.com

लगता है कि दुनिया नेतृत्व की कमी से जूझ रही है। ऐसे युग में जहां हम एआई में महारत हासिल कर रहे हैं, लोग अभी भी ऐसी सरल-सी समस्याओं से संघर्ष कर रहे हैं, जिन्हें प्रभावी नेतृत्व से हल किया जा सकता था। भारत की सिलिकॉन वैली कहलाने वाले बेंगलुरु- जो कि इनोवेशन और टेक्नोलॉजी का केंद्र है- में पीने का पानी कोई मुद्दा नहीं होना चाहिए। फिर भी, यह है। नीति आयोग के समग्र जल प्रबंधन सूचकांक के अनुसार बेंगलुरु में पानी की गंभीर कमी है। यह एक ऐसी स्थिति है, जो शहरी भारत में जल-प्रबंधन के व्यापक संकट को उजागर करती है। मेरा मानना है कि यह समस्या पानी नहीं, नेतृत्व और शासन की कमी से उपजी है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में अधिकांश भारतीयों को शौचालय उपलब्ध कराने की समस्या को स्वच्छ भारत मिशन के माध्यम से हल किया गया। अक्टूबर 2019 तक, सरकार ने ग्रामीण भारत को खुले में शौच मुक्त घोषित किया, जिसके लिए 10 करोड़ से अधिक शौचालय बनाए गए। यह मौलिक मुद्दों को प्रभावी ढंग से संबोधित करने और हल करने की प्रधानमंत्री की क्षमता को प्रदर्शित करता है। लेकिन जब ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की समस्या को हल करने की बात आती है तो लगता है भारत ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में नेताओं की कमी है। लगता है कि कोई भी नेता इतना बड़ा नहीं है कि इस मुद्दे पर विश्व को समाधान की ओर ले जा सके।

195 देशों द्वारा पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद भी- जिसमें 2015 के स्तर से कार्बन उत्सर्जन को कम करना शुरू करने और 2030 तक उसे 45% तक घटाने पर सहमति व्यक्त की गई थी- कार्बन उत्सर्जन में कमी का कोई महत्वपूर्ण संकेत नहीं है। वास्तव में, वैश्विक कार्बन उत्सर्जन 2023 में 40 अरब टन से अधिक के रिकॉर्ड उच्च स्तर पर पहुंच गया है। यह 2022 की तुलना में 1.1% की वृद्धि को दर्शाता है, जो बढ़ते उत्सर्जन की चिंताजनक प्रवृत्ति को जारी रखता है। ऐसा लगता है कि पूरी दुनिया के देश एक-दूसरे को बेवकूफ बना रहे हैं। पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर के बावजूद सीओ2 उत्सर्जन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। सीओ2 एक ग्रीनहाउस गैस है, जो वायुमंडल में गर्मी को रोक लेती है। इसके बढ़ते स्तर से ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु-परिवर्तन होता है। तत्काल ही कठोर कार्रवाई की आवश्यकता है।

प्रधानमंत्री मोदी आज दुनिया में सबसे लोकप्रिय नेताओं में से एक हैं। हाल के सर्वेक्षणों के अनुसार उनकी अप्रूवल-रेटिंग 70% से अधिक रही है। उन्होंने अपनी कूटनीतिक सूझबूझ ने अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत का कद बढ़ाया है। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस जैसी पहल की है। वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति और मूल्यों को बढ़ावा देने की क्षमता प्रदर्शित की है। जी-20 और संयुक्त राष्ट्र जैसे मंचों में उनकी सक्रिय भागीदारी वैश्विक नीतियों को आकार देने और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने में उनकी भूमिका

जलवायु-परिवर्तन विनाशकारी होता जा रहा है। समय तेजी से बीत रहा है। भारत ही ऐसा देश है, और मोदी ही ऐसे नेता हैं, जो सीमित संसाधनों वाले इस ग्रह पर दुनिया को दिखा सकते हैं कि सस्टेनेबल तरीके से जीवन कैसे जिया जाए।

को भी रेखांकित करती है। वे पर्यावरण-संरक्षण और जलवायु-कार्रवाई के भी मुखर समर्थक रहे हैं। इसी कड़ी में मिशन लाइफ (पर्यावरण के लिए जीवनशैली) का शुभारंभ एक अग्रणी कदम था।

मिशन लाइफ के सिद्धांतों पर चलना भारतीयों के लिए मुश्किल नहीं होगा। प्रकृति का सम्मान करना और हवा, पानी, मिट्टी, पेड़, पहाड़ों जैसे प्राकृतिक संसाधनों की पूजा करना हमारी संस्कृति का हिस्सा रहा है। जीवन के अंत तक सामग्रियों का कुशलतापूर्वक उपयोग करना भारतीयों के लिए एक आदर्श रहा है। प्रधानमंत्री की समावेशी नेतृत्व शैली ने उन्हें जलवायु संकट के माध्यम से दुनिया का मार्गदर्शन करने में सक्षम नेता के रूप में स्थापित किया है। भारत को 'विश्व गुरु' बनाने का उनका दृष्टिकोण जलवायु-कार्रवाई का नेतृत्व करने के लिए एक वैश्विक नेता की आवश्यकता के साथ पूरी तरह से मेल खाता है। मैं उनसे आग्रह करता हूं कि मिशन लाइफ को लागू करके अपने नेतृत्व-कौशल का सही मायने में प्रदर्शन करें।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नजरिया • प्याज जैसी जरूरी खाद्य सामग्री की कीमतें सरकार के काबू में क्यों नहीं रहतीं?

खानपान की चीजों में मौसमी उतार-चढ़ाव कब तक?

मार्केट

नीरज कौशल
कोलंबिया यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर
nk464@columbia.edu

कुछ दिनों पूर्व की स्थिति यह थी कि सूखा प्याज ताजे प्याज के राष्ट्रीय औसत खुदरा मूल्य के लगभग पांचवें हिस्से पर ऑनलाइन उपलब्ध था। आपके नजदीकी ग्रॉसरी स्टोर पर इसकी कीमत और कम होने की संभावना है। सूखा प्याज खाना पकाने के समय को 10% तक कम भी कर देता है और उसे ताजे प्याज की तरह छीलने की जरूरत भी नहीं होती। जब ताजे प्याज की कीमतें बढ़ जाती हैं तो रेस्तरां वाले अक्सर ड्राइड अनियन का उपयोग करते हैं। इसके उपयोग का अर्थशास्त्र इतना स्पष्ट है कि रेस्तरां इसकी अनदेखी नहीं कर सकते।

याद रखें प्याज की कीमतें, अन्य वस्तुओं की कीमतों की तरह मांग और आपूर्ति पर निर्भर करती हैं। अगर प्याज बहुत महंगा हो जाता है और बड़े पैमाने पर उपभोक्ता सूखे प्याज का उपयोग करने लगते हैं- जो कि उसकी तुलना में बहुत सस्ता है- तो प्याज की मांग भी घट जाएगी और कीमतें भी। जब दीर्घकालीन रूप से थोक विक्रेताओं को एहसास होगा कि भारतीय उपभोक्ता प्याज के बाजार को समझ चुके हैं, तो वे पाएंगे कि प्याज का स्टॉक करना अब फायदेमंद नहीं रह गया है। कीमतों के मुताबिक अपनी मांग को समायोजित करें, और प्याज की कीमतों में मौसमी उतार-चढ़ाव बीते कल की बात बन जाएगा।

सरकारों से प्याज की कीमतों में उतार-चढ़ाव की समस्या को हल करने की उम्मीद मत कीजिए। यकीनन, सरकार उपभोक्ताओं के हित में सोचती है और उनके लिए काम करती भी है। लेकिन अकसर उसके प्रयासों के उलटे ही नतीजे निकलते हैं। अव्वल तो यह कि थोक व्यापारी सरकार के अगले कदम का पूरी तरह से अनुमान लगा लेते हैं। प्याज के मामले में वो पहले ही जमाखोरी शुरू कर देते हैं, जिससे आपूर्ति और कम हो जाती है और कीमतें बढ़ जाती हैं। इससे भी बदतर यह कि सरकारी हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप प्याज की फसल और अगले साल के प्याज उत्पादन में भी विसंगतियां पैदा हो जाती हैं। जब सरकार प्याज के बाजार में हस्तक्षेप करती है- निर्यात पर प्रतिबंध लगाकर या उच्च निर्यात शुल्क लगाकर- तो वह ऐसे प्रोत्साहन उत्पन्न करती है, जिनका दीर्घकालिक प्रभाव होता है। सरकार आयात के जरिए प्याज की कीमतों को प्रभावित करने की कोशिश करती है, जो अक्सर नाकाम रहता है। 2019 में जब प्याज की कीमतें आसमान छू रही थीं, तो सरकारी स्वामित्व वाली एमएमटीसी ने 1 लाख टन प्याज का आयात किया था, लेकिन जब तक आयात आता, तब तक प्रमुख मंडियों में कीमतें गिरकर 20-25 रुपए प्रति किलो तक हो गई थीं। ऐसे में कोई भी राज्य सरकार एमएमटीसी से 50 रुपए में प्याज नहीं खरीदने वाली थी।

भारत में प्याज की कीमतों में मौसमी उतार-चढ़ाव हैरान करने वाला है। वैश्वीकरण, परिवहन की बढ़ती सुविधा और घटती लागत, आधुनिक कोल्ड स्टोरेज और फूड प्रोसेसिंग ने अधिकांश खराब होने वाले फलों और सब्जियों की कीमतों में मौसमी उतार-चढ़ाव को कम कर दिया है। लेकिन प्याज की कीमतें इसका अपवाद बनी हुई हैं। पिछले दो दशकों में, खुदरा मूल्य में मौसमी उतार-चढ़ाव 10 रुपए से लेकर कुछ बाजारों में 160 रुपए प्रति किलो या इससे भी अधिक रहा है।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

Machine Translated by Google

आश्चर्य त्वरण

अनियमित बारिश ने मुद्रास्फीति पर अंकुश लगाने के लक्ष्य को और अधिक चुनौतीपूर्ण बना दिया है, खुदरा कीमतों में आश्चर्यजनक वृद्धि दर्ज की गई है।

आर जून के प्रावधान के साथ पिछले महीने उत्सव राष्ट्रीय उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (CPI) रीडिंग से पता चलता है कि मुद्रास्फीति पांच महीने की गिरावट के बाद 5.08% पर पहुंच गई, जो मई में दर्ज 4.80% से 28 आधार अंक अधिक है। जैसी कि उम्मीद थी, खाद्य कीमतें मुख्य दोषी थीं। उपभोक्ता खाद्य मूल्य सूचकांक (CFPI) पर आधारित साल-दर-साल खाद्य मूल्य सूचकांक जून में 67 आधार अंकों की तेजी के साथ 9.36% पर पहुंच गया, जो चिंताजनक है। इससे भी अधिक निराशाजनक बात यह है कि CFPI ने 11 महीनों में सबसे तेज़ अनुक्रमिक त्वरण दर्ज किया, क्योंकि खाद्य कीमतें मई के स्तर से 3.17% बढ़ीं और व्यापक CPI को भी पिछले महीने से 1.33% अधिक खींच लिया। खाद्य मूल्य लाभ में यह वास्तव में इस तरह की अप्रत्याशितता है जो मौद्रिक नीति निर्माताओं को ब्याज दरों को अपरिवर्तित छोड़ने का विकल्प चुनने में चिंतित करती है। आरबीआई के डिप्टी गवर्नर माइकल देवव्रत पात्रा ने पिछले महीने मौद्रिक नीति समिति की बैठक में इस बात पर जोर दिया था कि "भारतीय अर्थव्यवस्था खाद्य मूल्य झटकों की बंधक बनी हुई है। उनके बार-बार होने से मौद्रिक नीति की निगरानी को और अधिक बढ़ाने की जरूरत है, ताकि अन्य घटकों और अपेक्षाओं से दूर रहा जा सके।" खाद्य मूल्य डेटा से पता चलता है कि सीएफपीआई की नौ उप-श्रेणियों ने महीने-दर-महीने लाभ दर्ज किया है, जिनमें से चीनी और मसालों के समूह को छोड़कर आठ में क्रमिक तेजी दर्ज की गई है। सब्जियों की कीमतों में सबसे अधिक तेजी जारी रही, जो साल-दर-साल 29.3% और चिंताजनक 11 महीने की क्रमिक दर 14.2% रही। सबसे अधिक खपत वाले आलू, प्याज और टमाटर में सबसे तेज वृद्धि दर्ज की गई, जिनकी कीमतों में साल-दर-साल क्रमशः 57.6%, 58.5% और 26.4% की वृद्धि हुई।

न ही खाद्य कीमतों का पूर्वानुमान बहुत आरामदायक है। उपभोक्ता मूल्य निगरानी प्रभाग के वेबसाइट पर मौजूद डेटा से पता चलता है कि आलू और प्याज का अखिल भारतीय औसत खुदरा मूल्य 15 जुलाई तक लगातार बढ़ रहा है, जो एक साल पहले की तुलना में क्रमशः लगभग 56% और 67% अधिक है। और टमाटर की कीमतें, हालांकि 12 महीने पहले की तुलना में लगभग 43% कम हैं, मध्य जून की तुलना में 76% अधिक थीं, जो संभवतः इसकी कीमत की गति में बदलाव का संकेत है। खाद्य टोकरी के सबसे बड़े घटक अनाज की कीमतों में भी थोड़ी राहत मिली, चावल और गेहूं की औसत खुदरा कीमत एक साल पहले की तुलना में क्रमशः लगभग 10% और 6% अधिक रही। साथ ही, 14 जुलाई तक के आईएमडी डेटा से पता चलता है कि 1 जून से देश भर में वर्षा न केवल 2% कम रही, बल्कि स्थानिक रूप से विषम भी रही। भारत के 36 मौसम विज्ञान उप-विभागों में से ग्यारह को अभी भी 'कम बारिश' के रूप में वर्गीकृत किया गया है, जिसका अर्थ है कि इन क्षेत्रों में लंबी अवधि के औसत से 20%-59% कम बारिश हुई है। पंजाब सहित कुछ प्रमुख खाद्य उत्पादक क्षेत्रों में कम बारिश के साथ, नीति-निर्माताओं के सामने बारिश की गति को धीमा करने की एक कठिन चुनौती है।

राष्ट्रीय भावना

यूरो और कोपा ने पूरे यूरोप और अमेरिका में राष्ट्रवादी भावनाओं को भड़काया। फुटबॉल के दीवानों में लंबे समय से यह आशंका

टी रही है कि क्लब धीरे-धीरे अंतरराष्ट्रीय खेल की लोकप्रियता को खत्म कर रहे हैं। पैसे से लदे फ्रैंचाइजी वैश्विक बाजार से सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ियों को खरीदते हैं जबकि राष्ट्रीय टीमों को अलग-थलग रहकर काम करना पड़ता है। और जहां भी सर्वश्रेष्ठ प्रतिभा जाती है, खेल बेहतर होता है और लंबे क्लब सीजन रणनीति विकसित करने, शैलियों को विकसित करने और इस तरह दर्शकों की रुचि को बढ़ाने के लिए पर्याप्त समय और स्थान प्रदान करते हैं। फिर भी, जैसा कि रविवार को बर्लिन और मियामी में हुई घटनाओं से पता चला, अभी भी अंतरराष्ट्रीय सफलता की तरह फुटबॉल प्रशंसक के जुनून को जगाने वाली कोई चीज नहीं है। यूरोपीय चैंपियनशिप में स्पेन की चौथी बार जीत और कोपा अमेरिका में अर्जेंटीना की 16वीं बार जीत ने उनके देशों को उन्मादी जश्न मनाने के लिए मजबूर कर दिया, जबकि पराजित इंग्लैंड - लगातार दूसरे संस्करण के लिए - और कोलोम्बिया गहरे शोक में डूब गए। स्पेन की जीत लुइस डे ला फूएंते की शानदार कोचिंग और रोड्री की खेल निर्माण प्रतिभा के कारण हुई।

इसमें अनुभव और युवा खिलाड़ियों का आदर्श मिश्रण भी था क्योंकि इसने बेहतरीन फुटबॉल खेला और लगातार दो बार जर्मनी, फ्रांस और इंग्लैंड जैसी दिग्गज टीमों को हराया। लियोनेल स्कालोनी की अगुआई और लियोनेल मेस्सी की कप्तानी वाली अर्जेंटीना ने तीन नॉक-आउट मैचों में से दो जीतने के लिए पेनल्टी शूटआउट और अतिरिक्त समय की जरूरत महसूस की।

दोनों महाद्वीपीय प्रतियोगिताओं में स्पेनिश विंगर लेमिन यामल (17) और निको विलियम्स (22), जर्मन हमलावर जमाल मुसियाला (21), वेनेजुएला के डिफेंडर जॉन अरामबुरु (21) और ब्राजील के फॉरवर्ड सविन्हो (20) जैसे युवाओं ने शानदार प्रदर्शन किया। जॉर्जिया और टर्की ने तेज आक्रामक फुटबॉल से मंत्रमुग्ध कर दिया, जबकि कनाडा ने कोपा सेमिनल में शानदार पहली बार प्रवेश किया। जेम्स रोड्रिग्ज से प्रेरित कोलोम्बिया ने 2022 विश्व कप से चूकने के बाद कोपा - फाइनल में पहुंचकर खुद को भुनाया। हालांकि, मौजूदा यूरो चैंपियन इटली और नेमार-रहित ब्राजील ने निराश किया। सेमिनलिस्ट काइलियन एम्बाप्पे का फ्रांस काफी हद तक साधारण था लेकिन क्रिस्टियानो रोनाल्डो (39) और मेस्सी (37) - जिन्होंने पिछले तीन सालों में एक विश्व कप और दो कोपा अमेरिका जीते हैं - ने अभी भी दरवाज़ा बंद नहीं किया है। फ़ुटबॉल के इस महीने में एकमात्र ख़राब बात संयुक्त राज्य अमेरिका में कोपा अमेरिका का घटिया आयोजन था। पिच, प्रशिक्षण सुविधाओं और टिकट की कीमतों के बारे में शिकायतें बहुत थीं। प्रशंसकों की बेचैनी के कारण फाइनल एक घंटे से ज़्यादा देरी से शुरू हुआ। असहज सवाल ज़रूर उठेंगे, क्योंकि अमेरिका, कनाडा और मैक्सिको के साथ मिलकर 2026 में 48 टीमों के विश्व कप की मेज़बानी करता है।

केंद्रीकृत परीक्षाओं से परीक्षा में सफलता नहीं मिली है

2017 में भारत सरकार ने स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के लिए प्रवेश परीक्षा आयोजित करने के लिए राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (NTA) की स्थापना की। इलेक्ट्रॉनिक मोड में बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ)-प्रकार की परीक्षाएँ आयोजित करने की परिकल्पना की गई थी, NTA को उचित प्रश्न बैंक और मूल्यांकन ढाँचे और संगठनात्मक विशेषज्ञता स्थापित करने के लिए परीक्षण के विज्ञान में विशेषज्ञ रखने थे। NTA, जो केंद्रीय विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए कॉमन यूनिवर्सिटी एंट्रेंस टेस्ट (CUET) और मेडिकल और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) पाठ्यक्रमों में स्नातकोत्तर प्रवेश सहित विभिन्न उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए 15 से अधिक प्रवेश परीक्षाएँ आयोजित करता है, एक दुबला-पतला संगठन है, जिसका अधिकांश काम आउटसोर्स किया जाता है। इसका नेतृत्व एक अध्यक्ष और एक भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी करते हैं जो मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में काम करते हैं, जिनमें से किसी के पास भी एक संस्था बनाने के लिए आवश्यक योग्यता नहीं है।

प्रासंगिक प्रश्न: अपने व्यापक दृष्टिकोण के विपरीत, NTA पेन से पेपर मोड में परीक्षा आयोजित करता है, जिससे कदाचार की बहुत अधिक गुंजाइश होती है - पेपर की सेटिंग से लेकर, इसकी छपाई, वितरण और बड़ी संख्या में परीक्षा केंद्रों पर अंतिम डिलीवरी तक - स्नातक चिकित्सा पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा (स्नातक), या NEET-UG के लिए 4,750 परीक्षा केंद्र। इस वर्ष NEET-UG के संचालन में हुई गड़बड़ी ने निराशा पैदा की है और NTA की निष्पक्ष परीक्षा आयोजित करने की क्षमता या इच्छा पर भरोसा पूरी तरह खत्म हो गया है। सवाल यह है कि क्या इसे टाला जा सकता था? और भारत में परीक्षा प्रणाली की अखंडता सुनिश्चित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए?

एनटीए द्वारा आयोजित एनईईटी की परिकल्पना सबसे अच्छे इरादों के साथ की गई थी, लेकिन दोषपूर्ण और अक्षम कार्यान्वयन के कारण यह पूरी तरह से गलत साबित हुई है। विचार डॉक्टर बनने के इच्छुक छात्रों की गुणवत्ता को मानकीकृत करना था, जो कि भारत भर में स्कूल बोर्डों के अलग-अलग मानकों को देखते हुए एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है।

कार्यान्वयन में लापरवाही, प्रश्न-पत्रों का बड़े पैमाने पर लीक होना, अनुग्रह अंक देने का मनमाना तरीका, मुट्ठी भर छात्रों के लिए पुनः परीक्षा आयोजित करना और अब रैंकिंग के साथ छेड़छाड़, इन सबने पूरी प्रक्रिया को संदिग्ध बना दिया है।

एक महीने से ज़्यादा समय बीत चुका है। दोबारा जांच का आदेश देने के बजाय - जो इस मुद्दे को संभालने का सबसे सीधा और निष्पक्ष तरीका होता - नतीजों के साथ इस तरह की छेड़छाड़ ने अविश्वास को और गहरा कर दिया है और मुश्किल सवाल खड़े कर दिए हैं। सरकार को कैसे यकीन है कि

वृंदा सरूप

पूर्व सचिव,
शिक्षा,
भारत सरकार

के. सुजाता राव

पूर्व सचिव,
स्वास्थ्य, भारत सरकार

हालांकि उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए केंद्रीकृत परीक्षण तंत्र की समीक्षा आवश्यक है, लेकिन जो बात छूट गई है वह है स्कूल प्रणाली को होने वाला नुकसान

लीक केवल पटना और गोधरा तक ही सीमित है, जबकि चार से पांच राज्यों से गलत काम करने वालों की गिरफ़्तारी की खबरें आ रही हैं? या, क्या सरकार एनटीए की एनईईटी की फिर से परीक्षा आयोजित करने की क्षमता के बारे में अनिश्चित है, जिससे और भी गंभीर चिंता पैदा हो रही है?

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप किया है और याचिकाओं पर सुनवाई कर रहा है। सरकार ने कहा है कि वह जुलाई के तीसरे सप्ताह से काउंसलिंग प्रक्रिया (प्रवेश के लिए अंतिम चरण) शुरू करने का इरादा रखती है। यह एक ऐसी परीक्षा है जिसमें रैंक महत्वपूर्ण है। उच्च रैंक वाले लोग सरकारी संस्थानों में प्रवेश लेते हैं, जहाँ उन्हें रियायती दरों पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलती है। तथ्य यह है कि पिछले वर्षों में कट-ओ प्रतिशत 19% से 22% के बीच था, यह दर्शाता है कि कैसे अच्छी रैंक वाले कई छात्र उच्च कैपिटेशन फीस के कारण प्रवेश पाने में असमर्थ थे, जिससे कट-ओ प्रतिशत को कम करने के लिए मजबूर होना पड़ा। यह शर्मनाक है और इस पर विचार करने की आवश्यकता है।

अन्य राष्ट्रीय परीक्षाओं की सत्यनिष्ठा से समझौता होने की व्यापक आशंकाओं और एनटीए की निम्नस्तरीय कार्यप्रणाली के मद्देनजर, सरकार ने अब भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के पूर्व अध्यक्ष के. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की सात सदस्यीय उच्चस्तरीय समिति गठित की है।

इसके संदर्भ की शर्तें हैं: किसी भी संभावित उल्लंघन को रोकने के लिए परीक्षा प्रक्रिया के तंत्र में सुधार करना, और मानक संचालन प्रक्रियाओं की समीक्षा के आधार पर निगरानी तंत्र का सुझाव देना; परीक्षा की मजबूती बढ़ाने के लिए डेटा सुरक्षा प्रोटोकॉल में सुधार करना; एनटीए की संरचना और कामकाज पर सिफारिशें करना; सभी स्तरों पर पदाधिकारियों की भूमिका और जिम्मेदारियों को परिभाषित करना, और एक उत्तरदायी शिकायत निवारण तंत्र स्थापित करना। ये बुनियादी मुद्दे हैं जिनकी जांच और समाधान एनटीए के गठन के समय किया जाना चाहिए था।

स्पष्टतः, शासन तंत्र कहीं न कहीं ध्वस्त हो गया है।

विकेंद्रीकरण एक व्यावहारिक विकल्प है राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित परीक्षाओं में बड़े पैमाने पर धोखाधड़ी और लीकेज की रिपोर्ट हमें उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए केंद्रीकृत परीक्षण तंत्र पर पुनर्विचार करने और समीक्षा करने के लिए मजबूर करती है। इसके कई विकल्प हैं। केंद्र सरकार प्रवेश के लिए परीक्षण को अपने संस्थानों तक सीमित क्यों नहीं रख सकती और विकेंद्रीकृत क्यों नहीं कर सकती, जहां राज्य प्रवेश परीक्षाओं के आधार पर अपनी सीटें भरते हैं? यह एक मानक टेम्पलेट पर आधारित हो सकता है जिसे केंद्र सरकार द्वारा तैयार किया जा सकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि परीक्षण और मूल्यांकनकर्ता ढांचे के लिए अपेक्षित मानकों को बनाए रखा जाए।

परीक्षण निकायों का पुनर्गठन किया जा सकता है, जिसमें डोमेन विशेषज्ञों, परीक्षण विशेषज्ञों और न केवल परीक्षण उपकरणों के आईटी उपायों को शामिल किया जा सकता है, बल्कि साइबर सुरक्षा और कई प्रकार के सुरक्षा उपायों को भी शामिल किया जा सकता है, जो निष्पक्ष तरीके से बड़े पैमाने पर परीक्षा आयोजित करने के लिए आवश्यक हैं, जहां प्रत्येक दशमलव अंक एक छात्र के लिए मायने रखता है।

सूचीबद्ध सभी विकल्पों में से, विकेंद्रीकरण का मामला हमारी वर्तमान परिस्थितियों के लिए मजबूत और उचित प्रतीत होता है। 24 लाख छात्र एक लाख सीटों के लिए जिन परीक्षाओं में बैठते हैं, वे उच्च जोखिम वाली परीक्षाएं हैं, जिनमें कड़ी प्रतिस्पर्धा होती है और जोखिम भरा होता है।

प्रबल निहित स्वार्थ एवं आपराधिक तत्व पेशेवर शिक्षा या प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में योग्यता-आधारित प्रवेश की सुव्यवस्थित प्रणाली को कमजोर करने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहेंगे। इसमें वित्तीय लाभ के लिए परीक्षा के पेपर बेचना भी शामिल है।

परीक्षा प्रक्रियाओं को राज्यों और विभिन्न शासकीय संस्थाओं तक विकेंद्रीकृत करने से जोखिम का तत्व कम हो सकता है। केंद्र सरकार की भूमिका उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए अपनाए जाने वाले मानक को अनिवार्य बनाने की हो सकती है।

स्कूली शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार करें जबकि राष्ट्रीय या राज्य स्तरीय परीक्षा की सत्यनिष्ठा चर्चा का विषय है, लेकिन सार्वजनिक चर्चा में जो बात निश्चित रूप से छूट गई है, वह है स्कूली प्रणाली का क्रमिक विनाश, जो भविष्य के नागरिकों के निर्माण के लिए जिम्मेदार है।

हर व्यावसायिक पाठ्यक्रम या विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम के लिए राष्ट्रीय स्तर की आम प्रवेश परीक्षाओं के उद्भव के साथ, स्कूल छोड़ने की परीक्षाएं निरर्थक हो गई हैं और अब 'डमी' स्कूल हैं। इसके बजाय, कोचिंग सेंटरों की भरमार हो गई है, जिनका एकमात्र उद्देश्य छात्रों को इन राष्ट्रीय परीक्षाओं के लिए तैयार करना है।

कोचिंग उद्योग के विकास ने स्कूली शिक्षा प्रणाली को कपटपूर्ण और निरंतर नुकसान पहुंचाया है। इस प्रवृत्ति को रोकना होगा और उम्मीदवारों की प्रवेश परीक्षा के अंतिम स्कोर में स्कूल छोड़ने के अंकों का प्रतिशत जोड़कर स्कूलों के मूल्य को बहाल करना होगा।

कुछ साल पहले भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों की प्रवेश परीक्षा में इसे शामिल किया गया था, लेकिन बिना किसी बहस के इसे छोड़ दिया गया। अगर हम अच्छी स्कूली शिक्षा के आधार पर योग्यता की रक्षा नहीं कर सकते, तो हमारी स्कूली शिक्षा प्रणाली और भी अधिक खराब हो जाएगी। स्कूल स्तर पर बनाए गए शैक्षणिक योग्यता, कड़ी मेहनत और अच्छे मूल्यों के मानक कभी भी उच्च शिक्षा के समय हासिल नहीं किए जा सकते, जब छात्र बहुत बड़ा हो जाता है और काम की दुनिया के लिए तैयार होता है। यह एक ऐसा मुद्दा है जिस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है।

गर्म लहरें खेलने के अधिकार को खत्म कर रही हैं

पी लेय सार्वभौमिक है, राष्ट्रीयता से परे है, सांस्कृतिक और सामाजिक-आर्थिक सीमाएँ। यूनिसेफ के अनुसार, बच्चों के लिए सामाजिक संबंध बनाने, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य विकसित करने और रचनात्मकता को बढ़ाने के लिए खेल बहुत ज़रूरी है। संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन के अनुच्छेद 31 में निहित, खेलने का अधिकार बच्चे की भलाई और विकास के लिए इसके महत्व को रेखांकित करता है। चंचल बातचीत माता-पिता, देखभाल करने वालों और बच्चों के सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य में योगदान देती है, जिससे प्रतिकूल अनुभवों से राहत मिलती है। वे दुनिया को समझने और तलाशने का एक साधन हैं।

इसके महत्व को स्वीकार करते हुए, संयुक्त राष्ट्र ने 11 जून, 2024 को अंतर्राष्ट्रीय खेल दिवस घोषित किया है।

हालाँकि, बच्चों को अक्सर इस अधिकार से वंचित रखा जाता है। द रियल प्ले कोएलिशन (आईकेईए, लेगो फाउंडेशन, नेशनल जियोग्राफिक और यूनिलीवर) की 'वैल्यू ऑफ प्ले' रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक स्तर पर, पाँच में से एक बच्चे के पास खेलने का समय नहीं है, और 10 में से एक बच्चे को बाहर खेलने का मौका नहीं मिलता। भारत में, खेलने के लिए सार्वजनिक स्थानों तक पहुँच और अवकाश सामाजिक-आर्थिक असमानताओं और जाति, वर्ग, विकलांगता और लिंग सहित सामाजिक पहचान से जुड़े हैं।

दुर्भाग्य से, जलवायु परिवर्तन इन बाधाओं के लिए एक मजबूत प्रतियोगी के रूप में उभर रहा है। चरम मौसम की घटनाओं और बढ़ते तापमान के साथ, जलवायु परिवर्तन बच्चों को खेल के माध्यम से अपने साथियों और उनके आसपास की दुनिया से जुड़ने के लिए मिलने वाले समय को सीमित कर रहा है।

भारत की रैंकिंग, दक्षिण एशिया की समस्या यूनिसेफ की बाल जलवायु जोखिम सूचकांक (सीसीआरआई) रिपोर्ट 2021 बताती है कि 163 देशों में से 26वें स्थान पर आने के साथ, भारत उन देशों में से है जहाँ बच्चे सबसे ज़्यादा जलवायु जोखिम में हैं। बाढ़, लू और सूखे के कारण परिवारों और बच्चों पर पहले से कहीं ज़्यादा असर पड़ रहा है, खास तौर पर लू की वजह से बाहर खेलना असुरक्षित होता जा रहा है। भारत में लगातार और भयंकर लू चल रही है, तापमान रिकॉर्ड स्तर पर पहुँच गया है। ये चरम स्थितियाँ न केवल बच्चों की क्षमता को सीमित करती हैं

सुरभि मल्होत्रा

प्रबंधक, नागरिक युवा पीढ़ी में जुड़ाव सक्रिय नेताओं के लिए नागरिकता (YLAC)

शुभ्रा झा

वरिष्ठ अधिकारी, यंग में कार्यक्रम सक्रिय नेताओं के लिए नागरिकता (YLAC)

जलवायु परिवर्तन के कारण बच्चों को खेल के माध्यम से अपने साथियों और अपने आस-पास की दुनिया से जुड़ने का समय सीमित हो रहा है

बाहर खेलने के लिए न केवल गर्मी की लहरों का सामना करना पड़ता है, बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी गंभीर खतरा पैदा होता है। यूनिसेफ द्वारा किए गए एक हालिया विश्लेषण से पता चला है कि दक्षिण एशिया में अन्य क्षेत्रों की तुलना में अत्यधिक उच्च तापमान के संपर्क में आने वाले बच्चों का प्रतिशत सबसे अधिक है। भारत में, हीटवेव के कारण बच्चों की सुरक्षा के लिए स्कूल बंद कर दिए गए हैं और बाहरी गतिविधियों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। इसका उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ सकता है।

खेल के अवसरों की कमी वंचित पृष्ठभूमि के बच्चों को भी असमान रूप से प्रभावित करती है, जो मौजूदा असमानताओं को बढ़ाती है और गरीबी के चक्र को जारी रखती है। शहरीकरण और पर्यावरण क्षरण सुरक्षित खेल के स्थानों की उपलब्धता को कम कर रहे हैं, खासकर कम आय वाले समुदायों में जहां खेल के मैदान अक्सर मौजूद नहीं होते हैं या उनका रखरखाव ठीक से नहीं किया जाता है। घर अक्सर भीड़भाड़ वाले और छोटे होते हैं, जिससे इनडोर खेलने के अवसर सीमित हो जाते हैं। शोध से पता चलता है कि सुरक्षित खेल के स्थानों तक सीमित पहुंच बच्चे के शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास में बाधा डालती है, जिससे कम कुशल कार्यबल और उच्च सामाजिक कल्याण लागत जैसे दीर्घकालिक आर्थिक प्रभाव होते हैं। बच्चों और युवाओं के बीच जलवायु चिंता पर एक वैश्विक सर्वेक्षण ने भी जलवायु-चिंता और उन्हें समर्थन देने में सरकारों की भूमिका से मोहभंग का खुलासा किया है, ये भावनाएं उनके दैनिक जीवन को भी प्रभावित कर रही हैं।

अनुकूली उपाय इस दीर्घकालिक प्रभाव से बचने के लिए, हमें खेल के मैदान के बुनियादी ढांचे में जैव-जलवायु डिजाइन सिद्धांतों को लागू करने और शहरी नियोजन रणनीतियों को एकीकृत करने पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इसमें शहरों के भीतर हरित स्थान और शीतलन गलियारे शुरू करना शामिल है, जो शहरी गर्मी द्वीप प्रभाव (कंक्रीट-आधारित निर्माण की बहुतायत से तीव्र) को कम करने और बच्चों के लिए सुरक्षित-खेल वातावरण प्रदान करने में मदद करेगा।

इसके अलावा, मौजूदा बुनियादी ढांचे और पार्कों जैसे हरित स्थानों तक पहुंचने का समय और पहुंच का विस्तार किया जाना चाहिए। भारत भर के कई शहरों में, स्थानीय समुदाय और कभी-कभी नगर निगम सरकारें खुद दिन के कुछ खास समय में पार्क बंद करने का आदेश देती हैं, जिससे बच्चों के खेलने के अवसर और भी सीमित हो जाते हैं। सार्वजनिक पार्कों में अक्सर उम्र के आधार पर उपयोगकर्ता संघर्ष होता है - वृद्ध नागरिक बनाम बच्चे और सामाजिक-आर्थिक वर्ग के आधार पर।

इन मुद्दों को स्थानीय स्तर पर और बिना किसी भेदभाव के हल करने के लिए एक ठोस प्रयास की आवश्यकता है। स्थानीय समुदाय पार्कों में छायादार क्षेत्र बनाने के लिए भी एक साथ आ सकते हैं जहाँ बच्चे गर्म दिनों में मिल सकते हैं और खेल सकते हैं। इसके अलावा, दीर्घकालिक समाधानों में निष्क्रिय हीटिंग और कूलिंग विधियों को लागू करने के लिए स्थानीय वास्तुकला तकनीकों को संरक्षित और अनुकूलित करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

नियोजन के इस आयाम को जलवायु परिवर्तन पर राज्य कार्य योजनाओं और शहर के मास्टर प्लान में भी शामिल किया जाना चाहिए। कम आय वाले समुदायों की ज़रूरतों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, बाहरी दिल्ली में झुग्गी पुनर्वास कॉलोनियों में हरियाली बहुत कम है। खेल के मैदानों के लिए निर्धारित स्थान अक्सर ठोस कचरे के डंपिंग ग्राउंड बन जाते हैं। इससे बच्चे ज़्यादा समय अपने घरों के अंदर बिताते हैं और सामाजिक मेलजोल और मनोरंजन के सीमित अवसर मिलते हैं।

बच्चों को सशक्त बनाना बच्चे भी बदलाव के शक्तिशाली चैंपियन हो सकते हैं। छात्रों को ठोस कार्रवाई करने और जैव विविधता मानचित्रण, वायु प्रदूषण और जल गुणवत्ता आकलन में भाग लेने जैसी वकालत की भूमिका निभाने के लिए व्यावहारिक अवसर और मंच प्रदान करना, उन्हें पर्यावरणीय मुद्दों को समझने और उनका समाधान करने के लिए सशक्त बना सकता है। केरल में कार्बन न्यूट्रल पंचायतों जैसे जलवायु से जुड़ी स्थानीय पहलों में छात्रों को शामिल करना एक आशाजनक शुरुआत हो सकती है।

पहला अंतर्राष्ट्रीय खेल दिवस भले ही बीत चुका हो, लेकिन बच्चों के खेलने के अधिकार पर जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को पहचानना और कार्रवाई करना महत्वपूर्ण है। इस पर ध्यान देकर, हम न केवल बच्चों के विकास और कल्याण का समर्थन करते हैं, बल्कि एक ऐसी पीढ़ी को भी बढ़ावा देते हैं जो भविष्य की चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार है।

संपादक के नाम चिठी

न्यायालय और धन विधेयक का रास्ता भारतीय जनता पार्टी के सामने अब मजबूत विपक्ष और संसद में विवादास्पद विधेयकों को पारित करने के मामले में बहस और चर्चा की आवश्यकता के रूप में चुनौतियां हैं। इसलिए, यह बहुत संभव है कि संसद के दोनों सदनों में विधेयकों को पारित करने में आम सहमति के मामले में बाधाएं आएंगी। सुप्रीम कोर्ट में इस विधेयक के खिलाफ याचिकाओं पर सुनवाई होनी है।

धन विधेयक के रूप में कानूनों को पारित करने की प्रक्रिया के मद्देनजर, आने वाले दिन दिलचस्प होंगे (पृष्ठ 1, जुलाई 16)।
एन. विश्वेश्वरन, चेन्नई

वर्ष 2014 से अब तक कई विधेयकों को धन विधेयक की आड़ में, लोकसभा में बिना किसी चर्चा या बहस के पारित कर दिया गया है।

उस समय कमजोर विपक्ष के विरोध के बावजूद सरकार ने अपने प्रचंड बहुमत का फायदा उठाया।

इसमें किए गए संशोधन

धन शोधन निवारण अधिनियम (पीएमएलए) इसका एक उदाहरण है, जिसने प्रवर्तन निदेशालय को गिरफ्तारी और छापेमारी करने के व्यापक अधिकार दे दिए हैं।

एक व्यक्ति सुनवाई का इंतजार कर रहा है।
डी. सेथुरमन, चेन्नई

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से देश की विधायिका और न्यायपालिका के बीच अप्रिय टकराव पैदा हो सकता है।

यह विशुद्ध रूप से एक मामला है

विधायी प्रकृति.
संसद और केवल संसद ही इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर विचार-विमर्श, चर्चा और बहस करने के लिए सक्षम मंच है।

रवि माथुर,
नोएडा, उत्तर प्रदेश

हाल के वर्षों में विभिन्न उद्योगों में मानव श्रम की जगह रोबोट के उपयोग पर चर्चा ने काफी जोर पकड़ा है। एक ऐसा क्षेत्र जहां यह

सफाई के काम में बहस प्रासंगिक है। सफाई कर्मचारियों द्वारा सामना की जाने वाली खतरनाक स्थितियों और स्वास्थ्य जोखिमों को देखते हुए, यह पता लगाना उचित है कि क्या रोबोट एक सुरक्षित और अधिक कुशल विकल्प प्रदान कर सकते हैं। सफाई कर्मचारी एक आवश्यक लेकिन अक्सर कम मूल्यवान सेवा प्रदान करते हैं।

हालाँकि, यह काम उन्हें खतरनाक वातावरण, हानिकारक पदार्थों और उच्च जोखिम के संपर्क में लाता है

चोट या बीमारी के कारण (अंदर के पन्नों पर, "केरल के सफाई कर्मचारी का शव 46 घंटे बाद बरामद", 16 जुलाई)। इन चुनौतियों के मद्देनजर, रोबोट की शुरूआत एक आशाजनक समाधान हो सकता है।

हालाँकि, रोबोटिक श्रमिकों की ओर बदलाव को सावधानी से अपनाया जाना चाहिए।

मानव श्रमिकों का संभावित विस्थापन भी एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है।

एमएल निर्मल,
बेंगलुरु